GIPE-41-02

गोखले स्मृति ग्रंथ

SOUVENIR

1905

2005

शताब्दी विशेषांक

अध्यक्ष-मण्डल 1905-2005

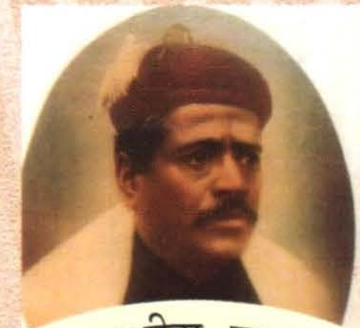

श्री जी0के0 देवधर
1928 - 1936

श्री निवास शास्त्री
1916 - 1927

श्री एच0एन0 कुजरू
1937 - 1978

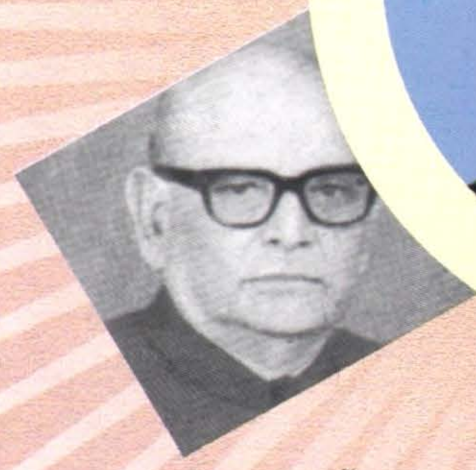

श्री एस0 आर0 वेंकटरमण
1977 - 1986

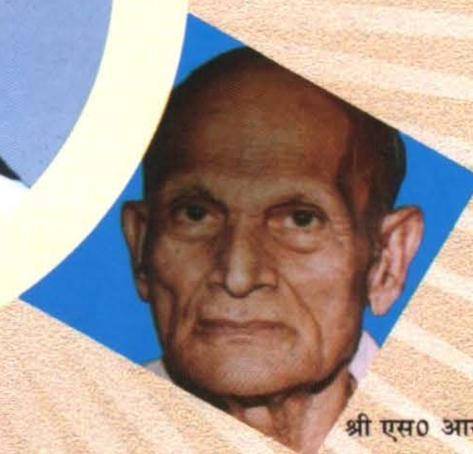

श्री एस0 आर मिश्र
1986 - 1994

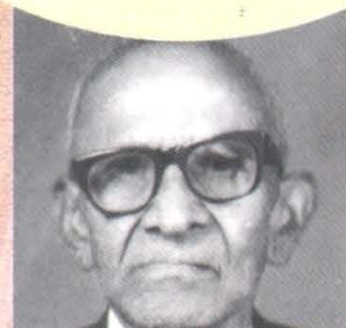

श्री आर0जी0 काकड़े
1995 - अब तक

उपाध्यक्ष -मण्डल 1905-2005

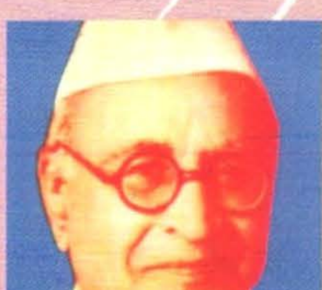

श्री आर0 बी0 ठक्करबापा
1937 - 1950

श्री जी0एस0 वजे
1951 - 1962

श्री ए0डी0 मनी
1963 - 1977

श्री आर0एस0 मिश्र
1978 -1985

श्री पी0के0 द्विवेदी
1995 - अब तक

सर्वेन्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी के 'गौरव'

सर्वेन्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी

गोखले स्मृति ग्रंथ

" शतकीय विशेषांक"
वर्ष 2005

संरक्षक
श्री प्रेम कृष्ण द्विवेदी

उपाध्यक्ष
सर्वेन्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी

संयोजक
श्री श्याम मनोहर
मंत्री
भारतीय आदिम जाति सेवक संघ

सम्पादक
श्री ब्रज बिहारी मिश्र 'बिराज'

सह-सम्पादक
डा० राम जीत शुक्ल
डा० सुरेश चन्द्र द्विवेदी
प्रयाग विश्वविद्यालय
श्री अमरेश चन्द त्रिपाठी

प्रकाशकः
सर्वेन्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी
१, पी०डी टण्डन रोड, इलाहाबाद (उ०प्र०)

With Best Compliments From :

TATA

H. N. Tarafdar

TATA COFFEE LIMITED
(INSTANT COFFEE DIVISION)
OPP: SANATHNAGAR RAILWAY STATION
SANATHNAGAR,
HYDERABAD-500 018.
PH. NO. 040-23776205/55179780

सही समय पर
सही छपाई
सही दाम में

मल्टी कलर छपाई
के विशेषज्ञ
एक ही छत के नीचे
पूरा काम

पुष्पी ऑफसेट
257, बाई का बाग, इलाहाबाद
फोन : 2417897 मो. 9415238953

सत्यमेव जयते

शिवराज पाटील

SHIVRAJ V. PATIL

गृह मंत्री, भारत

HOME MINISTER, INDIA

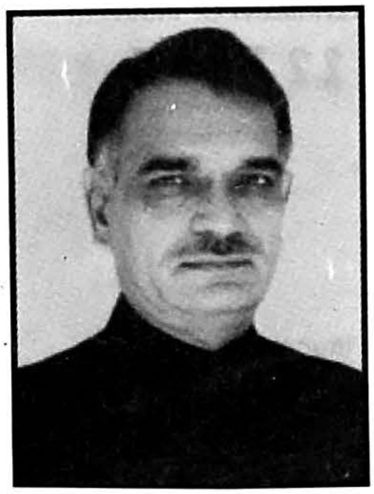

96 3104 5/2/05

3 Feb 2005

MESSAGE

I am happy to learn that the Servants of India Society, started by Shri Gopala Krishna Gokhale in 1905 at Pune, will be launching its Centenary Celebration Year on 23rd February 2005 and a Centenary Souvenir will be brought out to mark this important event.

The primary object of the Servants of India Society to train national missionaries in the service of the country and to promote by all constitutional means the interest of the people is indeed laudable.

On this happy occasion, I send my best wishes for the success of the Centenary Celebrations of the Servants of India Society.

(Shivraj V. Patil)

D. O. No. 490 /AM/2005

शरद पवार

SHARAD PAWAR

कृषि, उपभोक्ता मामले, खाद्य और सार्वजनिक वितरण मंत्री
भारत सरकार

MINISTER OF AGRICULTURE
AND CONSUMER AFFAIRS,
FOOD AND PUBLIC DISTRIBUTION
GOVERNMENT OF INDIA

22 FEB 2005

MESSAGE

I am happy to know that Servants of India Society, Pune, is launching its Centenary Celebration Year on 23rd February 2005 at Allahabad.

The pledge of Shri Gopal Krishna Gokhale to dedicate his life to save the Nation and promote by constitutional means, the national interest of the countrymen, is still very much valid today.

I am sure the dedicated work and patriotism shown by the Members of Servants of India Society since its inception, should serve as a source of inspiration to our youth and generations to come to rededicate themselves towards nation building activities such as education, social welfare and upliftment of the downtrodden. It is heartening to know that the tradition and legacy of the Society have been carried forward to this day and its activities are spread all over the country. Through its various activities, the society has remained true to its *raison d'etre*.

I congratulate the Servants of India Society for its service and send my best wishes for the success of the function.

(SHARAD PAWAR)

Shri Shyam Manohar,
Coordinator,
Servants of India Society,
Thakkar Bapa Smarak Sadan,
Dr. Ambedkar Marg,
(Link Road),
NEW DELHI 110 055

ALL INDIA MAHILA CONGRESS (I)

24, Akabar Road, New Delhi - 110 011

Phone : Off. : 23014659
Res. : 26923380
26923379
Mobile : 941525283

RITA BAHUGUNA JOSHI
Prsident

मंगल - कामना

श्री द्विवेदी जी,
उपाध्यक्ष,
सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी.

पावन माघ-मास में 'तीर्थराज प्रयाग' की तपोमयी भूमि पर स्थित, शाखा कार्यालय परिसर में, राष्ट्र पिता के राजनैतिक गुरु, पं. गोपाल कृष्ण गोखले की अमर संरचना **'सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी'** के **'शताब्दी वर्ष समारोह'** के मुख्य आयोजन एवं तत्सम्बधी **'गोखलेस्मृति ग्रन्थ'** के प्रकाशन का समाचार ज्ञात कर हार्दिक प्रसन्नता की अनुभूति हुई।

परतंत्रता निवारण एवं **'स्वतंत्रत-भारत'** निर्माण हेतु **'सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी'** के कृतित्व को भुलाया नही जा सकता। **'अभिनव-भारत'** में भी यह कीर्तिमयी सोसाइटी सतत् अपना योगदान राष्ट्र-सेवा में अर्पित करती रहे, यह मेरी ईश्वर से 'मंगल-कामना' है।

'गोखले स्मृति-ग्रन्थ' के सफल प्रकाशन एवं **'शताब्दी समारोह'** के भव्य आयोजन हेतु मेरी शुभकामनायें समर्पित हैं।

रीता बहुगुणा जोशी

Justice A. P. Misra
Former Judge
Supreme Court of India
Chairman
State Human Rights Commission
Chairman
Legal Education Committee of India

27, Park Road,
Allahabad -2, U.P.
Tel. : 0532 - 2461244

यह बड़े हर्ष की बात है कि 'सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी (हिन्द सेवक संघ)' शतवर्ष की यात्रा पूर्ण कर, शताब्दी समारोह पर, एक स्मारिका प्रकाशित कर रही है। इस संस्था का बीजारोपण भारत के रत्न पंडित गोपाल कृष्ण गोखले ने किया, जिन्होनें अपने त्याग एवं आदर्श जीवन से राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी जैसे को भी इस राष्ट्र की स्वतंत्रता का मार्ग दर्शन किया। किसी व्यक्ति या संस्था का दीर्घकाल तक स्वस्थ व सेवा करने की क्षमता तभी रहती है जब उसमें चरित्र, सदभावना दीनदुखियो के उत्थान की तत्परता रहती है। इस संस्था की शताब्दी ही उसके इन सभी गुणतत्वों का चित्रण करती है।

आज के दूषित वातावरण में, जहाँ नैतिकता व मानवीय मूल्यों की गिरावट स्वार्थ परायणता के कारण होती जा रही है वहाँ ऐसी संस्था को सक्षम बनाकर मार्गदर्शन का प्रतीक बनना चाहिए। इसकी शताब्दी सिर्फ समारोहों से समाप्त नहीं करनी चाहिए। इसके शत वर्षो से निष्काम समाज कल्याणों से फलित बीजों को दूर दूर तक फैलाकर, अंकुरित कर आज के दूषित कोहरे को समाप्त करना चाहिए। जिस दृढ़ संकल्प से इस संस्था की स्थापना की गई है उसी संकल्प से इसे प्रतिभाशाली कार्यकुशल बनाने की प्रतिज्ञा करनी होगी।

हमारी शुभकामनाएँ शताब्दी समारोह के सफलता की एवं स्मारिका प्रकाशन की स्वीकार करें।

(अजय प्रकाश मिश्र)

डा. धनेश्वरी घिल्डियाल
अध्यक्ष / राज्यमंत्री
राज्य समाज कल्याण बोर्ड,
उत्तरांचल

उत्तरांचल सरकार

कार्यालय : 32-बी लेन नं. 4, ओम विहार
(नजदीक धर्मपुर चौक) देहरादून
निवास : 123-बी / वी राजेश्वर नगर,
फेस-1, ग्राम : धौरण खास,
सहस्त्रधारा रोड, देहरादून
दूरभाष : 2671156 (का.), 2608044 (नि.)

मंगल कामना

गुलामी की पीड़ा से 'बिलबिलाती, बिलखती' भारत माँ की आजादी से लेकर, गिरि-बन, गाँव-कन्दरा, दबे-कुचले, अगड़े-पिछड़े, सर्वत्र, जन-जन में, देशभक्ति, सौहार्द्र, एवं विकास की 'पावन-गंगा' बहाने वाली 'सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी' ने दो हजार पाँच में अपने सौ साल पूरे कर लिये। स्वतन्त्रता के संघर्ष में सूत्रधार की भूमिका, स्वातंत्र्योत्तर भारत में समाज-शिल्पी की भूमिका एवम् वर्तमान परिस्थितियों में अभिनव समाज-निर्माणकर्त्ता की भूमिका का निर्वहन-भार 'सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी' को अपने मजबूत कन्धों पर लेना ही होगा।

हम सोसाइटी की गौरवपूर्ण शतवर्षीय यात्रा समाप्ति पर इसका अभिनन्दन करते हैं, एवम् यह यात्रा निरन्तर चलती रहे इसकी मंगल कामना करते हैं।

डा० धनेश्वरी घिल्डियाल
अध्यक्ष/राज्यमंत्री
राज्य समाज कल्याण बोर्ड, उत्तरांचल

तार : 'सेवा समिति' टेलीफोन : 606850

(महामना पं० मदन मोहन मालवीय द्वारा १६१४ में संस्थापित)

अखिल भारतीय सेवा समिति

(सोसाइटीज ऐक्ट की धारा 21 सन् 1960 के अन्तर्गत पंजीकृत)

केन्द्रीय प्रधान कार्यालय :

सेवा समिति भवन, सेवा समिति रोड, रामबाग, इलाहाबाद-२११००३

पत्रांक ———— दिनांक ————

९ फरवरी २००५

संदेश

प्रिय श्री द्विवेदी जी,

यह जानकर अत्यधिक संतोष एवं हर्ष होता है कि भारत के महान मनीषी देशरत्न माननीय पंडित गोपाल कृष्ण गोखले जी द्वारा स्थापित उनके आदर्शों को मूर्त रूप देती तथा देश के अनेक महान विभूतियों द्वारा पोषित संस्था "सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी" १२ जून २००५ को अपने १०० वर्ष पूरे कर रही है। अपने उद्देश्यों में सतत् संलग्न इस संस्था ने समाज सेवा जैसे अनुपम कार्य का बीड़ा उठाया हुआ है जिसके लिए यह संस्था पूर्णरूपेण प्रतिबद्ध रही है, यह भी प्रसन्नता का विषय है कि इसके शताब्दी समारोह के आयोजन के समय संस्था अपनी स्मारिका का भी प्रकाशन करने जा रही है जिसके माध्यम से जन मानस में इसके कार्य-कलापों की जानकारी के अतिरिक्त इसकी उपादेयता का भी परिचय प्राप्त होता जाएगा।

मैं संस्था के शत वर्ष पूर्ण करने पर उसके सतत् उत्कर्ष तथा स्मारिका के सफल प्रकाशन के लिये अपनी हार्दिक शुभ कामनाएँ प्रेषित करता हूँ।

गि० मालवीय

(गिरिधर मालवीय)

अध्यक्ष, अखिल भारतीय सेवा समिति.

श्री प्रेम कृष्ण द्विवेदी,

उपाध्यक्ष, सर्वेण्ट्स ऑफ सोसाइटी,

उत्तर प्रदेश शाखा,

१, पुरुषोत्तम दास टंडन मार्ग, इलाहाबाद

A. K. TRIPATHI
PS to CM

सत्यमेव जयते

CHIEF MINISTER OFFICE

TEL. NO.: 23392020
23392030
FAX NO.: 23392111

CM|PST|OC|16
8|2|05

GOVT. OF NATIONAL CAPITAL
TERRITORY OF DELHI
DELHI SECRETARIAT, I.P. ESTATE
NEW DELHI-110002

Dear Sir,

Please refer to your letter requesting the Hon'ble Chief Minister, Delhi to be the Guest of honour at the Centenary Year Programme of Hon'ble Shri Gopal Krishana Gokhale being organized by you on 23rd February 2005.

In this regard, it is stated that due to pre-scheduled engagements, the Hon'ble Chief Minister will not be able to attend the function. However, she conveys her best wishes for the success of the programme.

With kind regards,

Yours sincerely,

(A.K. TRIPATHI)

Sh. Shyam Manohar,
Coordinator,
Servants of India Society,
Thakkar Bapa Smarak Sadan,
Dr. Ambedkar Marg, (Link Road),
New Delhi-55.

SAVE IT WHILE YOU STILL CAN.
Water

SERVANTS OF THE PEOPLE SOCIETY (लोक सेवक मण्डल)

(FOUNDED BY LALA LAJPAT RAI IN 1921)

President :	*Vice President :*	*Secretary :*	*Treasurer :*
MANUBHAI PATEL	**ONKAR CHAND**	**SATYA PAUL**	**PRASANNVADAN MEHTA**

Ref. No. SPS/ *Date.*07/02/2005

MESSAGE

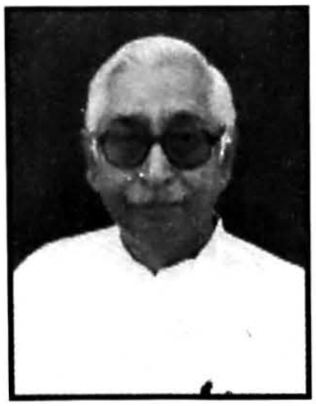

Shri Gopal Krishan Gokhale started First Social Life Order in India in 1905. It was well thought of plan to rebuild India for fredom movement and after getting independence. He highlighted the greatest need of India the whole time dedicated social workers.

Lala Lajpat Rai was impressed with the idea and went to Pune to meet Shri Gokhaleji and discussed with him for few days. He decided to start another Life Order in North India with broader base. He could translate his dream after his return from 6 years self-exile in America in 1920.

Servants of India Society has played a great national role during freedom movement and after freedom, in education and tribal welfare.

Gokhaleji never considered Servants of the People Society as a rival Society, but always considered it a sister institution. Shri Gokhale encouraged Servants of the People Society to start rural development centre at Village : Dhayaari, Distt. Pune. He presided over the inauguration function. He also attended few functions of our Society at New Delhi. This relationship continued even after his death. Whenever the office bearers of our Society went to Pune, the guest house and other facilities at their Head-Office were made available to us. I always went to pay my regards to Shri Kakde and exchanged views on national issues, whenever I visited Pune. We also accommodate their Life Members in Lajpat Bhawan, New Delhi during their visit to New Delhi.

We are equally proud of the achievements of servants of India Society during its 100 years.

We pray and hope that under the leadership of Shri R. G. Kakde, Servants of India Society will march with added reputation.

Satyapaul

(SATYA PAUL)
Secretary

Lajpat Bhawan, Lajpat Nagar-IV, New Delhi - 110024, Ph. : (O) 26427650, (R) 26222150, 2643495, Fax : 26288102
E-mail : samajdli@nda.vsnl.net.in

8.2.05

MESSAGE

Prof. T. Pati
D. Phil, D.Sc.
Ex-Vice-Chancellor
University of Allahabad
&
Hon. Chairman
Institute of Mathematics & Applications
Shri Jagannath Sanskrit Vishvidyalay
PURI.

I feel greatly honoured in being requested to write a few words about the great sacrifices made by Shri Gopal Krishna Gokhale, the founder of the Servants of India Society and his many worthy followers like Shri G.K. Deodhar, Thakkar Bapa, Pt. H.N. Kunzru, Shri S.G. Vaze, Shri L.V. Sahu, Shri A.D. Mani and Shri R.S. Mishra.

It is in the fitness of things that centenary celebrations are being held in the city, which is noted as Tirthraj Prayag - a city laden with a great tradition of social service, religious inspiration and philosophical vision. Allahabad through the ages has cherished, the high ideology of humanism and pacifism as opposed to the culture of self-agrandisement and materialism. The example set by the active members of Servants of India Society should be a constant beaconlight for the posterity, which looks up to the builders of modern India for guidance in diverse aspects of our national life.

Let us follow the footsteps of the Father of the Nation 'Bapu' and his revered Guru the immortal Gopal Krishna Gokhale and become committed to their lofty ideals, so that their imperishable dreams may be fully realized. May the centenary be a milestone to be remembered forever. I pay my humble homage to the Society on this historic occasion.

(T. Pati)

10, Bank Road
University of Allahabad
Allahabad

महिला कल्याण एवं बाल विकास विभाग, उ० प्र० शासन

जय प्रकाश
विशेष सचिव

सन्देश

12 जून, 1905 को पूना (महाराष्ट्र) में महामानव श्री गोपाल कृष्ण गोखले द्वारा संस्थापित **Servants of India Society** (हिन्द सेवक संघ) इस वर्ष अपने जीवन के 100 वर्ष पूरे कर चुकी है।

दीर्घजीवी यह संस्था देश के उत्तरी छोर से दक्षिणी छोर तक विभिन्न प्रान्तों के सुदूर ग्रामीण अंचलो में समाज के पिछड़े आदिवासी वर्ग के लिये जिस प्रतिबद्धता के साथ कार्य क्रर रही है वह प्रत्येक व्यक्ति एवं संस्था के लिए आज भी एक प्रेरणास्रोत है। शताब्दी समारोह के अवसर पर प्रकाशित होने वाली इस स्मारिका के लिये मुझे संदेश रूप में कुछ विचार प्रस्तुत करने का जो अवसर सम्पादक द्वारा दिया गया है उसके लिए मैं उनका आभारी हूँ।

आजादी के बाद इस देश ने निश्चित रूप से अनेक क्षेत्रों में आशातीत विकास किया है लेकिन यह भी सच है कि भारतीय जीवन दर्शन में रचे बसे स्थाई मूल्यों में अत्यधिक गिरावट आयी है। राष्ट्र के समक्ष जनसंख्या, गरीबी, अशिक्षा, अन्धविश्वास एवं स्वास्थ्य की समस्यायें आज भी मौजूद हैं लेकिन इन सबसे बढ़कर समस्या यह है कि हजारों साल से भारतीय समाज के पारम्परिक मूल्यों का व्यापक रूप से क्षय हो रहा है और वास्तव में यदि इन मूल्यों को पुनः स्थापित करने का प्रयास नहीं किया गया तब निश्चित ही यह देश पश्चिम की चकाचौंध में विलुप्त हो जायेंगा। **Servant of India Society** जैसी संस्थायें इस दिशा में बहुत कुछ कर सकती हैं। इस संस्था से अनेक महामानव, जो अवतार जैसे लगते हैं, जुड़े रहे हैं और उनके आशीर्वाद से संस्था से जुड़े सभी कार्यकर्त्ता सकारात्मक चिन्तन के साथ समाज एवं राष्ट्र की सेवा कर सकेंगे, यही कामना है एवं प्रभु से प्रार्थना है।

03-02-05.

(जय प्रकाश)
विशेष सचिव
महिला कल्याण एवं बाल विकास विभाग
उ० प्र० शासन, लखनऊ

Dr. R.L. UPADHYAY
Dy. Cane Commissioner
Meerut Division.
Uttar Pradesh.

GANNA BHAWAN
Phone Office -0121-2672711
Resi. -0121-2670863
Mob. -9412702004

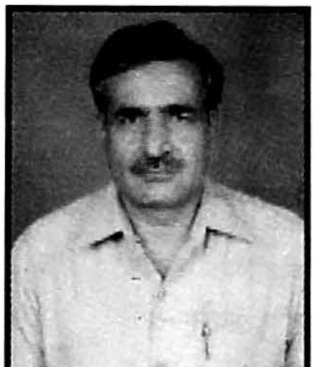

प्रिय द्विवेदी जी,

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी (उ० प्र० शाखा) आगामी 12 जून, 2005 में अपनी वन्दनीय शतवर्षीय यात्रा को पूर्ण कर रही है। कहना न होगा कि उक्त संस्था देश रत्न पण्डित गोपाल कृष्ण गोखले के आदर्शों को आत्मसात् एवं दलितों, पिछड़ों एवं आदिम जातियों को अवलोकित करते हुए अपने उद्भवकाल से ही प्रयासरत रही है।

मुझे इस सोसाइटी के क्रियाकलापों को सन्निकट से देखने का अवसर प्राप्त हुआ जो अपने में अलौकिक एवं उत्कृष्ट है।

यह भी हर्ष का विषय है कि अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर लब्ध प्रतिष्ठित सोसाइटी माह आयोज्य शताब्दी समारोह के शुभ अवसर पर एक स्मारिका का प्रकाशन भी कर रही है।

एतृदर्श, मैं सोसाइटी के भविष्य में भी मार्ग-प्रशस्ति की कामना करता हूँ और प्रकाश्य स्मारिका हेतु अपनी शुभकामनायें प्रेषित करता हूँ।

भवदीय,

(डॉ० आर.एल. उपाध्याय)

श्री प्रेम कृष्ण द्विवेदी
उपाध्यक्ष,
सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी (उ० प्र० शाखा)
1, पी.डी. टण्डन रोड, इलाहाबाद।

डॉ० के० पी० श्रीवास्तव

महापौर, इलाहाबाद
अध्यक्ष : जल संस्थान, इलाहाबाद

फोन : (कार्या०) 2622988 (फैक्स) : 2420627
फोन : (निवास) 2600799, 2600665-फैक्स
मोबाइल : 9415217200, 0532-3155253
निवास : 58, महात्मा गाँधी मार्ग, जार्ज टाउन,
इलाहाबाद (उत्तर प्रदेश)

दिनांक: 16-2-2005

प्रिय द्विवेदी जी,

मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी (हिन्द सेवक संघ) शताब्दी वर्ष मनाने जा रहा है । सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी का भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम में एक महत्वपूर्ण एवं सराहनीय योगदान रहा है, यह समाज सेवी संस्था है, जो मुख्य रूप से दलितों कमजोर वर्ग के लोगों, आदिवासियों, जन-जातियों, महिलाओं, विशेष-रूप से विधवाओं के लिए प्रशंसनीय कार्य कर रही है ।

मुझे विश्वास है कि सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी अपने - उद्देश्यों की पूर्ति में सदैव अग्रसर रहेगी । इस शताब्दी समारोह के अवसर पर प्रकाशित होने वाली स्मारिका के लिए मेरी हार्दिक शुभ-कामनाएं ।

भवदीय

(डा० के० पी० श्रीवास्तव)

प्रतिष्ठा में,

श्री प्रेम कृष्ण द्विवेदी जी,
उपाध्यक्ष,
सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी,
उत्तर प्रदेश ब्रांच, इलाहाबाद ।

अनुक्रमणिका

क्र. सं.	विषय	पेज नं०
1.	सम्पादकीय	1
2.	वैदिक राष्ट्रगीत	3
3.	Premble of Society	4
4.	सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी के 100 वर्ष।	5
5.	Servants of India Society (List of members of the hundred years.)	7
6.	Servants of India Society. Work at a Glance.	9
7.	ऋषि - आशीर्वाक	10
8.	गाँधी-गुरू-गोपालकृष्ण गोखले	11
9.	Gokhale's Public Life.	13
10.	जागरण का अग्रदूत- राजा राम मोहन राय	15
11.	भारत रत्न महर्षि कर्वे	18
12.	दरिद्र-सखा	20
13.	राइट ऑनरेबुल श्री वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री	21
14.	हरिजन आन्दोलन	22
15.	Gokhale and his Economic thinking.	24
16.	तमसो मा ज्योतिर्गमय	26
17.	Gokhale Institute of Politics and Economics	27
18.	गोखले एवं गाँधी के जीवन के कतिपय प्रेरणादायी प्रसंग	29
19.	अद्‌भुत क्रान्तिद्रष्टा- "विनोबा"	32
20.	पं० हृदय नाथ कुँजरू का संक्षिप्त जीवन	35
21.	अमृतलाल ठक्कर (ठक्कर बापा)	36
22.	A Daughter's Diary.	39
23.	Honourable Mahapandit Gopal Krishna Gokhale's Tour in South Africa.	41
24.	पर्यावरण पत्रिका : प्रातः स्मरणीय महात्मा गोखले की पावन स्मृति में।	44
25.	जनजातयों के शैक्षिक विकास में-सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी का योगदान।	45
26.	एक और एकलव्य	48
27.	भारतीय संस्कृति और स्वाधीनता	51
28.	आदिवासी भारत के।	53
29.	पंथ-निरपेक्ष धर्माधारित-शिक्षा	54
30.	क्या है समाज सेवा	57
31.	दिव्य ज्योति	58
32.	श्री सिगनालूर रामकृष्ण व्येंकट रमन।	59
33.	Gokhale : Blaze that Pioneered the Indian freedom Movement.	60
34.	उत्तर प्रदेश एवम् उत्तराँचल की जनजातियाँ एवम् उनका विकास (संक्षिप्त परिचय)।	62
35.	The Man with a Vision and Mission : Gopal Krishna Gokhale.	65
36.	वर्तमान शिक्षा कितनी सार्थक है?	67
37.	भारतीय जनजातियाँ : परिवर्तन के नये आयाम (सोनभद्र जनपद 'उत्तर प्रदेश' की जनजातियों के सांस्कृतिक परवर्तन पर आधारित)	69
38.	Amrit Lal Thakkar	73
39.	Human Rights and Social Solidarity with special reference to Women.	75
40.	पिथौरागढ़ (उत्तराँचल) की राजी आदिम जाति (एक अध्ययन)	79
41.	रथ विहीन एक महारथी की तलवार	84
42.	सूर्य	86
43.	सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी शताब्दी समारोह (एक विवरण)	87

CALENDAR OF 500 YEARS

YEARS [1901-2400]																										MONTH	JAN	FEB	MAR	APR	MAY	JUN	JUL	AUG	SEP	OCT	NOV	DEC
1901	1918	1935	1957	1974	1991	2013	2030	2047	2069	2086	2103	2125	2142	2159	2181	2198	2215	2237	2254	2271	2293	2310	2327	2349	2366	2383	B	E	E	A	C	F	A	D	G	B	E	G
1902	1919	1941	1958	1975	1997	2014	2031	2053	2070	2087	2109	2126	2143	2165	2182	2199	2221	2238	2255	2277	2294	2311	2333	2350	2367	2389	C	F	F	B	D	G	B	E	A	C	F	A
1903	1925	1942	1959	1981	1998	2015	2037	2054	2071	2093	2110	2127	2149	2166	2183	2205	2222	2239	2261	2278	2295	2317	2334	2351	2373	2390	D	G	G	C	E	A	C	F	B	D	G	B
1905	1922	1939	1961	1978	1995	2017	2034	2051	2073	2090	2107	2129	2146	2163	2185	2202	2219	2241	2258	2275	2297	2314	2331	2353	2370	2387	G	C	C	F	A	D	F	B	E	G	C	E
1906	1923	1945	1962	1979	2001	2018	2035	2057	2074	2091	2113	2130	2147	2169	2186	2203	2225	2242	2259	2281	2298	2315	2337	2354	2371	2393	A	D	D	G	B	E	G	C	F	A	D	F
1909	1926	1943	1965	1982	1999	2021	2038	2055	2077	2094	2111	2133	2150	2167	2189	2206	2223	2245	2262	2279	2301	2318	2335	2357	2374	2391	E	A	A	D	F	B	D	G	C	E	A	C
1910	1927	1949	1960	1983	2005	2022	2039	2061	2078	2095	2117	2134	2151	2173	2190	2207	2229	2246	2263	2285	2302	2319	2341	2358	2375	2397	F	B	B	E	G	C	E	A	D	F	B	D
1907	1929	1946	1963	1985	2002	2019	2041	2058	2075	2097	2114	2131	2153	2170	2187	2209	2226	2243	2265	2282	2307	2321	2338	2355	2377	2394	B	E	E	A	C	F	A	D	G	B	E	G
1913	1930	1947	1969	1986	2003	2025	2042	2059	2081	2098	2115	2137	2154	2171	2193	2210	2227	2249	2266	2283	2305	2322	2339	2361	2378	2395	C	F	F	B	D	G	B	E	A	C	F	A
1914	1931	1953	1970	1987	2009	2026	2043	2064	2082	2099	2121	2138	2155	2177	2194	2211	2233	2250	2267	2289	2306	2323	2345	2362	2379		D	G	G	C	E	A	C	F	B	D	G	B
1911	1933	1950	1967	1989	2006	2023	2045	2062	2079	2101	2118	2135	2157	2174	2191	2213	2230	2247	2269	2286	2303	2325	2342	2359	2381	2398	G	C	C	F	A	D	F	B	E	G	C	E
1917	1934	1951	1973	1990	2007	2029	2046	2063	2085	2102	2119	2141	2158	2175	2197	2214	2231	2253	2270	2287	2308	2326	2343	2365	2382	2399	A	D	D	G	B	E	G	C	F	A	D	F
1915	1937	1954	1971	1993	2010	2027	2049	2065	2083	2105	2122	2139	2161	2176	2195	2217	2234	2251	2273	2290	2309	2329	2346	2363	2385		E	A	A	D	F	B	D	G	C	E	A	C
1921	1938	1955	1977	1994	2011	2033	2050	2068	2089	2106	2123	2145	2162	2179	2201	2218	2235	2257	2274	2291	2313	2330	2347	2369	2386		F	B	B	E	G	C	E	A	D	F	B	D
				1904	1932	1966	1988	2016	2044	2072	2100	2128	2156	2184	2212	2240	2268	2296	2324	2352	2380						E	A	B	E	G	C	E	A	D	F	B	D
				1908	1936	1964	1992	2020	2048	2076	2104	2132	2160	2188	2216	2244	2272	2300	2328	2356	2384						C	F	G	C	E	A	C	F	B	D	G	B
				1912	1940	1968	1996	2024	2052	2080	2108	2136	2164	2192	2220	2248	2276	2304	2332	2360	2388						A	D	E	A	C	F	A	D	G	B	E	G
				1916	1944	1972	2000	2028	2056	2084	2112	2140	2168	2196	2224	2252	2280	2308	2336	2364	2392						F	B	C	F	A	D	F	B	E	G	C	E
				1920	1948	1976	2004	2032	2060	2088	2116	2144	2172	2200	2228	2256	2284	2312	2340	2368	2396						D	G	A	D	F	B	D	G	C	E	A	C
				1924	1952	1980	2008	2036	2066	2092	2120	2148	2176	2204	2232	2260	2288	2316	2344	2372	2400						B	E	F	B	D	G	B	E	A	C	F	A
				1928	1956	1984	2012	2040	2067	2096	2124	2152	2180	2208	2236	2264	2292	2320	2348	2376							G	C	D	G	B	E	G	C	F	A	D	F

A

SUN		7	14	21	28
MON	1	8	15	22	29
TUE	2	9	16	23	30
WED	3	10	17	24	31
THU	4	11	18	25	
FRI	5	12	19	26	
SAT	6	13	20	27	

B

SUN		6	13	20	27
MON		7	14	21	28
TUE	1	8	15	22	29
WED	2	9	16	23	30
THU	3	10	17	24	31
FRI	4	11	18	25	
SAT	5	12	19	26	

C

SUN		5	12	19	26
MON		6	13	20	27
TUE		7	14	21	28
WED	1	8	15	22	29
THU	2	9	16	23	30
FRI	3	10	17	24	31
SAT	4	11	18	25	

D

SUN		4	11	18	25
MON		5	12	19	26
TUE		6	13	20	27
WED		7	14	21	28
THU	1	8	15	22	29
FRI	2	9	16	23	30
SAT	3	10	17	24	31

E

SUN	31	3	10	17	24
MON		4	11	18	25
TUE		5	12	19	26
WED		6	13	20	27
THU		7	14	21	28
FRI	1	8	15	22	29
SAT	2	9	16	23	30

F

SUN	30	2	9	16	23
MON	31	3	10	17	24
TUE		4	11	18	25
WED		5	12	19	26
THU		6	13	20	27
FRI		7	14	21	28
SAT	1	8	15	22	29

G

SUN	1	8	15	22	29
MON	2	9	16	23	30
TUE	3	10	17	24	31
WED	4	11	18	25	
THU	5	12	19	26	
FRI	6	13	20	27	
SAT	7	14	21	28	

NOTE : FIRST FIND OUT THE YEAR AND IN THE SAME LINE FIND OUT THE ALPHABET OF THE MONTH. THEN LOOK AT THE CALENDAR TABLE BELOW THE ALPHABET

सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसायटी
(की विभिन्न इमारतें व कार्यालय)

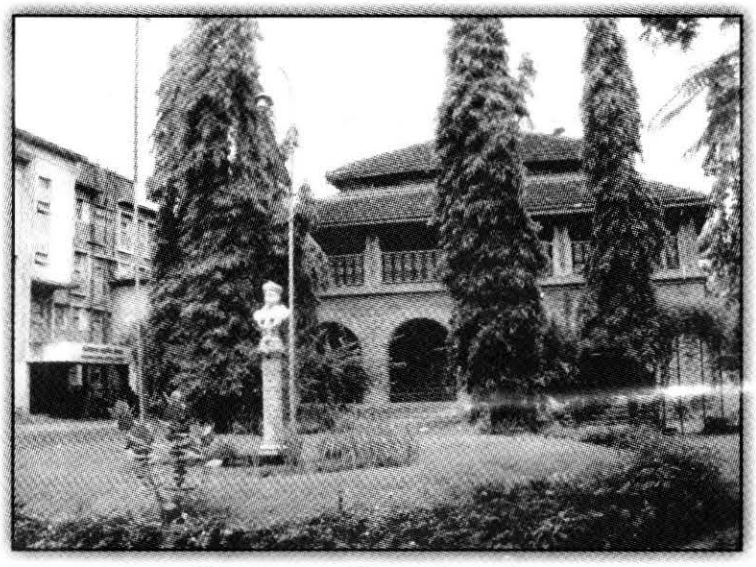

सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी पूना

जनजाति बालिका आश्रम पद्धति विद्यालय बाजपुर

बालिका आश्रम पद्धति विद्यालय
पालियाकलां, लखीमपुर-खीरी

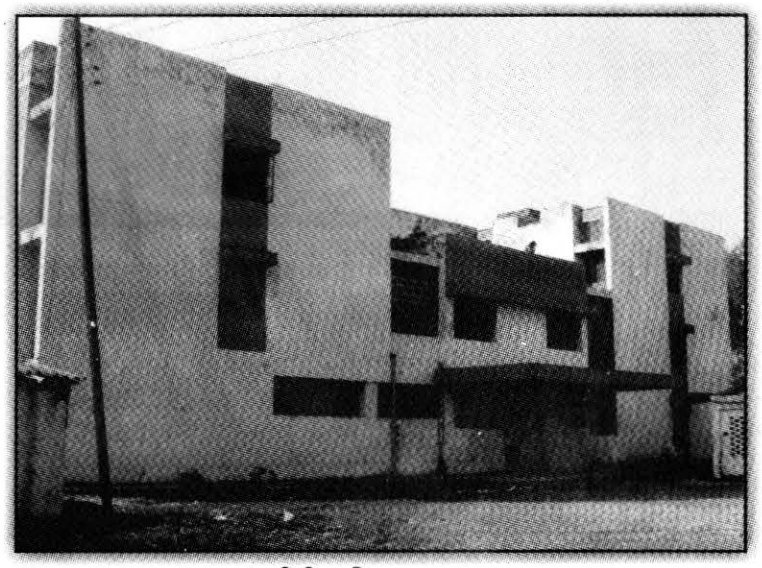

श्रमजीवी महिला छात्रावास
१, पी.डी. टण्डन रोड, इलाहाबाद

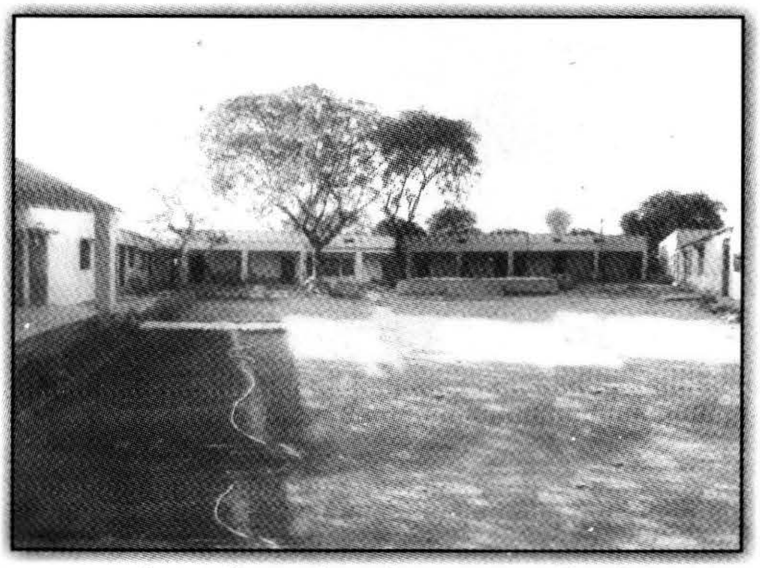

राजा बलदेवदास बिड़ला सोनघाटी उच्चतर माध्यमिक विद्यालय
सलखन, सोनभद्र (उ०प्र०)

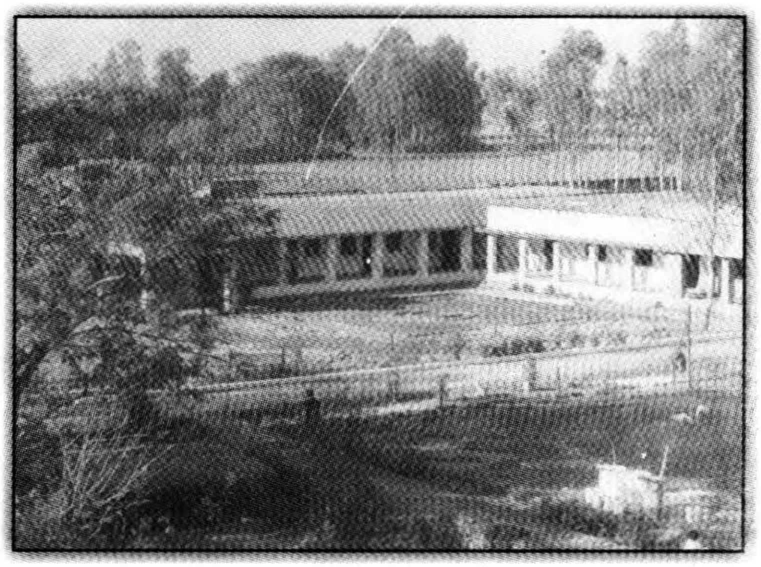

बुक्सा छात्रावास बाजपुर, उधमसिंह नगर

सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसायटी

सोसायटी सदस्य

समारोह समिति

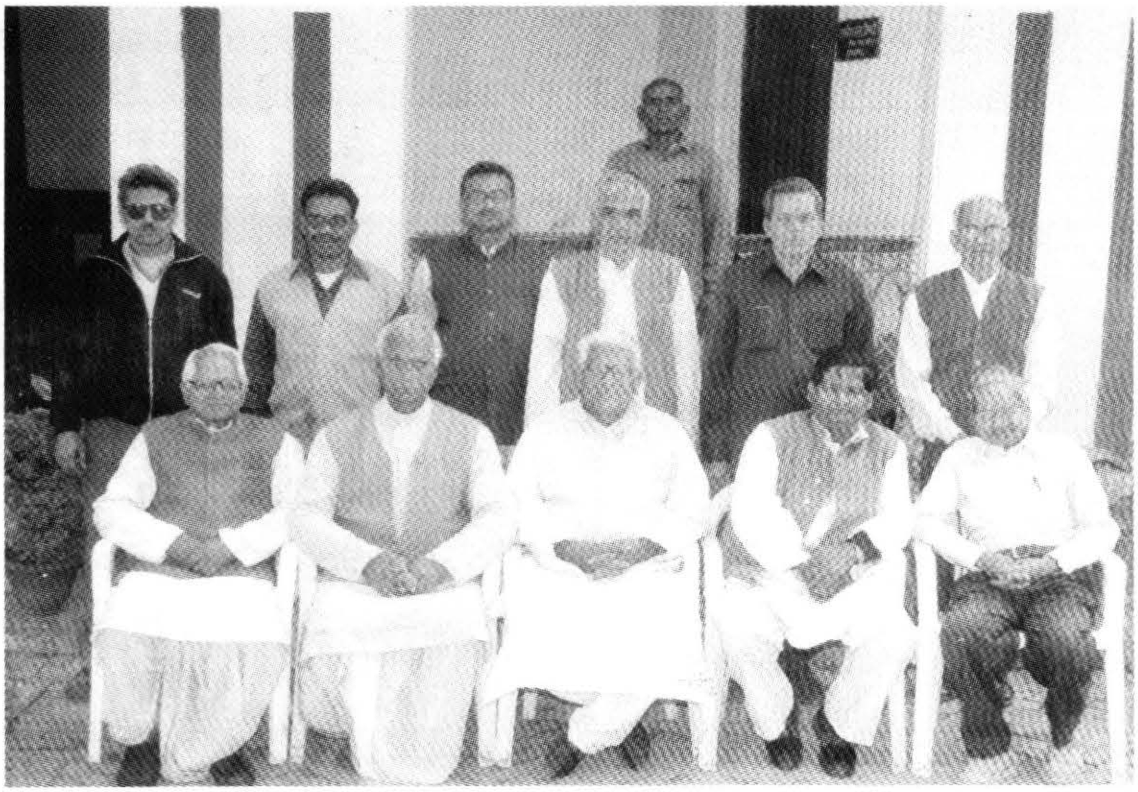

सम्पादकीय

प्रस्तुत स्मृति-ग्रन्थ 'सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी' के ध्वजवाहक, भारत माता के उन यशस्वी सुपुत्रों और सुपुत्रियों के राष्ट्रीय जागरण और नव निर्माण हेतु समर्पित जीवटता की पुण्य स्मृति हेतु है।

वह दिन था, 12 जून 1905, जब महादेव गोविन्द रानाडे शिष्य एवं गाँधी-गुरू पूण्यात्मा श्री गोपाल कृष्ण गोखले ने, गुलामी में जकड़ें, अन्धविश्वास, अशिक्षा, सामाजिक विषमता और विपन्नता से बिलबिलाते भारत को दिव्य ज्योति 'सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी' प्रदान की।

"परोपकार: पुण्याय, पापाय परपीडनम्" की यह 'व्यास' उक्ति आत्मसात कर, राष्ट्र निर्माण में जीवन समर्पण करते हुए इस 'पावन-शाला' और उसके कर्मयोगी नायकों सर्वश्री जी० के० देवधर, श्रीनिवास शास्त्री, एस० ए० द्रविड़, एस० जी० बजे, पं० हृदय नाथ कुँजरू, ए० वी० ठक्कर, ए० डी० मनी और आर० एस० मिश्रा सहित तमाम राष्ट्र सेवकों ने राष्ट्र निर्माण में अनवरत अपना तन-मन-धन सब अर्पण कर 'शतवर्षीय यात्रा पूरी कर ली।

विपन्न मानवता की सेवा, राष्ट्रीय जागरण की आकांक्षा, विश्व-वन्द्य-भारत के स्वरूप निर्माण और 'गीता' के 'कर्मयोग' का सिद्धान्त संजोये, मातृभूमि हित में गोखले के जीवन का क्या नैतिक सन्देश है? उन्होंने हमारे लिए विरासत में क्या छोड़ा है? इन प्रश्नों का उत्तर, स्वयं गोखले ने अपनी मृत्यु शैय्या से, 'सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी' के सदस्यों को अपने अंतिम वचन के रूप में दिया—"अपनी जीवनी लिखने या मूर्तियाँ खड़ी करने में, अपना समय बरबाद मत करो, उठो; भारत माँ की सेवा में अपनी पूरी आत्मा उड़ेल दो, तभी तुम 'भारत माता' के सच्चे और विश्वास भाजन सेवकों में गिने जाओगे।"

महात्मा गाँधी ने लिखा है—"गोखले ने भाषा के माध्यम से राष्ट्र को महिमा-मंडित करने का पाठ नहीं पढ़ाया, अपितु राजनीतिक जीवन और संस्थाओं को आध्यात्मिक बनाने की शिक्षा दी, उन्होंने मेरे जीवन को प्रेरणा दिया, जिसके बल पर मैं, अपने जीवन को पवित्र और आध्यात्मिक बना रहा हूँ। मैंने अपने को उस आदर्श के प्रति समर्पित कर दिया है। राजनीतिक जीवन तो व्यक्तिगत जीवन की प्रतिध्वनि होनी चाहिये। दोनों के मध्य कोई भेद नहीं हो सकता।"

गाँधी जी ने अपने सम्पूर्ण समर्पित हृदय से 'गोखले' को एक आदर्श महात्मा माना और अपने भी जीवन में उन तमाम आदर्शो को ढालने की चेष्टा की जो उन्होंने अपने 'राजनैतिक-गुरू' में देखी। उन्होंने स्पष्ट कहा—"एक व्यक्ति जो शुभ को अंगीकार कर चलता है, जिसकी मूल प्रवृत्तियाँ शुभ है, जो सज्जनता से परिपूर्ण है, जो सत्य का अनुयायी है, जिसने अपने अहंकार का त्याग कर दिया है, वह एक धर्मात्मा है, धार्मिक व्यक्ति है, चाहे वह इसे जानता हो, या न जानता हो।"

हर दौर का अपना 'यथार्थ' होता है, हर 'यथार्थ' का अपना जीवन-बोध होता है; और हर 'जीवन-बोध' का अपना-अपना 'संगीत' होता है जो उसकी 'बुनियाद' को बनाता है, मजबूती देता है, स्थिरता और जीवन्तता प्रदान करता है। वर्तमान दौर 'महाजनी-संस्कृति' का दौर है। 'पुत्रेषणा' 'वित्तेषणा' और 'कामेषणा' की लहर में आदर्श, मूल्य, ईमानदारी, सत्य, सहयोग, प्रतिवद्धता और निष्ठा जैसे शब्द प्रचलन और 'जीवन-जुड़ाव' से बाहर होने लगे हैं। 'मुनाफा' के बदले 'नैतिकता' को 'व्यष्टि' के बदले 'समष्टि' को और 'सत्ता' के बदले 'राष्ट्रीय मूल्य'; 'सामाजिक-संरचना' और 'मानवीय-संवेदनाओं' का कुत्सित सौदा हो रहा है।

आज का दौर 'खाऊ'-'अघाऊ' और 'बिकाऊ' है। भौतिकवादी; 'इलेक्ट्रानिक', ग्लोबलाइजेशन और सूचना-संचार के प्रवाह में जबर्दस्त भटकाव या बदलाव आया है। समाज-हिंसा, सेक्स, कुण्ठा, निराशा, अपहरण, फिरौती, घूस-घोटाला और कामचोरी की 'अपसंस्कृति' में आकण्ठ डूब चुका है। 'व्यवस्था' से 'आस्था' हट चुकी है, हताशा, ने 'आशा-दीप' बुझाने की तेज बयार के साथ ही अन्धकार का घना कुहासा भी फैला रक्खा है, जिधर भी दृष्टि जाती है- निराशा, अनास्था

और आकुलता ही दृष्टिगोचर हो रही है। .....तब ? अब? कैसे ? किधर ? और कौन ?.......? जैसे, अनन्त भयावह प्रश्नवाचकों का उत्तर ढूढ़ता, आकुल समाज, राष्ट्र और 'आदर्श', कब तक भटकता रहेगा? कैसे होगा, 'जनता, समाज और राष्ट्र का कल्याण? यह 'यक्ष-प्रश्न' है, राष्ट्रीय समस्या है, विचारणीय विन्दु है, सोचें.....।

गाँधी जी ने आजादी प्राप्ति के साथ ही, समाज को निर्देश दिया था—

"Behave like a `Pandit'
Don't behave like a `Bania'."

यजुर्वेद का एक मन्त्रांश है—"वयम् राष्ट्रे जागृयाम् पुरोहिता:" अर्थात् (हम अपने राष्ट्र में सावधान होकर पुरोहित नेता, अगुवा) बनें। यह भी कहा गया है—"हे इयचिक्षंसा ! मित्र ! सूर्य: (एते) वयं स्वराज्ये आ यते महि।" अर्थात् हे व्यापक दृष्टि वालों ! हे मित्रत्व का व्यवहार करने वालों ! आप दोनों और हम सब विद्वान मिलकर उक्त स्वराज्य में सबके कल्याण हित प्रयत्न करेंगे।' यह है हमारी वैदिक अवधारणा, 'स्वराज्य' का वैदिक दृष्टिकोण, वह दृष्टिकोण जिसके अमल पर वर्तमान की यह 'अधोगति' समाप्त की जा सकती है। समय की माँग है, अतीत के 'वैदिक ऋषि' की भूमिका में वर्तमान्' के विद्वानों को आना होगा, 'समाज सेवी' संस्थानों को, 'तपोवन' की भूमिका में आकर—"एतद्देश प्रसूतस्य सकाशादग्र जन्मन:, स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेर पृथिव्यां सर्व मानवा:। की अलख जगानी ही होगी।

हमारी सामाजिक व्यवस्था कर्मवादी रही है, गीता के कृष्ण के अनुसार—व्यक्ति अपने कर्म के द्वारा स्वयं को किसी भी वर्ग में स्थापित कर सकता है। आज आवश्यकता इस बात की है कि, समाज का हर वर्ग, विभाजक प्रलोभनों से स्वयं को बचाकर, ऐसी सलाह को ठुकरा दें जो उसे अकर्मण्य बनायें। समाज को अलग-अलग टुकड़ों से, 'जाति-स्वजाति' और 'कुजाति' के 'मृदु-विष' से निकाल ले जायें।

'सर्वेन्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी' की यात्रा के 'शताब्दी-समारोह' में प्रस्तुत स्मृति-ग्रन्थ का कलेवर प्रदान करने हेतु, सोसाइटी के माननीय उपाध्यक्ष श्री प्रेमकृष्ण द्विवेदी ने जो गुरुत्तर भार मेरे अशक्त हाथों में सौंपा, इसकी समीक्षा तो, सुधी पाठक ही करेंगे, किन्तु मैं उनका आभारी हूँ।

मैंने अपने सीमिति संसाधनों, से सोसाइटी के असीमित, गौरवपूर्ण अतीत, वर्तमान और भविष्य को कागज के पन्नों पर उतारने का जो प्रयास किया, उसमें सर्वश्री डॉ० सुरेश चन्द्र द्विवेदी, डॉ० श्रीमती अरुन्धती त्रिपाठी, श्री शिवाधार तिवारी डॉ० लक्ष्मी राव, कु० शुभा द्विवेदी, डॉ० सुधांश त्रिपाठी, डॉ० गिरिजा प्रसाद दूबे, श्री गंगाधर साहू, श्री हरिशंकर शुक्ल, डॉ० शम्भूनाथ पाण्डेय सहित अन्य विद्वान रचनाकारों ने प्रस्तुत स्मारिका को अपनी अमूल्य रचनाओं के द्वारा जो ऐतिहासिकता प्रदान की, मैं उसका आभार शब्दों में नहीं प्रकट कर सकता।

श्री श्याम मनोहर जी सचिव भा०आ०जा०से सं० नई दिल्ली, श्री दामोदर साहू वरिष्ठ सदस्य हिन्द सेवक संघ (उड़ीसा ब्रांच) के अनवरत प्रोत्साहन एवं प्रियबन्धु डॉ० रामजीत शुक्ल के अथक परिश्रम के बगैर 'स्मृतिग्रन्थ' के इस स्वरूप की कल्पना भी नहीं की जा सकती, मेरे द्वारा उन्हें धन्यवाद ज्ञापन, उनके कार्यों का अवमूल्यन होगा।

स्मृतिग्रन्थ हेतु दिन-रात अथक परिश्रम करने वाले सोसाइटी के सदस्य श्री अमरेश त्रिपाठी, अखिल भारतीय सेवा समिति के उपाध्यक्ष श्री गंगा प्रसाद मिश्र, श्री ओम दत्त सिंह और श्री ओम प्रकाश जी ने जो सहयोग प्रदान किया, हम उसके चिर ऋणी रहेंगे।

अन्त में, मैं यह स्मृतिग्रन्थ अपने सुधी-पाठकों, देश-सेवा-व्रती नागरिकों, राजनेताओं, एवम् भावी राष्ट्रनिर्माता भारत माँ के सपूत छात्रों के सशक्त हाथों में, इस आशा के साथ अर्पित करता हूँ, कि-

भटको नहीं ! अनिश्चय में मत बहो,।

भटकने से पतन होगा। अनिश्चय में बहने से निर्बलता ही आयेगी,

विचारो और एक निश्चय पर पहुँचो।

निश्चय पर पहुँचने के बाद उसे कार्यान्वित करो—अडिग, अटल, दु:ख झेलते हुये, त्याग करते हुये।

मंजिल मिलेगी—और तभी मानवता सार्थक प्रमाणित करोगे—भले ही पैर लहूलुहान हों, मन टूक-टूक हो' आँखों में तो आत्म गौरव और आत्म संतोष की ज्योति होगी।

विश्व को यही ज्योति चाहिये, स्निग्ध, मनोरम
दिव्य ज्योति; ! आत्म ज्योति !!

'तन्मे मन: शिवसंकल्पमस्तु'

भारत माता की जय......

(ब्रज बिहारी मिश्र 'बिराज')

वैदिक राष्ट्र-गीत

आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवरचसी जायताम्।
आ राष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधि महारथो जायताम्।
दोग्ध्री धेनुर्वोढ़ानड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा
जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायताम्।
निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु
फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्ताम्।
योगक्षेमो नः कल्पताम् ।।

(यजुर्वेद)

(भावानुवाद)

भारत वर्ष हमारा प्यारा, अखिल विश्व से न्यारा
सब साधन से रहे समुन्नत, भगवन देश हमारा।
हों ब्राह्मण विद्वान राष्ट्र में, ब्रह्म तेज ब्रतधारी,
महारथी हों शूर धनुर्धर, क्षत्रिय लक्ष्य प्रहारी।
गौवें भी अति मधुर दुग्ध की रहें बहाती धारा।।
सब साधन ०–।।

भारत में बलवान वृषभ हों, बोझ उठायें भारी,
अश्व आशुगामी हों, दुर्गम पथ में विचरणकारी।
जिनकी गति अवलोक लजाकर हो समीर भी हारा,
सब साधन ०–।।

महिलायें हों सती, सुन्दरी सद्गुणवती सयानी,
रथारूढ़ भारत–वीरों की, करें विजय–अगवानी।
जिनकी गुण गाथा से गुंजित, दिक्–दिगन्त हो सारा,
सब साधन ०–।।

यज्ञ–निरत भारत के सुत हों, शूर सुकृत अवतारी,
युवक यहाँ के सभ्य–सुशिक्षित, सौम्य सरल सुविचारी।
जो होंगे इस धन्य राष्ट्र का भावी सुदृढ़ सहारा,
सब साधन ०–।।

समय–समय पर आवश्यकतावश, रस धन बरसाये,
अन्नौषध में लगें प्रचुर फल, और स्वयं पक जायें।
योग हमारा, क्षेत्र हमारा, स्वतः सिद्ध हो सारा,
सब साधन से रहे समुन्नत भगवन देश हमारा।।

PREMBLE OF SOCIETY

It was some times in 1900 that, the conviction has been forcing itself on many earnest and thoughtful minds that a stage has reached in the work of nation building in India when, for further progress, the devoted labour of a specially trained agency applying itself to the task in a true missionary spirit was required.

The Servants of India Society was founded by Gopal Krishna Gokhale on June12, 1905 with the object of training of national missionaries for the Service of India and the promotion by all constitutional means of the interests of the Indian people without distinction of caste or creed. The members of the Society are pledged to give throughout their life in them.

The Servants of India Society trains men, prepared to devote their lives to the cause of the country in a religious spirit and seeks to promote, by all constitutional means the national interest of the Indian people. Its members direct their efforts, principally towards.

Creating among the people by example and by precept, a deep and passionate love of motherland.

Organising the work of political education and agitation, basing it on a careful study of public questions and strengthening generally the public life of the country.

Promoting relations of cordial goodwill and cooperation among the different communities;

Assisting educational movements especially those for the education of women, the education of backward classes and scientific industrial education;

Helping forwards, the industrial development of he country;

The elevation of the depressed classes.

प्रत्येक सदस्य द्वारा संस्था में प्रवेश के अवसर पर ली जाने वाली सात शपथ :

1. मेरे विचारों में देश का सदा प्रथम स्थान रहेगा, और मुझमें जो कुछ उत्तम होगा वह मैं देश की सेवा में ही अर्पण करूँगा।
2. देश की सेवा करने में मैं किसी भी प्रकार का निजी लाभ उठाने की कोशिश नहीं करूँगा।
3. मैं तमाम भारतवासियों को अपना भाई मानूँगा। धर्म या जाति का भेदभाव रखे बिना सबकी प्रगति के लिये मैं काम करूँगा।
4. मेरे लिये और मेरा कुटुम्ब हो तो उसके लिये हिन्द सेवक संघ योगक्षेम की जो व्यवस्था करेगा या जो वेतन निश्चित करेगा उसी में मैं सन्तुष्ट रहूँगा। अपने लिये रुपया कमाने में अपनी जरा भी शक्ति नहीं लगाऊँगा।
5. मैं पवित्र व्यक्तिगत जीवन बिताऊँगा।
6. मैं किसी के साथ भी निजी झगड़े या टंटे-फिसाद में नहीं पड़ूँगा।
7. हिन्द सेवक संघ के ध्येय को मैं हमेशा अपने ध्यान में रखूँगा और पूरी लगन के साथ इस संस्था के हित की चिन्ता करूँगा। उसके कार्य की प्रगति के लिये करने योग्य सभी कुछ करूँगा। मैं हिन्द सेवक संघ के उद्देश्य और हेतु के तथा ध्येय और राजनीति के विरुद्ध अथवा उनके साथ असंगत कोई भी कार्य नहीं करूँगा।

Every member at the time of admission shall take the following seven vows :

(i) The country shall always be the first in my thought and I will give to her service the best that is in me.

(ii) In serving the country I will seek no personal advantage for myself.

(iii) I will regard all Indians as brothers and work for the advancement of all without distinction of caste or creed.

(iv) I will be content with such provision for myself and my family, as the Society may be able to make. I will devote no part of my energies to earning money for myself.

(v) I will lead a pure personal life.

(vi) I will engage in no personal quarrel with any one.

(vii) I will always keep in view the aims of the society, and watch over its interest with the utmost zeal, doing all I can to advance its work. I will never do anything which is inconsistent with the objects of the society.

सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी के सौ वर्ष

सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी की स्थापना परम सम्माननीय श्री महादेव गोविन्द रानडे के शिष्य एवं राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के राजनीतिक गुरू स्वर्गीय नामदार गोपाल कृष्ण गोखले जी ने 12 जून 1905 के स्वर्णिम प्रभात की सुमधुर बेला में पूना शहर की हनुमान टेकरी पर अपने तीन साथियों के साथ शपथपूर्वक की। शताब्दी वर्ष के अवसर पर यह जानने की उत्कण्ठा अवश्य पैदा होती होगी कि इतने वर्षों के अन्तराल में गोखले की सोसाइटी ने राष्ट्र हित में क्या-क्या कार्य किया और यह अवगत कराना मैं अपना फर्ज भी समझता हूँ।

12 जून 1905 को नामदार गोपाल कृष्ण गोखले, स्व० गोपाल कृष्ण देवधर नीलेश अप्पा जी द्रविड़ एवं ए०वी० पटवर्धन ने संस्था के संस्थापक सदस्य के रूप में मातृ-भूमि की सेवा के लिए अपने को समर्पित किया। आज संस्था अपने जन्मकाल के सौ वर्ष पूरे करने जा रही है, इस अन्तराल में संस्था द्वारा किये गये कार्यों को हम निम्न स्तम्भों के रूप में देख सकते हैं—

१. स्वाधीनता आन्दोलन में संस्था की भूमिका :-

यह बात तो सच ही है कि अखिल भारतीय कांग्रेस की स्थापना 1885 में ए० ओ० ह्यूम की अध्यक्षता में की गयी जो मात्र, एक स्वयं सेवी संगठन ही था,स्वयं सेवी संगठन होने के नाते राष्ट्रीय कांग्रेस देशवासियों के कल्याण की ही बात करती थी और वही उसका तत्कालीन उद्देश्य था। दादाभाई नौरोजी, फिरोजशाह मेहता, महादेव गोविन्द रानाडे एवं मैडम वाचा जैसे व्यक्तियों ने भावी राष्ट्र के निर्माण में प्रथम सोपान का कार्य किया। परम सम्मानित नामदार गोखले ने 1889 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की सदस्यता ग्रहण की। सच है गोखले की शालीनता, कार्यकुशलता एवं राष्ट्र के प्रति समर्पित तन्मयता को देखकर माननीय रानाडे ने गुरू की जिम्मेदारी निभाते हुए उन्हें तराशकर भारत का प्रतिनिधित्व निभाने का दायित्व सौंपा। महामानव बनकर उदारवादी गोखले ने अपने गुरू की आशाओं की पूर्ति की। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी द्वारा महामानव गोपाल को अपना राजनैतिक गुरु स्वीकार करना एवं 'पवित्र गंगा की उपमा देना ही इसका जीता जागता प्रमाण है।

गोखले की सबसे बड़ी उपलब्धि सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी की स्थापना है। सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी ने अपने संस्थापक के चिन्तन, आदर्श एवं उनके द्वारा स्थापित मानवीय मूल्यों को ध्यान में रखते हुए मातृभूमि की सेवा में अपनी एक अमिट छाप छोड़ी है।

सोसाइटी, कांग्रेस के लिए अपने सदस्यों को नियमित रूप से, देश के कोने-कोने में भेजती रही। सन् 1908 में मद्रास के मेम्बर को कांग्रेस की प्रथम बैठक आयोजित करने में सहायता करने की जिम्मेदारी सौंपी। सोसाइटी के शाखा कार्यालयों को कांग्रेस को बल प्रदान करने का उत्तरदायित्व भी सौंपा गया। उन्हें स्पष्ट निर्देश दिया गया कि सभी सदस्य कांग्रेस की तरफ से हर अधिवेशन के आयोजन को सफल बनाने में विधिवत् सहायता करेंगे और धन भी इकट्ठा करेंगे। लखनऊ अधिवेशन में सोसाइटी के चार सदस्य स्वागत कमेटी में सम्मिलित किये गये और उनमें से एक श्री आई० ओ० याजनिक थे जो बाम्बे ब्रान्च के सदस्य थे।

सोसाइटी मध्य प्रदेश और संयुक्त प्रदेश के सदस्यों को अपने-अपने प्रदेश में प्रदेश कांग्रेस कमेटी को आर्गनाइज करने तथा प्रादेशिक अधिवेशन आयोजित करने की जिम्मेदारी सौंपी और प्रदेश कांग्रेस कमेटी के द्वारा ब्रांच का वरिष्ठ सदस्य अखिल भारतीय कांग्रेस हेतु चुना गया।

सन् 1912-13 में दक्षिणी अफ्रीका से वापस आने पर गोखले जी ने संकटग्रस्त अफ्रीका के प्रवासी भारतीयों की आर्थिक सहायता हेतु धन एकत्रित करने की अपील की, और "साउथ अफ्रीकन फण्ड" के नाम से धन एकत्रित कर उसे साउथ अफ्रीका भेजने का निर्णय लिया। माननीय गोखले जी ने पत्रकारों को भी साउथ अफ्रीका की स्थिति से अवगत कराया। यह गतिविधि कई महीनों तक चलती रही। सोसाइटी के सदस्य जो कुछ भी साउथ अफ्रीका में रहने वाले भारतीयों के आन्दोलन को सफल बनाने में कर सकते थे, वह किया।

जहाँ तक भारतीयों के उच्च पदों पर रोजगार देने की बात थी, वह भी एक प्रमुख समस्या थी। सोसाइटी का ध्यान इस ओर भी गया। सोसाइटी के सदस्यों ने अनेक स्थानों पर जाकर देखा और लोगों का ध्यान भी इस ओर आकर्षित किया कि देश के विकास के लिए भारतीयों को भी उच्च पदों पर नियुक्ति दी जाय। इस सम्बन्ध में "अपर इण्डिया ब्रांच" के सचिव, (तत्कालीन प्रदेश कांग्रेस सचिव) द्वारा तैयार किया गया ज्ञापन आयोग को प्रदेश कांग्रेस कमेटी की तरफ से अप्रैल 1913 में दिया गया।

'सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी' अपने जन्मकाल से लेकर स्वतन्त्रता प्राप्ति तक अन्य गतिविधियों के साथ-साथ स्वतन्त्रता आन्दोलन में अपनी अहम् भूमिका निभाती रही। 15 अगस्त 1947 में जब देश का नेतृत्व करने वाले नायक, स्वतन्त्रता प्राप्ति की खुशी में झूम रहे थे और देश का अधिकाँश भाग देश विभाजन की लपटों में जल रहा था, उस समय सोसाइटी के उदारवादी सदस्य इस धधकती अग्नि को शान्त करने में तन्मय थे। संस्था के सदस्य 'बापा' 104°C बुखार से पीड़ित होने के

बावजूद भी अपनी कर्त्तव्य परायणता को ध्यान में रखते हुए बापू के साथ नोवाखली की धधकती आग बुझाने में मशगूल थे। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् देश को अपना संविधान चाहिए था जिसके निर्माण हेतु संविधान निर्मात्री समिति का गठन श्री भीमराव अम्बेडकर की अध्यक्षता में किया गया, जिसमें सोसाइटी के तीन सदस्य पं० हृदय नाथ कुँजरू, श्री ठक्कर बापा एवं श्री लक्ष्मीनारायण साहू चयनित किये गये।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारतीय राजनीतिक परिदृश्य पर भी सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी के सम्मानित सदस्यों ने अपनी उपस्थिति को संसद भवन में पहुँचकर दर्ज कराया। पं० हृदय नाथ कुँजरू संसद के गलियारे में एक प्रसिद्ध सांसद के रूप में परिचित हुए। माननीय ए० डी० मनी, श्री दिनकर दत्तात्रेय देसाई आदि की गणना संसद में प्रशंसनीय रही माननीय लक्ष्मीनारायण साहू ने उड़ीसा विधान परिषद में सदस्य के रूप में अपनी उपस्थिति दी।

पत्रकारिता :

सोसाइटी जन्म से ही पत्रकारिता के क्षेत्र में अपने अथक प्रयासों के लिए विभूषित होती रही। वर्ष 1911 में महाराष्ट्र पूना से ध्यान 'प्रकाश' (मराठी) एवं 'हितवाद' नागपुर से प्रकाशित होना शुरु हुआ। उत्तर प्रदेश लखनऊ से 'हिन्दुस्तानी' साप्ताहिक (उर्दू) एवं एडवोकेट का प्रकाशन संस्था के द्वारा होता रहा जिसका सम्पादन मु० गंगा प्रसाद वर्मा द्वारा किया जाता रहा। श्री वर्मा जी के देहावसान के पश्चात् सम्पादन का कार्य उनके भाई तथा बाद में संस्था के सदस्य श्री के०पी० कौल द्वारा किया जाता रहा।

ब्रिटिश शासन काल में व्याप्त समस्याओं के प्रति जनता एवं शासन का ध्यान दिलाने हेतु इन समाचार पत्रों का सहारा लिया जाता रहा। इलाहाबाद से "अभ्युदय ऑफ इलाहाबाद" का सम्पादन सोसाइटी के सम्मानित सदस्य पं० वेंकटेश नारायण तिवारी द्वारा किया जाता रहा। माननीय नीतेश द्रविड़ के बाद "हितवाद" (अंग्रेजी डेली) जो नागपुर एवं भोपाल से प्रकाशित होता था, उसका सम्पादन श्री ए०डी० मनी द्वारा किया जाने लगा। मद्रास से श्री श्रीनिवास शास्त्री ने 'सेल्फ गवर्नमेण्ट फॉर इण्डिया अण्डर दी ब्रिटिश फ्लैग" नामक प्रथम पम्फलेट प्रकाशित किया।

संस्था के तत्कालीन उपाध्यक्ष श्री ए०डी० मनी "प्रेस ट्रस्ट ऑफ इण्डिया" के अध्यक्ष थे।

ग्राम विकास :

सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी ने भारतीय गाँवों को प्रचलित टेक्नालॉजी के माध्यम से विकसित करने हेतु देश के विभिन्न भागों में सन् 1927 से 'रूरल डेवलपमेण्ट सेन्टर' के नाम से तीन सेन्टर क्रमशः सिन्दूरजना, अमरावती महाराष्ट्र और चौद्वार, कटक, उड़ीसा तथा माइनूर केरल प्रान्त में विकिसित किया। 'रूरल डेवलपमेण्ट सेन्टर' सिन्दूरजना के पास 16 एकड़ के प्लाट में डिमान्सट्रेशन फार्म, को-ऑपरेटिव सोसाइटी एवं मेटेर्निटी सेण्टर की स्थापना की गयी। चौद्वार सेन्टर की स्थापना भी मातृ रूरल सेन्टर के रूप में की गयी थी। वर्तमान में यह सेन्टर काफी विकसित हो चुका है।

शिक्षा :

शिक्षा के क्षेत्र में सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी ने एक सराहनीय भूमिका निभाई है। सोसाइटी के द्वारा पूरे देश में प्राथमिक विद्यालय से लेकर विश्वविद्यालय तक का संचालन किया जा रहा है। संस्था ने अपने स्रोतों से स्वतन्त्रता प्राप्ति के पहले उड़ीसा, तमिलनाडु, केरल, उत्तर प्रदेश में शिक्षण संस्थाओं का संचालन करते हुये राष्ट्र के शैक्षिक विकास में सराहनीय कार्य किया। वर्ष 1930 में गोखले अर्थशास्त्र संस्थान पूना की स्थापना किया गया जिसे आज डीम्ड् विश्वविद्यालय का स्तर यू०जी०सी० द्वारा प्राप्त है। संस्था द्वारा सम्पूर्ण भारत में प्राथमिक विद्यालय, पूर्व माध्यमिक, माध्यमिक एवं विश्वविद्यालय स्तर तक की शिक्षा व्यवस्था की जा रही है। अनुसूचित जाति एवं जनजाति के छात्रों एवं छात्राओं के लिए आश्रम पद्धति विद्यालय एवं छात्रावास की व्यवस्था है जिसके माध्यम से बच्चों को भोजन एवं आवासीय व्यवस्था के साथ-साथ 'गणवस्त्रं' पुस्तकीय सहायता आदि की भी व्यवस्था है। इन संस्थाओं से पढ़कर निकले हुए छात्र उच्च पदों पर आसीन होकर राष्ट्र निर्माण में अपनी सराहनीय भूमिका निभा रहे हैं जिन पर संस्था को गर्व है।

अन्य कार्य :

सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी ने 'राष्ट्र निर्माण' की अपनी 'मूल-कल्पना' के अनुसार राष्ट्र के सर्वांगीण विकास में यथा- 'सहकारिता-आन्दोलन', 'श्रमिक विकास' 'कृषि विकास', 'प्राकृतिक आपदा', बाढ़, भूकम्प, महामारी, सहित समय-समय पर पराधीन और स्वाधीन भारत के समक्ष आने वाली प्रत्येक महत्वपूर्ण समस्याओं पर, अपने ओजवान् और उत्साही सदस्यों की कर्मठता व समर्पण की भावना का समुचित व सफल प्रयोग करते हुए, अपना प्रशंसनीय योगदान किया। इस प्रक्रिया में प्रारम्भकाल से लेकर वर्तमान काल तक, श्री ठक्कर बापा, पं० कुँजरू, एन०एम० जोशी, रामभाऊ गुप्ते, कलम सिंह नेगी, आर०एस० मिश्र, वर्तमान अध्यक्ष डॉ० आर०जी० काकडे, आर०वी० नेवे, दामोदर साहू एवं आत्मा नन्द मिश्र तथा अन्य सदस्य पूर्ण निष्ठा एवं तन्मयता के साथ इस पुनीत कार्य को सफल बनाने में अपना योगदान समर्पित करते रहे हैं।

आज हमारी इस पुनीत 'सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी' की 'मातृ-भूमि सेवा' जो संस्थापक की मूल कल्पना थी, उसी कल्पना का सहारा लेकर हम अपनी सेवा-यात्रा के सौवें पड़ाव पर पहुँचकर, अपने पूज्य संस्थापक श्री गोपाल कृष्ण गोखले की पुण्यात्मा को आश्वस्त करना चाहते हैं कि उनके 'सपनों के भारत निर्माण' में हम अनवरत् गिलहरी की भूमिका निभाते रहेंगे।

"भारत माता की जय"

प्रेम कृष्ण द्विवेदी
उपाध्यक्ष सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी

Servants of India Society

(Founded on 12 June 1905)

List of Member's of the Hundred Years

Founder Members :

1. Sri G.K. Gokhale
2. Sri G.K. Devadhar
3. Sri A.V. Patvardhan
4. Sri N.A. Dravid

Sl. No.	Name of Members	Year of Admission	Year of Death
1.	Sri Namdar Gopal Krishna Gokhale (First Member)	12.06.1905	1915
2.	Sri Natesh Appaji Dravid, M.A.	12.06.1905	1935
3.	Sri Gopal Krishna Devdhar	12.06.1905	1936
4.	Sri Anant Vinayak Patvardhan, B.A.	12.06.1905	1939
5.	Sri V.S. Srinivasa Shastri, P.C.C.H., I.I.D., D.Lit	06.01.1906	1945
6.	Sri Sridhar Ganesh Vaze, B.A.	23.02.1908	1962
7.	Sri Hridya Nath Kunzaru, B.A., B.Sc, LLD	11.07.1909	1978
8.	Sri Krishna Prasad Kaul, B.A.	11.07.1909	1955
9.	Sri V.V. Venkat Subaiya, B.A.	30.09.1909	1938
10.	Sri Narayan Malhar Joshi, B.A.	10.12.1909	1939
11.	Sri Vithal Hari Barve	10.04.1913	1955
12.	Sri Amrit Lal Vithaldas Thakkar, LCE	06.02.1914	1951
13.	Sri Dattatraya Vasudeo Ambekar	20.12.1914	1979
14.	Sri Rao Bahadur Kelkar	1918	1928
15.	Sri S.P. Anedrews Dube, M.A.C.T.	1918	1939
16.	Sri Chintaman Sakharam	1918	1928
17.	Sri Venkatesh Narayan Tiwari, M.A.	1918	1932
18.	Sri Laxmi Narayan Sahu, M.A.	15.06.1918	1963
19.	Sri M.D. Shahane, B.A.	1918	1939
20.	Sri Rupanagudi Surya Narayan Rao, B.A.	26.04.1919	1943
21.	Sri Sham Vishnu Parulekar, M.A.	1919	1939
22.	Sri Krishna Ji Ganesh Limaye, M.A., C.C.B.	26.04.1919	1948
23.	Sri Pandurangi Kodand Rao M.A. Secretary	12.05.1922	1957
24.	Sri K.G. Sivaswamy, B.A.	04.04.1922	1947
25.	Sri Haradatta Sharma, B.A. L.L.B	04.04.1922	1963
26.	Sri Sriram Vajpayee	12.05.1922	1956
27.	Sri Raghu Nath Ramchandra Bakhale, M.L.C.	30.08.1923	1952
28.	Sri Shanker Govind Gokhale, M.A.	29.07.1928	1982
29.	Sri Keshao Ganesh Sharangpani B.A.L.C.	25.09.1930	1982
30.	Sri S. R. Venkat Raman, B.A. B.L.	25.09.1930	1985
31.	Sri K. S. Negi, M.A.	17.11.1932	1943
32.	Sri R. S. Gupte	30.06.1933	1976

33.	Sri V.R. Nayanar, B.A.	30.06.1933	1945
34.	Sri Annakavoor Durai Swami Subramani (A.D. Mani) M.A.	14.06.1935	1977
35.	Sri Dinkar Dattatraya Desai, M.A.	12.06.1936	1983
36.	Sri Narayan Vasudeo Phadake, B.A., LL.B.	12.06.1936	1941
37.	Sri Shyam Sunder Misra, M.A.	12.06.1936	1994
38.	Sri Rama Shanker Misra, B.A. LL.B.	12.06.1937	1986
39.	Sri Karsandas Jagjiwandas Chitalia	12.06.1941	1966
40.	Sri Raghu Nath Govind Kakade, M.A., LL.B., Ph.D.	12.06.1943	
41.	Sri Laxmi Narayan Rao, B.A.	19.06.1945	1959
42.	Sri K. Laxmi Narayan Rao, B.Sc.	12.06.1946	1963
43.	Sri R. Vasudevan, M.A.	01.09.1953	
44.	Sri Madhu Sudan Sahoo, M.A., D.A.M.S.	14.06.1963	
45.	Sri S.S. Ajgaonkar, M.A.	16.06.1966	---
46.	Sri Damodar Sahoo, B.A.	17.06.1975	
47.	Sri P.K. Dwivedi, B.A., B.D.	12.06.1976	
48.	Sri Atama Nand Misra, M.A.	12.06.1978	
49.	Sri P.K. Prabhakaran Nair, M.A. Ph.D.	11.09.1978	1984
50.	Sri Jawahar H. Shah, B.A.	12.06.1979 (Left)	
51.	Sri R.V. Neve, B.Sc. B.T.	12.06.1980	
52.	Sri V. S. Ravi, B.A.	12.06.1980 (Left)	
53.	Sri M.M. Danore, B.A.	03.01.1980	2002
54.	Sri H.P. Sinde, M.A.	03.01.1980 (Left)	
55.	Sri Ramakant Lenka, M.A.	12.06.1988	
56.	Sri Gangadhar Sahoo, M.A.	12.06.1988	
57.	Sri A.C. Tripathi, M.A. L.T.	12.06.1990	
58.	Sri Dinesh Misra, M.A.	12.06.1990	
59.	Sri M.B.Deshmukh, M.A.	12.06.1990	

A.C. Tripathi
Member Incharge
SIS U.P. Branch
Allahabad.

Servants of India Society

Work at a Glance

M.B. Deshmukh
Member SIS Pune

1. **Servants of India Society (Head Quarters) : Established in 1905**
   - Gokhale Institute of Economics and Politics (Now to be deemed University), Established in the year 1930 for te study of Agricultural Economics and Rural Development, Population Studies, Monetary Economics, International Economics.
   - Godgil Rao Library
   - Gokhale Hall Library

2. **Madras Branch : Established in 1910**
   - Thakkar Bapa Gurukulam Nirgasimund (Todas and Kotas Tribal)
   - Devadhar Schools in Kerala state (Backward classes and Mopla Muslims)
3. **Bombay Branch : Established in 1911**
   - Social Service league
   - Pre-Primary School
   - High School
   - Primary School
4. **Nagpur Branch : Established in 1911**
   - Rural Development
   - Service to Research Centre
   - Gokhale Memorial Library
   - Legal Advise Centre
5. **U.P. Branch : Established in 1911**

   A. **U.P. State :**
   - Intermediate Colleges
   - Primary Schools
   - Ashram Type Schools for Boys
   - Working Women's Hostel
   - Dr. Kaunzarue Nursary & Primary School
   - High Schools
   - Boys Hostel for SC Students
   - Ashram Type Schools for Girls
   - Type Writing Institutes
   - Pranayam Classes

   B. **Uttaranchal State**
   - Primary Schools
   - Higher Secondary Schools
   - Ashram Type School, Bazpur
   - Crech Centres
   - Junior High Schools
   - Boys Hostel Bazpur
   - Type Writing & Short Hand Institute
   - Fisheries Demonstration
6. **Orissa Branch :**

   A. **Choudwar Centre :**
   - Serve India D.C. Home
   - **Gokhale ideal College, Shankerpur**
   - L.M. Leprocy Clinic
   - Sadhu Charan Power Loom Centre
   - Anganwari Workers Training Programme
   - Serve India L.N. Project
   - Crech Centres
   - Ashok Pratap Tailoring School
   - Serve India Institute of Printing Technology

   B. **Rayagada Centre :**
   - Thakkar Bapa Ashram
   - Type Writing Institute
   - Employment Guidance
   - Tailoring Centre
   - Educational Complex

   C. **Andhra Pradesh (Narsenna Peth Centre)**
   - Gokhale Children's Home

ऋषि–आशीर्वाक

ऐसा हो मानव समाज

सहृदयं सांमनस्य भविद्वेषं कृणोमि वः।
अन्यो अन्यमभि हर्यत वत्सं जातमिवाघ्न्याः ॥१॥
अनुव्रतः पितुः पुत्रो मात्रा भवतु संभनाः ।
जाया पत्ये मधुमतिं बाचं वदतु शान्तिवाम् ॥२॥
मा भ्राता भ्रातरं द्विक्षन्मा स्वसार भुत स्वसा ।
सम्यचः सव्रता भूत्वा वांच वदत भद्रयः ॥३॥
देन देवा न वियन्ति नो च विद्विषते मिथः ।
तत्कृण्मो ब्रह्म वो गृहे संज्ञान पुरूषेभ्यः ॥४॥
ज्यावस्वन्ताश्चित्तिनो सावि योष्टि ।
संराधयन्तः सधुराश्चरनतः ॥
अन्यो अन्यस्मै वल्गु बदन्त ।
एत सध्रीचीनान् वः सम्मन सस्कृणोभि ॥५॥
समानी प्रया सहं वोडन्नभागः
समाने योक्त्रे सह नो मुनज्मि ।
सम्यचोऽग्नि सपर्यतारा नाभिमिवामितः ॥६॥
सध्रीचीनान् वः सम्मन सस्कृणो
म्येक सुषीन्तसंवननेन सर्वान् ।
देवा इवामृतं रक्षमाणाः
सायं प्रातः सौमनसो वो अस्तु ॥७॥

(अथर्ववेद 3/30)

मानव समाज की सारी जातियों के समस्त वर्गों के नर नारियों को लक्ष्य करके ऋषि कहते हैं कि,—"मैं इस प्रकार अग्नि (विश्वदेवता) की सेवा करता हूँ, जिससे तुम सबके हृदयों में सम्यक मिलन हो, मनों में सम्यक् मिलन हो, और द्वेष भाव दूर हो जाय। गाय जिस प्रकार अपने नवजात बछड़े के प्रति आकृष्ट होती है, तुम भी उसी प्रकार एक दूसरे के प्रति आनन्दपूर्वक आकृष्ट हो जाओ ॥1। पुत्र पिता के कल्याण व्रत का अनुसरण करें, माता के साथ एक मना हो जाय, स्त्री मधुमती पाक् के द्वारा स्वामी के चित्त को शान्तिमय करें ॥2॥

भाई-भाई से द्वेष ने करे, बहन-बहन से द्वेष न करे, सब के सब एक लक्ष्य साधन में एक व्रत पालन में सम्मिलित होकर, सुभद्र वाक्य से परस्पर सम्भाषण करें ॥3॥

जिस प्रकार 'ब्रह्म' या 'ईश्वर' भावना के बल से, देवगण परस्पर विच्छिन्न नहीं होते, कोई किसी से विद्वेष नहीं करते, सारे मनुष्यों के लिये, उसी प्रकार एक मति का सम्पादन करने वाले सम्यक ज्ञान को उत्पन्न करने वाली ब्रह्मभावना की विधि प्रणयन करके, मैं तुम्हारे घर-घर में प्रतिष्ठित करता हूँ ॥4॥

एक मना होकर, ज्येष्ठ-कनिष्ठ नियम के अनुसार, एक लक्ष्य साधन के उद्देश्य से प्रत्येक मनुष्य अपने-अपने कार्यभार को ग्रहण करें। परस्पर विच्छिन्न न होओ, परस्पर प्रिय सम्भाषण करते हुए अग्रसर होओ। मैं तुम लोगों को एक लक्ष्य में निबद्ध दृष्टि तथा एक मना होने के लिये आह्वान करता हूँ ॥5॥

एक पौसले में तुम सब जल पियो, एक ही अन्नसत्र में भाग करके अन्न भोग करो। मैं तुम सब को एक ही स्नेह-रज्जु में एकत्र, सम्बन्धित करता हूँ। एक ही लक्ष्य से आबद्ध होकर तुम सब अग्निदेव की परिचर्या करो। रथ चक्र के 'अरे' जिस प्रकार एक ही धुरी को केन्द्रित करके अपना-अपना कार्य करते हैं, तुम सब भी उसी प्रकार से एक ही सुमहान् आदर्श से अनप्राणित होकर, एक ही परम देवता को जीवन के केन्द्र में सुप्रतिष्ठित कर, अपने-अपने व्रतों का सम्पादन करते हुये उनकी सेवा करो ॥6॥

एक संवनन अर्थात् साम्य साधक स्तोत्र के द्वारा मैं तुम सब के एक लक्ष्य के साधन में एक मना करता हूँ। सब एकात्र भोजी बनो, स्वर्ग के अमृत की रक्षा में जिस प्रकार सारे देवता एकमना होते हैं, उसी प्रकार अखण्ड मानवता के आदर्श की रक्षा में तुम सब में रात-दिन निरन्तर एकमत्य प्रतिष्ठित रहो ॥7॥

ॐ शान्ति : ॐ शान्ति : ॐ शान्ति :

गाँधी-गुरू गोपाल कृष्ण गोखले

ओउम दन्त सिंह(उपाध्यक्ष)
यू०पी०पी०यू०सी० एल

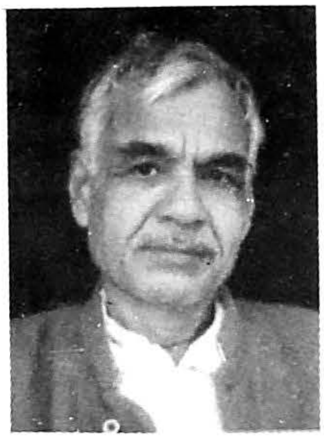

9 मई 1866 को महाराष्ट्र के रत्नागिरि में एक तेजस्वी ब्राह्मण माता-पिता के, अति तेजस्वी पुत्र के रूप में अवतरित हुये गोपाल कृष्ण, अपने बाल्यकाल, अपनी प्राथमिक शिक्षा और अपने जीवन के चौदहवें बसन्त पूर्ण करते ही विवाह के पवित्र बन्धन में बँध गये। वर्ष था 1880 का। 1884 में एलफिंस्टन कालेज बम्बई से स्नातक उपाधि प्राप्त कर फर्ग्युसंन कालेज पूना में ही इतिहास एवं अर्थशास्त्र के प्राध्यापक नियुक्त हुये, दुर्भाग्यवश इनकी पत्नी भी स्वर्गवासी हो गई। सन् 1886 में 'डेकन एजूकेशन सोसाइटी' के जीवन सदस्य बने। 1889 में इनका पुनर्विवाह हुआ। 1888 में महादेव गोविन्द रानाडे तथा 1896 में महात्मा गाँधी से प्रथम साक्षात्कार हुआ। 1899 में बम्बई विधान सभा के सदस्य चुने गये। सन् 1902 में मात्र तीस रुपये (30 = 00) की पेंशन लेकर फर्ग्युसन कालेज के प्रिंसिपल पद से अवकाश ग्रहण कर लिया और उसी वर्ष 'इम्पीरियल लेजिस्लेटिव कौंसिल' के सदस्य चुने गये। 1904 में सी०आई०ई० की उपाधी मिली, जिसे 1914 में वापस कर दिया। 1905 में 'सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी' की स्थापना किया, 1905 में ही तमाम विरोध के बावजूद कांग्रेस के सभापति चुने गये। 1912 में दक्षिण अफ्रीका की समस्या सुलझाने गाँधीजी के आग्रह पर दक्षिण अफ्रीका गये और 19 फरवरी 1915 को मात्र 49 वर्ष की आयु में भारत के इस महान् सुपुत्र को शरीर त्याग देना पड़ा।

यद्यपि श्री गोखले 1889 में, लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक के साथ कांग्रेस में प्रविष्ट हुये, किन्तु गोखले पर श्री महादेव गोविन्द रानाडे का ही प्रभाव था। तिलक की भाँति वे कभी भी गरम दलीय न हो सके, किन्तु ये अपने विचारों से पूर्ण तेजस्वी, और इसी तेजस्विता और निर्भीकता से वे उसे व्यक्त भी करते थे। 'नमक कर' पर दिये गये अपने ऐतिहासिक भाषण में उन्होंने बड़े ही तथ्यपूर्ण और तेजस्विता से ओतप्रोत वक्तव्य में बताया कि किस प्रकार एक पैसे के नमक की टोकरी सरकारी गलत नीति के कारण पाँच आने में बिकती है।

गोखले की देश सेवा का प्रारम्भ भी श्री रानाडे की एक सार्वजनिक सभा से प्रारम्भ हुआ। अति संयत, व शिष्ट भाषा श्री रानाडे से, एवं सम्मोहक व्यक्तित्व के धनी गोखले ने तथ्यात्मकता एवं विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण श्री जी० वी० जोशी के संसर्ग में प्राप्त किया था।

भारतीय अर्थनीति की जाँच के लिये 1896 में 'बेल्वी कमीशन' बैठाया गया था, जिसमें अनेक लोग गवाही के लिये इंग्लैण्ड बुलाये गये थे। चूँकि श्री रानाडे और जोशी दोनों ही नही जा सकते थे, इसलिये श्री गोखले को ही गवाही के लिये भेजा गया। इस प्रथम परीक्षा में ही वे पूर्ण रूप से सफल रहे। इसीं समय पूना में प्लेग फैला, इसका समाचार इंग्लैण्ड में गोखले को मिला। ब्रिटिश सरकार द्वारा सैनिकों की मदद से जबर्दस्ती लोगों को, उनके घर से अति निर्दयता पूर्वक भगाया जा रहा था। इसी बात को, श्री गोखले ने इंग्लैण्ड के समाचार पत्रों में स्पष्ट किया, परिणामत; वहाँ की संसद में उबाल आ गया, फलस्वरूप भारत लौटने पर उन्होंने, श्री रानाडे के परामर्श पर अपनी भूल स्वीकार की।

सन् 1901 में श्री रानाडे का देहान्त हुआ और 1902 में श्री गोखले इम्पीरियल लेजिस्लेटिव कौंसिल के सदस्य चुने गये। सदस्यों को उन दिनों केवल बहस करने का ही अधिकार प्राप्त था, इन सीमाओं की वर्जना के रहते हुये भी श्री गोखले अत्यन्त तेजस्विता एवं निर्भीकता के साथ सारी संवैधानिक मर्यादाओं का पालन करते हुये, अपनी तथा अपने देश की बात खुलकर सरकार के समक्ष रखते थे। वे अपने युग के 'सर्वश्रेष्ट संसदीय व्यक्तित्व' (पार्लियामेंटोरियन) माने गये हैं। श्री गोखले अपने सामाजिक व राजनैतिक जीवन एवं विचारों में पूर्ण आदर्शवादी और मर्यादावादी होते हुये भी स्पष्ट थे, इसीलिये शासकों के साथ व्यवहार करते हुये, वह कभी भी अतिवादी या असंभववादी दृष्टिकोण नहीं अपनाते थे, जिसके कारण उनके विरोधी उन्हें समझौतावादी कहा करते थे। इसका मूल कारण यह था कि वह वैधानिक प्रगति के द्वारा ही अपने देश एवं समाज की कल्याण कामना करते थे। क्रान्ति में उनका विश्वान नहीं था। उन्नति एवं समृद्धि के लिये वे सामाजिक और राजनैतिक शान्ति व व्यवस्था को अनिवार्य मानते थे। इसीलिये उनके समकालीन लोकमान्य तिलक और लाला लाजपत राय से उनकी वैचारिक मतभिन्नता प्रकट होती रहती थी। उनके समकालीन, असन्तुलित कांग्रेसी उन्हें दकियानूसी, समझौतावादी या 'नरम-दल' का स्तम्भ कहते थे। उधर विदेशी शासक उनकी प्रखर व्याख्यान शैली एवं शिष्ट अभिव्यंजना को तथ्यात्मक आक्रमण और उग्र मानते थे। सम्भवत: अपने युग में उन पर दोनों ही ओर से, खुलकर प्रहार किया जाता रहा, किन्तु जिस प्रकार बारम्बार वह शासकों को वैधानिक तरीके से अपनी बात समझाते थे, उसी प्रकार समकालीनों को भी उत्तेजना रहित रूप से समझाने की चेष्टा करते थे।

प्रसिद्ध 'मार्ले-मिण्टो सुधार' में अकेले गोखले का बहुत बड़ा हाथ था। तत्कालीन राजनैतिक चेतना को देखते हुए, गोखले की 'स्वराज्य'

कल्पना 'डोमिनियम' जैसी थी, किन्तु लार्ड कर्जन की प्रतिगामी नीतियों से वे क्षुब्ध हो गये। बंग-भंग, कलकत्ता कॉर्पोरेशन के अधिकारों में कमी, कार्य सुचारुता के नाम पर विश्वविद्यालयों पर सरकारी अफसरों का अवांछित नियंत्रण, शिक्षा की उत्तरोत्तर व्ययशीलता तथा आफीशियल सेक्रेट्स ऐक्ट आदि नीतियों के कारण उन्हें कहना पड़ा कि—

"मैं तो अब इतना ही कह सकता हूँ कि, लोकहित के लिये इस वर्तमान नौकरशाही से किसी तरह के सहयोग की आशाओं को नमस्कार है।"

फिर भी परिणामत: वह नरम दलीय ही बने रहे। सन् 1905 में कांग्रेस के उग्रवादी दल ने उन्हें सभापति बनाये जाने का पुरजोर विरोध किया, किन्तु बनारस में होने वाले उस कांग्रेस अधिवेशन के वे सभापति चुन ही लिये गये थे। अपने अध्यक्षीय भाषण में उन्होंने राजनीति शास्त्री के रूप में बहिष्कार का समर्थन यह कहकर किया था कि—

"यदि सहयोग के सारे रास्ते अवरूद्ध हो जायें और देश की लोकचेतना इसके अनुकूल हो तो बहिष्कार का प्रयोग सर्वथा उचित है।"

वर्ष 1905 का वह गौरवशाली समय समाज सेवा के इतिहास का प्रमुखतम कीर्तिमान स्थापित कर गया, जब श्री गोपाल कृष्ण गोखले ने अपने जीवन का सबसे महत्वपूर्ण रचनात्मक कार्य 'भारत सेवक समाज' (सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी) की स्थापना पूना में की। पूना में इसकी स्थापना अत्यंत नैतिक आधार तथा मानवीय धरातल पर हुई, जिसमें सदस्य नाम मात्र के वेतन पर, आजीवन देश सेवा का पूज्यव्रत लेते थे, राइट आनरेबुल श्रीनिवास शास्त्री जैसे अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के राजनीतिज्ञ भी इस संस्था के सदस्य बनने में गौरव की अनुभूति प्राप्त किये। श्री शास्त्री जी कुछ काल तक श्री गोखले के निजी सचिव (प्राइवेट सेक्रेटरी) भी रहे थे।। गोखले महात्मा गाँधी को इस संस्था की सदस्यता देने का विचार कर रहे थे, किन्तु संस्था के सदस्यों में इस बारे में मतभेद हो गये और गाँधीजी इसके सदस्य न बन सके। गाँधी जी, श्री गोखले को अपना 'राजनैतिक गुरू' कहते थे। कालान्तर में गाँधी के 'साबरमती आश्रम' की स्थापना हेतु श्री गोखले ने पूर्ण आर्थिक सहायता देकर, निर्माण समस्या दूर की थी। श्रीमती एनी बेसेण्ट भी 'सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी' से बहुत अधिक प्रभावित हुई और इसी से प्रेरणा प्राप्त कर उन्होंने 'भारत के पुत्र' नामक संस्था की स्थापना की थी।

सन् 1912 ई० में गाँधी जी ने, श्री गोखले से दक्षिण अफ्रीका की समस्या सुलझाने के लिये कहा और वे वहाँ गये। वहाँ की सरकार ने प्रत्येक प्रवासी भारतीय पर तीन पौण्ड का 'कर' लगा रखा था। अधिकांश भारतीय वहाँ पर मजदूरी करते थे, जिन्हें इतना कर चुकाना अत्यन्त कठिन था। श्री गोखले ने वहाँ की सरकार को यह 'कर' समाप्त करने के लिये राजी कर लिया था। शर्त यह थी कि भारतीयों के निष्क्रमण पर रोक लगा दी जाय। जब गोखले भारत वापस लौट आये तब अफ्रीकी सरकार कर हटाने के अपने वादे से मुकर गई। परिणामत: श्री गोखले पर देश में खूब वाक्य प्रहार किया गया, किन्तु श्री गोखले मानते थे कि— "तत्कालीन देश सेवा असफलताओं पर अधिक निर्भर करती है।" लगभग यही स्थिति 'हिन्दू-मुस्लिम' समस्या पर भी हुई। मुसलमानों के लिये 'पृथक निर्वाचन' मानकर उन्होंने भूल की किन्तु तत्कालीन परिस्थितियों और जिस संवैधानिक रीति को वह मानते थे, उसमें क्रान्तिकारी आचरण की संभावना न थी।

अन्तिम दिनों में वह 'पब्लिक सर्विस कमीशन' के सदस्य का काम करने लगे थे। शासकों ने उनसे पूछा कि— "भारत को और क्या राजनैतिक सुविधायें दी जायँ!" पर इसका समुचित उत्तर देने के पूर्व ही 19 फरवरी 1915 में भारत का यह गौरव 'शीतल-रवि' अस्ताचल में सदैव-सदैव के लिये विलीन हो गया।

श्री गोपाल कृष्ण गोखले के राजनीति की छाप बीसवीं शताब्दी में परिपक्व भारतीय राजनैतिक कार्यकर्त्ताओं पर भरपूर पड़ी। महात्मा गाँधी को अपने राजनैतिक भविष्य हेतु 'गुरु' चाहिये था। एक ओर 'तिलक' जैसा 'अपरिमेय-क्षुब्ध-सागर' दूसरी ओर 'सर फिरोज शाह मेहता' जैसा 'तुंग हिमालय' और फिर दोनों के बीच बहने वाली 'सुरसरि की शीतल धारा' गोखले को मान, गाँधी ने उनकी शिष्यता स्वीकार कर ली।

IF IT'S GLASS IT'S US

TRIVENI GLASS LTD.

Regd. Office :
1, Kanpur Road, Allahabad - 212 001, India
Phone : 91-532-2600325/345/347/364
Fax : 91-532-2600450
E-mail : tgl@nde.vsnl.net.in
Website : www.triveniglassltd.com

Gokhale's Public Life

S.S. Ajgaonkar
Secretary Allahabad

It is to be noted that Gokhale was less than 49 years of age when he died. Having regard to his brief public career of 20 years or so, he could attain a great distinction in wide variety of public activities.

During his brief public career, Gokhale laboured enormously and rendered outstanding service to the national cause. Apart from his activities in connection with problems of Indians in South Africa at the instance of his disciple Mahatma Gandhi who has exhaustively referred to legacy of Gokhale in booklet 'Gokhale my Political Guru'. Gokhale's work in the cause of education and his labours in connection with grant of successive installment of political reform was unsurpassed. Gokhale greatly distinguished himself during the public life of undivided country (India), by his Parliamentary work. He was for 15 years a member of the Imperial Legislative Council and during all this time made a tremendous impression by dint of his exceptional Parliamentary abilities. His budget speeches were regarded as classics of economic analysis and exposition and complete mastery of complexities of Indian economics and finances. He was at the same time capable of masterly and felicitous presentation of facts, figures and arguments. Gokhale's criticism of the budget in the Imperial Legislative Council was referred to as an annual public event of considerable importance. Prof. V.G. Kale in his History and Political Economy in the volume of Gokhale and Economic Reforms, refers to Gokhale controversing position of Sir. Edward Law and Lord Curzon regarding, the economic condition of the people of India in Supreme Legislative Council Delhi. During Gokhale's absence due to illness in the Imperial Legislative Council in 1913 and 1914, when the budget was discussed, then the Finance minister observed during the debate that the discussion was like "Staging Hamlet without the Prince of Denmark". Late Lord Curzon with whom Gokhale frequently had occasion to cross swords, paid the most handsome tribute to Gokhale's Parliamentary capacities. "In fact he was the leader of opposition" said Lord Curzo and in that capacity I often had to suffer the weight of Mr. Gokhale's blows. I have never met a man of any nationality more gifted with Parliamentary capacities. Mr. Gokhale would have certainly obtained a position of distinction at any Parliament in the world, even in the British House of Commons. Gokhale was undoubtedly far and away the greatest Parliamentarian that the country has produced so far.''

Gokhale's life has lessons to teach legislators that Gokhale, the first leader of opposition in Indian Legislative History battered his wits against stonewall of an irremovable imperial bureaucracy. Even so he never departed from grace or decorum or the courtesy of debate or in any way compromised the dignity of house that he had the honour to belong to and always insisted morality in Politics. To quote Gandhiji "Gokhale seemed to me all I wanted a political worker, pure as crystal, gentle as a lamb, brave as a lion and chivalrous to a fault. He was and remains for me, the most perfect man in the political field." What is the moral of Gokhale's life and what legacy he has left? In his last words to members of the Servants of Indian Society who were present besides his death bed (Presidents bungalow in campus) "Don't waste your time in writing a biography or setting up statues but pour your soul in the service of India."

Gokhale belonged to a generation, which has already disappeared with its traditions and great culture. It is worth thinking whether the Institutions like Servants of Indian Society founded by Gokhale and others and

good work done by them could continue for ever, when it has lost utility in the context of present day pattern of functioning and prevailing situation.

End of an Era

Gokhale expired on 19th February 1915 at the age of 49. His mortal remains were kept in the hall of Presidents bungalow. It is recorded that when Gokhale was lying in semi-comatose stage members surrounding his bed observed lips of Gokhale were quivering. His colleague G.K. Deodhar bowed down and uttered to his ears not to worry about the Society. They would carry forward his mission. With faint smile Gokhale departed. News of Gokhale death spread in the city like wild fire. Public from every strata rushed to the Society's campus to take last 'Darshan' of departed Mahatma. Reported 20,000 persons assembled in the campus. Mrs. Patwardhan (Age 95) once narrated to the Secretary during S.I.S. Annual Day Gathering that Maharshi Kare brought to the Society campus two-bus-load immates of his Ashram to take last 'Dharshan' of Mahatma Gokhale. She was one among them still surviving. Fifty Thousand citizens assembled at Onkareshwar to give farewell to the departed leader. Lokmanya Tilak in his stirring funeral oration gave tributes to Gokhale's immense contribution to the nation. It was reported that the meeting which was scheduled to commence at 5.30 p.m., public started arriving from 3 p.m. and by 4 p.m. entire Darbar Hall was crowded and hundreds including large number of ladies were unable even to find standing accommodation. To avoid their disappointment another meeting was simultaneously held in open air in adjoining Horniman Circle (named after Englishman who stubbornly supported Indian aspirations for freedom through Bombay Cronicle, popular English daily edited by him). Lord Willington who presided over the meeting held at Town Hall said "The great gathering was wonderful testimony of the esteem and regard in which Gokhale was held by all classes of both the European and Indian Communities." Among principle speakers at Darbar Hall (Town Hall) were H.H. Aga Khan, Phirojsha Mehta, M.A. Jinnah, Narotam Morarji, Sir Cowasji Jehangir, Dr. Stanley Reed, Jehangir Petit, Sir Dorabji Tata, Chimanlal Setalvad, entire cream of Bombay's intellectual life, industrial magnets and legal luminaries. In the simultaneously held meeting at Horniman Circle Sir Narayan Chandavarkar presided. Speakers were Sir Mirza, Sir Chunilal Mehtra, Fazalbhoy Chinnai, S. Natarajan (editor of Social Reformer) and Sir R.P. Masani, eugolised the services of Gokhale to the country. Sir Narayan Chandavarkar expressed his grief over great national loss. "Gokhale stood before the civilized world as a symbol of the country's progress and spirit of nationality and the prominent place which the motherland was destined to take in the history of the nations, Gokhale sacrificed his life for his country. The whole nation was in tears. Their sorrow was of deepest character and prevailed not only in the every part of the country and every part of British Empire where he was known and made his mark by his powerful advocacy of the interest of the country. In talents he equated best statesman in the British Empire. His premature death was most lamentable. Mr. Gokhale was a great orator. His unselfishness and his heroic self sacrifices in the interest of the country were unparalleled. Mr. Gokhale taught them to serve the country". Sir Chandavarkar spoke of Gokhale's mission and the lesson, which his life taught and proceeded to remark that "if Gokhale's noble example proved as an incentive to future generation to follow in his foot steps, he would not have lived in vain. Gokhale's sole ambition was to produce healthy nationality in India."

जागरण के अग्रदूत राजा राम मोहन राय

संदीप मिश्र 'चंचल'

वैसे तो वे वैष्णव थे, आस्थावान्, वैष्णव, भगवान विष्णु, लक्ष्मी और अन्य देव मूर्तियों के पूजक, वर्ण एवं संस्कारों में पूर्ण विश्वास। तत्कालीन बंगाल और आज के 'बंग्लादेश' में स्थित राधानगर ग्राम में श्री रामकान्त राय पत्नी तारिणी देवी के साथ अपनी जमींदारी का कार्य देखते, सम्मानित और सुसम्पन्न परिवार था। लोग बताते थे कि रामकान्त राय के पिता ढाका के नवाब के यहाँ कार्य करते थे, मुस्लिम शासन था, किन्तु आस्थावान् वैष्णव होते हुए भी, उन्होंने अपनी कार्यकुशलता से नवाव को मुग्ध कर लिया, प्रसन्न नवाब ने, इन्हें पुरस्कार स्वरूप 'जमींदार' का रुतवा और 'राय' की सम्मानजनक उपाधि प्रदान की। तभी से उनके वंशज अपने नाम के आगे 'राय' उपाधि लगाने लगे। उन्हीं रामकान्त राय और तारिणी देवी के पुत्र रूप में, सन् 1792 ई० में 'जागरण के अग्रदूत' राजा राम मोहन राय का जन्म हुआ।

राम मोहन, बाल्यावचस्था से ही प्रतिदिन अपने माता-पिता को बड़े प्रेम से, मूर्ति पूजन करते देखते, उनका सुकुमार बालमन बड़े आश्चर्य से मूर्तियों को निहारता, कदाचित् वह अपने अन्तर्मन से पूछा करता कि, क्या यही भगवान है? क्या यही ईश्वर है? क्या यही सबका नियामक है? किन्तु संशय जिज्ञासा और आश्चर्य का समाधान न हो पाता था।

उन दिनों देश में चारों ओर मुसलमानों का शासन था, सारा राज-काज 'फारसी' में होता था, 'अरबी' मुसलमानों की 'मजहबी' भाषा थी। छोटी या बड़ी किसी भी प्रकार की नौकरी के लिये 'अरबी' और 'फारसी' का ज्ञान अनिवार्य होता था। अतएव थोड़ा बड़ा होने पर राम मोहन को भी 'अरबी' 'फारसी' की शिक्षा से विद्याध्ययन प्रारम्भ कराया गया, शिक्षण हेतु, वे एक मौलवी साहब के सुपुर्द हुये, उस समय उनकी अवस्था पाँच वर्ष की हो चुकी थी। मेधावी राम मोहन ने नौ (9) वर्ष की आयु प्राप्त करते-करते 'अरबी' 'फारसी' और 'बंगला' की अच्छी खासी योग्यता प्राप्त कर ली।

नौ वर्ष की अवस्था में 'अरबी', 'फारसी' की उच्च शिक्षा हेतु राम मोहन को पटना भेजा गया। तीन वर्ष के ही अध्ययन काल में उन्होंने 'सूफी' कवियों, 'कुरान-शरीफ' और अन्यान्य ग्रन्थों का अच्छा अध्ययन कर विशेषज्ञता प्राप्त कर ली। कुरान के 'एकेश्वरवाद' और 'सूफियों' के 'मानव-प्रेम' ने उन पर ऐसा प्रभाव डाला कि वे आडम्बर विहीन, शुद्ध मन से, 'बन्धुत्व' व 'एकेश्वरवाद' में पूर्ण निष्ठा प्रकट करने लगे।

बारह वर्ष की अवस्था प्राप्त राम मोहन, 'अरबी' 'फारसी' और 'बंगला' में तो पूर्ण पाण्डित्य प्राप्त कर चुके थे, किन्तु अपने पैतृक धर्म 'हिन्दू-धर्म' और 'हिन्दू-धर्मशास्त्रों' के बारे में अनभिज्ञ जैसे ही थे। इस कमी की पूर्ति हेतु 'काशी' भेजा गया। चार वर्ष तक 'काशीवास' कर राम मोहन ने वेद, उपनिषद्, स्मृतियों, पुराणों एवं दर्शन ग्रन्थों का विशद अध्ययन कर पाण्डित्य प्राप्त किया। अब 'दर्शन ग्रन्थों' के प्रभाव से राम मोहन की आस्था 'एकेश्वरवाद' से हटकर 'ब्रह्म' पर केन्द्रित हो गई और वे 'ब्रह्म' के उपासक हो गये।

'उपनिषदों' और 'दर्शन ग्रन्थों' के अध्ययन और प्रभाव से अपने अध्ययन काल में 'काशी' में निवास के समय ही उन्होंने 'मूर्ति-पूजा' के विरुद्ध एक पुस्तक की रचना की, पुस्तक के प्रकाशित होते ही, काशी के पण्डितों में 'भूचाल' आ गया। परिणामतः पुस्तक के प्रति उत्पन्न विरोध इतना उग्र हो उठा कि राम मोहन को 'काशी वास' त्याग कर अपने घर लौट आना पड़ा। घर आने पर पिता रमाकान्त राय ने भी पुस्तक देखी, पिता बहुत कुपित हुये, किन्तु राम मोहन अपनी आस्था और विचारों पर 'वज्रवत' दृढ़ रहे। पिता के कोधातिरेक और विरोध के उत्तर में उन्होंने कहा—"ये मेरे अपने विचार हैं, मैं किसी की प्रसन्नता के लिये अपने आन्तरिक विश्वास और श्रद्धा का परित्याग नहीं कर सकता।" परिणामतः पिता और भी अधिक कुपित हो उठे और 'किशोर' राम मोहन को घर से निकाल दिया।

घर वहिष्कृत राम मोहन कुछ समय तक तो इधर-उधर भटकते रहे और भारत-परिभ्रमण करते रहे, किन्तु उनका 'ज्ञान-पिपासु' मन पुनः 'बौद्ध-धर्म ग्रन्थों' के अध्ययन हेतु व्याकुल हो उठा और वे तिब्बत प्रयाण कर गये। अति श्रमसाध्य यात्रा के उपरान्त तिब्बत में बड़े कष्ट उठाकर उन्होंने 'बौद्ध-ग्रन्थों' का अध्ययन किया, किन्तु उन्होंने पाया कि तिब्वतियों का जीवन, उनका समाज, उनके रीति-रिवाज 'बौद्ध-ग्रन्थों' की आचार संहिता के विपरीत हैं। उनमें बहुत से मतमतान्तर, बहुत सी कुरीतियाँ और अन्धविश्वासों ने डेरा जमा लिया है। इससे व्यथित राम मोहन ने धर्म के नाम पर फैले 'पाखंडवाद' पर तिब्वत में कई सभायें की, कई व्याख्यान दिये और कुरीतियों के विरोध में आवाज उठाई। फलस्वरूप तिब्वती उनके प्राणों के ग्राहक बन उठे, 'अहिंसा' के उपासक 'हिंसा' पर उतारू हो उठे, और निश्चित ही उनकी हत्या कर दी जाती यदि, तिब्वत की कुछ नेक,

भावुक और सौम्य हृदय की महिलाओं ने उनको छिपा कर प्राण रक्षा न की होती।

इधर राय के पिता को जब उनके तिब्बत प्रवास और वहाँ प्राण-संकट का समाचार ज्ञात हुआ, तो उनका हृदय पुत्र-प्रेम से छलछला आया, वे स्वत: तिब्बत गये और काफी समझा-बुझाकर उन्हें वापस घर ले आये, किन्तु आँधी जब उठती है तो छोटे-मोटे तिनकों, कूड़े-करकटों, निर्बल पेड़-पौधों को उखाड़-पछाड़ कर उड़ा ले जाती है। इसी प्रकार जब हृदय में विशुद्ध ज्ञान का प्रकाश फैलता है, तो मनुष्य जाति-पाँति, रंग, ऊँच-नीत, अमीर-गरीब के भेदभाव को भूलकर संसार के सारे प्राणियों को प्यार बांटने लगता है, 'विश्व-बन्धुत्व', 'वसुधैव-कुटुम्बकम्' के प्रति आस्थावान् हो, समाज की उन सभी कुरीतियों, कुसंस्कारों पर कठोर प्रहार करता है, उन्हें तोड़-पोड़ कर नष्ट कर देने का प्रयास करता है, जो मनुष्य को मनुष्य से दूर करते हैं। उन्हें प्रकाश के अजस्र श्रोत से नहला देना चाहता है। राम मोहन राय के हृदय में विशुद्ध ज्ञान की किरणें आलोकित हो उठीं थी, वे हिन्दू-मुस्लिम इसाई सबको अपना भाई समझते थे। वे उन कुरीतियों और रूढ़ियों से, जो समाज में बैर, विरोध, विषमता और कदाचार का विष पैदा कर रही थीं, बड़े ही साहस के साथ लड़ने के लिये खड़े हो गये। उन्होंने समाज को नई दिशा की ओर ले जाने के लिए, नूतन-ज्ञान के प्रकाश-पुंज से नहलाने के लिये, प्रोत्साहन देना प्रारम्भ कर दिया।

घर पहुँचकर राय पुन; अध्ययन में संलग्न हो गये, धर्म के नाम पर फैली कुरीतियों का खंडन करने लगे। मूर्तिपूजा का विरोध और जाति-पाँति, छुआ-छूत की निन्दा करने लगे, उनके विचारों के कारण लोग उन्हें 'नास्तिक' और 'क्रिस्तान' कहने लगे, उनकी निन्दा होने लगी। उन्होंने स्वयं इस सम्बन्ध में एक स्थान पर लिखा है—

"मेरा विचार कभी भी आक्रमण करने का नहीं था, और न ही मैं हिन्दू धर्म का विरोधी हूँ। धर्म के नाम पर जो बुरी बातें प्रचलित हैं, मेरा 'वार' उन्हीं पर होता है।"

परिणामत: और तो और स्वयं उनके पिता भी उनकी इस 'धर्म-विरोधी' विचारों को सहन न कर सके, कुपित पिता ने पुन: दूसरी वार भी उन्हें घर से निकाल दिया।

दूसरी बार घर से निकाले जाने पर राम मोहन ने पुन: काशी को प्रस्थान किया, काशी में ही उन्होंने विवाह किया, एक पुत्र पैदा हुआ, जिसका नाम रखा गया 'राधा प्रसाद', उन्हीं दिनों उन्हें पिता के स्वर्गवासी हो जाने का समाचार प्राप्त हुआ, और वे पुन: घर चले आये।

घर आने पर इनके कुटुम्बीजनों और विरोधियों ने 'पितृ-धर्म' से च्युत होने, 'विधर्मी' और कलंकी होने का आरोप लगाते हुये, इनकी माता तारिणी देवी को भी इनके विरूद्ध कर, उत्तराधिकार और सम्पत्ति की दावेदारी से बेदखल करने हेतु, मुकदमा चलवा दिया। राम मोहन की माता ने अपने पुत्र के ऊपर यह मुकदमा दायर किया कि 'वे पुत्र का धर्म छोड़ चुके हैं, उन्हें पिता का उत्तराधिकारी नहीं माना जाना चाहिये।'

राम मोहन राय ने स्वत: अपने मुकदमें की पैरवी की। उन्होंने वेदों, शास्त्रों और उपनिषदों से प्रमाण देकर यह सिद्ध किया कि, वे जिन बातों का प्रचार कर रहे हैं, वह 'हिन्दू-धर्म' के विपरीत नहीं है, अत: यह कहना बिल्कुल गलत है कि वे 'पुत्र-धर्म' से च्युत हो गये हैं। उनके विद्वतापूर्ण तर्कों का प्रभाव न्यायधीश पर पड़ा और न्यायालय का निर्णय राम मोहन के पक्ष में गया, किन्तु अपने पक्ष में निर्णय हो जाने के उपरान्त भी उन्होंने सारी सम्पत्ति अपनी माता तारिणी देवी को सौंप दिया।

इधर भौतिक सम्पत्ति विहीन राम मोहन ने अपने विचारों एवं जन जागरण में सहायक होने हेतु सन् 1805 में सरकारी नौकरी कर ली। उनकी प्रथम नियुक्ति 'रंगपुर' में 'टैक्स-कलेक्टर' के पद पर हुई। राय बड़ी ही समझदारी और दूरदर्शिता से नौकरी करते, पदोन्नति लेते कुछ ही दिनों में अपने विभाग के सबसे बड़े अधिकारी 'सरिश्तेदार' बन गये। राय ने तेरह वर्षों तक सरकारी नौकरी की। सन् 1813 में उन्होंने नौकरी से त्यागपत्र दे दिया और घर चले आये।

इनका 'जागरण' अभियान चलता रहा। फलत: पुन: इन्हें 'नास्तिक' और 'विधर्मी' के सम्बोधन और प्रखर विरोध की भयंकर ज्वाला का सामना करना पड़ा। अब पुन: अपना पैतृक घर छोड़ दिया और दूर अन्य स्थान पर अपना अलग घर बनाकर स्वतन्त्र रूप से रहने लगे। यहीं उन्होंने 'बाइबिल' का गम्भीर अध्ययन किया। अब राम मोहन राय ने सभी प्रचलित धर्मों के गहन अध्ययन के उपरान्त एक 'सत्य' की खोज की। उनका वह 'सत्य' था। 'ब्रह्म' 'मानव जाति की एकता'। अब वे एक महान् पण्डित के रूप में 'ब्रह्म' की उपासना और मानव जाति की एकता हेतु, वार्तालाप, वादविवाद, स्कूल-कालेजों की स्थापना और 'सभा' विधि से जन-जागरण का मन्त्र फूंकने लगे।

सन् 1828 के कलकत्ता प्रवास में 'ब्रह्म समाज' की स्थापना, 'ब्रह्म- मन्दिर' का निर्माण, और 'ब्रह्म समाज' के प्रचार हेतु विभिन्न 'पत्र-पत्रिकाओं' का प्रकाशन कर अपने संकल्प को मूर्त रूप देने लगे। उनके निम्नलिखित मुख्य निर्देश व सिद्धान्त थे—

1.निराकार ब्रह्म की उपासना 2. मूर्तिपूजा न करना।
3. जाति-पाँति न मानना 4. पशु बलि न करना।
5. किसी भी सम्प्रदाय या धर्म की निन्दा न करना इत्यादि।

एक दिन, राय साहब ने, अपने एक निकटवर्ती रिश्तेदार की विधवा को, जिसकी अवस्था बहुत कम थी, पति की मृत्यु के उपरान्त घरवालों द्वारा उसे जबरदस्ती चिता पर जलाने, स्त्री द्वारा उसका चीख-चीख कर विरोध करने, रोने और बचाने की गुहार लगाने पर भी, किसी सहायता के न मिलने का ऐसा हृदय द्रावक दृश्य देखा कि उनकी आत्मा काँप उठी। उन्होंने उसी समय संकल्प लिया कि चाहे प्राण ही क्यों न गँवाने पड़ें वे इस क्रूर प्रथा को बन्द कर ही दम लेंगे। यह प्रथा वैसे तो सम्पूर्ण भारत में थी, किन्तु बंगाल में इसका ज़ोर अधिक था।

उस समय भारत के गवर्नर जनरल 'लॉर्ड विलियम बेंटिक' थे। राय साहब ने 'सती-प्रथा' के विरुद्ध तीव्र 'जन-आन्दोलन' छेड़ दिया। सभा, पत्र-पत्रिका, भाषण लेख और विरोध में गवर्नर जनरल को विभिन्न आवेदन-पत्र और संवादों द्वारा प्रभावित करने का अभियान, तीव्र से तीव्रतर होता गया। परिणामतः वे कानून बनवाकर इस कुप्रथा को सदा-सदा के लिये समाप्त करवाने में सफल हुये।

सती प्रथा को बन्द कराकर, राय साहब वह 'प्रथम महापुरुष' बने, जिन्होंने स्त्रियों के कल्याणार्थ प्रगतिशील कदम उठाया। अब उन्होंने 'विधवा-विवाह', 'स्त्री-शिक्षा' और 'स्त्री-जागरण' के लिये 'जन-चेतना' और पाठशालाओं के माध्यम से कार्य करना प्रारम्भ कर दिया, जिसमें उन्हें पूर्ण सफलता प्राप्त हुई।

राय साहब के कल्याणकारी व्यक्तित्व, उनके पांडित्य और सेवाओं से सम्पूर्ण देश में उनकी यश पताका फहराने लगी, किन्तु उनका हृदय भारत की दीन दशा देख कर रोता रहता था। उन्होंने इंगलैण्ड जा कर 'ब्रिटिश-पार्लियामेण्ट' को भारत की दुर्दशा और दुःख गाथा सुनाने का निश्चय किया। प्रश्न यह था कि वे विलायत जायें तो कैसे जायें, किस प्रकार जायें? इन्हीं दिनों दिल्ली के मुगल बादशाह 'बहादुर शाह ज़फर' ने उन्हें दिल्ली बुलाकर, 'राजा' कि उपाधि देकर और अपना 'राजदूत' बनाकर उन्हें विलायत भेजने का निश्चय किया।

सन् 1833 में वे विलायत पहुँचे। वहाँ पार्लियामेण्ट सहित पूरे इंग्लैण्ड में अपने व्याख्यानों से उन्होंने धूम मचा दी। उनके भाषणों का अंग्रेजों पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ा। फलस्वरूप पार्लियामेण्ट में बहुत से ऐसे कानून बने जो भारत हितार्थ थे। कुछ दिनों बाद राजा राम मोहन राय इंग्लैण्ड से फ्राँस चले गये, वहाँ काफी परिभ्रमण के उपरान्त वापस इंग्लैण्ड लौट आये। कुछ ही समय में वे पुनः इंग्लैण्ड से 'ब्रिस्टल' रवाना हो गये वहीं 'ब्रिस्टल' में 9 सितम्बर 1833 का वह काला दिन आ ही गया, जब वे अपने वतन से दूर, सात समन्दर पार, भारतीय समाज के 'जागरण' का वह 'अग्रदूत' अपनी 'पंच भौतिक' नश्वर काया को 'पंचभूत' में ही छोड़कर, अपने उपास्य 'ब्रह्म' में विलीन हो गया।

ब्रिस्टल में बनी उनकी समाधि पर आज भी दर्शनार्थी जाते हैं, जहाँ समाधि पर बड़े-बड़े अक्षरों में अंकित है—

"यहाँ सोया है संसार का वही पुरुष, जो मानव एकता में अटूट विश्वास रखता था।"

'अमन के फरिश्ते' को गये 192 वर्ष हो गये - आडंबरों, जातीय बैर विरोध, भाषा, सम्प्रदाय, नारी उत्पीड़न, अशिक्षा आदि कुरीतियों पर उनके द्वारा किये गये 'वज्र-प्रहारों' के परिणामस्वरूप समाज में उनके दिखाये मार्ग पर चलकर, सभी सामाजिक बुराईयों को मिटाने के संकल्पव्रती, उनके अनुयायी, भगीरथ प्रयत्न करने लगे, एक 'मशाल' जो राजा राम मोहन राय ने जलायी, वह जल रही है, जलती रहेगी, अनवरत अहर्निश...।

आदर्श सद्वाक्य

(1) असफलता केवल यह सिद्ध करती है कि, सफलता का प्रयत्न पूरे मन से नहीं हुआ।
(2) अच्छी पुस्तकें जीवन प्रतिमा है, उनकी आराधना से प्रकाश, उल्लास प्राप्त होता है।
(3) अश्लील चिन्तन और लोलुप दृष्टिकोण मानसिक व्यभिचार है।
(4) अधूरे ज्ञान का अहंकार, अपेक्षाकृत अधिक खतरनाक है।
(5) अपना मूल्य समझो, व विश्वास करो कि तुम संसार के पहले महत्वपूर्ण व्यक्ति हो।
(6) अनजान होना उतनी लज्जा की बात नहीं है, जीतनी सीखने के लिए तैयार न होना।
(7) अपने लिए कठोरता और दूसरे के लिए उदारता ही सभ्यता है।
(8) अदालत और पुलिस से बच सकते हैं, परमेश्वर से नहीं।
(9) अपना-अपना करो सुधार, तभी मिटेगा भ्रष्टाचार।
(10) अब तक का इतिहास बताता, मानव है, निज भाग्य विधाता।
(11) आय से अधिक व्यय, तिरस्कार व कष्ट ही देता है।
(12) उन्नति सम्पत्ति से नहीं, सद्गुण और सद्बुद्धि से होती है।
(13) जिसने शिष्टता और सभ्यता नहीं सीखी, उसका सब कुछ सीखना व्यर्थ है।
(14) खोजे सभी जगह अच्छाई, ऐसी दृष्टि सदा सुखदायी।
(15) पहले क्रान्ति दिलों में आती, फिर समाज पर है छा जाती।
(16) परिवार का पालन ही नहीं, निर्माण भी करें।

'भारत रत्न' महर्षि कर्वे

आनन्द कृष्ण द्विवेदी प्रधानाचार्य
रामानुज इ०का० कोहड़ार
इलाहाबाद

बात सन् 1958 की है। बम्बई में देश के बड़े-बड़े नेता, समाज सेवक और विद्वान एकत्रित हुये थे, विशाल पंडाल में भव्य समारोह हो रहा था। वह समारोह था, 'महर्षि कर्वे' के सौवें जन्म दिवस का, प्रधानमन्त्री जवाहरलाल नेहरू अभिनन्दन समारोह में मंच पर विराजमान थे। उनके पार्श्व में कृषकाय, किन्तु अति तेजस्वी धवल दाढ़ी, सर पर धवल टोपी, भावपूर्ण आँखों पर ऐनक लगाये, 'महर्षि कर्वे' विराजमान थे।

प्रधानमन्त्री व्याख्यान देने के लिये खड़े हुए, उन्होंने कहा—"मैं आपको किस मुँह से बधाई दूँ, हम सब लोग तो अवस्था में आपसे छोटे हैं, हमारा बधाई देना क्या शोभा देता है? हम तो आपसे आशीर्वाद लेने एकत्रित हुए हैं। आप हमें आशीर्वाद दीजिए कि, हम उसी लगन से मातृभूमि की सेवा कर सकें, जिसे आपने अपने जीवन में चरितार्थ किया है।"

'महर्षि डॉ० घोडो केशव कर्वे' का जन्म सन् 1858 में कोंकण प्रदेश में रत्नागिरि के अन्तर्गत 'मुरुड' नामक ग्राम में हुआ था। यह 'मुरुड' वही मुरुड था जो मरहठा साम्राज्य के उत्कर्ष के समय चमकता रहता था, प्रकृति की अपूर्व छटा दिन-रात हँसा करती थी, मुरुड में एक से एक पंडित, एक से एक गुणग्य निवास करते थे, पर मरहठा श्री के रूठते ही 'मुरुड' भी उजड़ गया। गरीबी और अशिक्षा के महारोग ने उसे ग्रसित कर लिया। परिणामस्वरूप बुराइयों, कुसंस्कारों और कुमति ने 'मुरुड' को 'राहु' की तरह ग्रस लिया।

बालक कर्वे ने अपने गाँव में की कक्षा चार तक की पढ़ाई पूरी की, अव आगे कहाँ जाय? कोई साधन नहीं? किन्तु बढ़ने की कर्वे की वलवती इच्छा से उन्होंने घर पर ही स्वाध्याय करना प्रारम्भ कर दिया। कुछ ही समय स्वाध्याय में बीता, मिडिल की परीक्षा के दिन आये, 'मुरुड' से एक सौ चालीस मूल दूर सतारा में, जहाँ उस समय दुर्लभ घाटियों, नदी नालों को पार करके ही जाना पड़ता, मिडिल परीक्षा का केन्द्र था। 'कर्वे' के बड़े हठ के बाद उनके कुटुम्बियों ने उन्हें सतारा परीक्षा देने के लिये जाने की आज्ञा दी।

वरसात के दिन थे, अपने ही जैसे चार दुःसाहसी साथियों के साथ कर्वे परीक्षा देने के लिये सतारा चल पड़े। परीक्षा चार दिन बाद ही होने वाली थी। दुर्गम, भयानक, जंगली रास्ता, उफनते नदी-नाले, भयानक खाइयाँ लाँघते, गिरत-पड़ते किसी तरह उन बालकों ने रास्ता काटा और सतारा पहुँच गये, किन्तु परीक्षा ग्यारह बजे से होनी थी और जब वे वहाँ पहुँचे, समय उस वक्त शाम के पाँच का हो रहा था, परीक्षा का समय निकल चुका था। वे व्यवस्थापकों से मिले, किन्तु हाय रे दुर्भाग्य ! व्यवस्थापकों ने उनकी अतिकम उम्र के कारण उन्हें परीक्षा में बैठने की अनुमति नहीं दी, परिणाम, कर्वे पुनः बड़ी कष्टसाध्य यात्रा कर, निराशमन वापस 'मुरुड' अपने गाँव चले आये। दूसरे वर्ष पुनः पैदल 'सतारा' यात्रा कर परीक्षा दी और सफलता प्राप्त किया।

अब आगे? मिडिल पास करने के बाद आगे की अंग्रेजी पढ़ाई कैसे हो? पिता स्वर्गवासी हो चुके थे, वृद्ध माता, एक वड़ा भाई और एक वहन, भयंकर गरीबी, अर्थाभाव; करें तो क्या करें? किन्तु अध्वसायी 'कर्वे' ने जो ठान लिया, सो ठान लिया। चल पड़े 'मुरुड' से बम्बई, किसी प्रकार बम्बई पहुँचे और 'रावर्ट मनी' स्कूल में नाम लिखाकर पढ़ने लगे।

एक सहृदय व्यक्ति के घर के वरामदे में आश्रय ले, 'ट्यूशन' कर, उससे मिले रूपये से अपनी पढ़ायी, भोजन और वस्त्र का प्रवन्ध करते हुये उन्होंने मैट्रिक की परीक्षा उत्तीरण की। अव आगे की पढ़ाई के लिये उन्होंने 'विल्सन'—पुनः एलफिंस्टन कालेज में नाम लिखाया।

बड़े ही परिश्रम व साधना के साथ, अपने एक मित्र 'जोशी' के साथ रहते सवेरे कुछ खा पीकर ट्यूशन पर निकल जाते,पैदल पाँच-पाँच, छः-छः मील दूर जाकर वच्चों को पढ़ाते, फिर कालेज जाते, कालेज से निवास पर और फिर आठ नौ वजे रात तक ट्यूशन, फिर पढ़ाई, रूखा-सूखा भोजन, अध्ययन की अति कष्टसाध्य साधना अनवरत् चलती रही, समय निकलता रहा।

इक्कीस वर्ष की वय में गणित में विशेष योग्यता के साथ कर्वे ने वी० ए० की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली। थोड़ा प्रयत्न किया और 'मराठा हाईस्कूल' में शिक्षण कार्य मिल गया, अव वे शिक्षक हो गये। शिक्षक कर्वे को अपने अध्ययन के कठोर क्षण और उसकी कठिनाइयाँ याद थीं, उन्होंने संकल्प लिया कि—"गरीव वच्चों के लिये शिक्षा सुगम वनायेंगे।" इस

संकल्प की पूर्ति हेतु अपने वेतन के अल्प पैसे को, कौड़ी-कौड़ी जोड़कर उन्होंने कुछ धन बचाया और अपने गाँव 'मुरुड' में एक 'मराठी स्कूल' तथा एक 'मन्दिर' बनवा ही लिया।

कर्वे का विवाह तत्कालीन प्रथा के अनुसार बचपन में ही हो गया था, विवाह के समय उनकी उम्र चौदह और पत्नी की आठ वर्ष थी। सीधी, सादी, किशोरी किन्तु अनपढ़ पत्नी को भी बम्बई लेते गये थे, वहाँ उन्हें भी स्वयं मराठी और अंग्रेजी शिक्षण देकर पढ़ाया। बड़ी ही मितव्ययी और कार्य कुशल महिला थीं वे। खर्चे के लिये प्राप्त रुपये से बचा-बचा कर उन्होंने, अपने अध्यवसायी और 'समाजसेवी व्रती' पति को हजारों रूपये, सामाजिक कार्यों हेतु, समय-समय पर दिया, जिसे कर्वे ने, भाई और माँ को देकर उनके बोझ व जिम्मदारी से अपने आप को मुक्त कर, सारा जीवन समाज सेवा में लगाने का दृढ़ निश्चय कर लिया।

एलफिंस्टन कालेज के इनके सहपाठी रह चुके 'पं० गोपाल कृष्ण गोखले' उन दिनों फर्ग्युसन कालेज पूना में थे। गोखले अपने इस कर्मठ सहपाठी को भूले नहीं थे। उन्होंने बम्बई से 'कर्वे' को 'पूना' आकर अपने साथ काम करने का आमन्त्रण दिया। कर्वे ने आमन्त्रण स्वीकार कर लिया। वे बम्बई से पूना 'फर्ग्युसन क़ाले' आ गये। उस समय गोखले और तिलक आदि समाजसेवी, महाराष्ट्र में 'दक्षिण सेवा समिति' नाम संस्था खोलकर शिक्षा के प्रसार में जुट चुके थे। 'कर्वे' भी इसमें जुड़ गये। वे 'दक्षिण सेवा समिति' के आजीवन सदस्य बन गये। सार्वजनिक, समाज सेवा का कार्य चल पड़ा। इसी बीच इनकी सहधर्मिणी पत्नी की अल्पावधि में रूग्णता में मृत्यु हो गयी।

'कर्वे' जो अब तक पूर्णरूपेण समाज सेवा में लग चुके थे। पत्नी की जिम्मदारी और सहयोग से भी मुक्त हो गये। अब 'कर्वे' का व्यथित मन 'नारी शिक्षा', 'नारी जागरण' और उनके उत्थान हेतु, समर्पित हो गया। उन दिनों 'समाज' में विधवाओं की दशा अति दयनीय थी, लोग उन्हें 'अस्पृश्य' 'दुर्भाग्यशालिनी' और 'घृणित' समझते थे। विधवाओं के दुःख और पीड़ा से 'कर्वे' बड़े व्यथित थे। वे अपना दूसरा विवाह करना तो नहीं चाहते थे, पर समाज में 'क्रान्ति' का श्री गणेश करने के लिये उन्होंने एक 'दृढ़-संकल्प' लिया, उन्होंने अपने एक मित्र की 'विधवा-बहन' से विवाह कर लिया। आँधी आ गई समाज में, कहीं विरोध की 'भयंकर-ज्वाला' और कहीं उत्साह की, 'जागरण' की 'क्रान्तिकारी', कल्याणकारी 'जीवनदायी' प्रकाश रेखा।

पत्नी को लेकर कर्वे अपने गाँव 'मुरुड' चले गये। वहाँ इनके पहुँचने के पूर्व ही इनके इस कथित 'अनाचार' और 'अधर्म' का समाचार पहुँच चुका था। भयंकर विरोध, तिरस्कार, उपहास और घृणा के मध्य गाँव में निवास ही दूभर हो गया, गाँव की पंचायत बैठी। वहाँ माँग उठी कर्वे प्रायश्चित करें। जब तक प्रायश्चित नहीं करेंगे, तब तक इन्हें गाँव में निवास की अनुमति नहीं। सभी ने, गाँव-घर, कुटुम्बी और रिश्तेदारों ने इनका त्याग और तिरस्कार किया। 'कर्वे' का क्रान्तिकारी ह्रदय अपने गाँव के लोगों के अज्ञानता पर विदीर्ण हो उठा उन्होंने प्रतिज्ञा की — "चाहे जितनी विपत्तियाँ झेलनी पड़ें, पर वे समाज से इस अन्धविश्वास, अज्ञानता एवं रुढ़िवादी विनाशक धुँये को विनष्ट करके ही छोड़ेंगे।

कर्वे अपनी पत्नी को साथ लेकर पुनः 'मुरुड' से पूना पहुँचे, जहाँ पहुँच कर संकल्पबद्ध कर्वे 'विधवा-विवाह', नारी जागरण और 'अशिक्षा' उन्मूलन के भगीरथ कार्य में दिन-रात प्रयत्नशील रहने लगे।

31 दिसम्बर 1893 को 'वर्धा' में उन्होंने एक सम्मेलन किया। महाराष्ट्र से बहुत बड़ी संख्या में इस जागरण के समर्थक वहाँ जुड़े। सम्मेलन बड़ा ही सफल रहा। फिर तो कई सम्मेलन हुये और एक लहर सी चल पड़ी। कई विधवा-आश्रम खोले, बालिकाओं, महिलाओं की शिक्षा के लिये कई स्कूल और कालेज खोले। उनके विधवा आश्रम की कई महिलायें तो इतना पढ़ गईं कि उन्होंने स्कूलों, कालेजों में स्वतः शिक्षण कार्य भी करना प्रारम्भ कर दिया।

सन् 1916 ई० में 'कर्वे' ने 'हिंगणे' में एक महिला विश्वविद्यालय की स्थापना की। उनका यह 'महिला विश्वविद्यालय' देश ही नहीं विदेशों में भी, स्त्री शिक्षा संस्थानों में गौरवपूर्ण ही नहीं 'सर्वोच्च' स्थान प्राप्त कर गया। इतना ही नहीं उन्होंने अमेरिका, अफ्रीका हित लगभग पचास देशों में भ्रमण करते हुये 'स्त्री शिक्षा' के संस्थानों, 'नारी जागरण' आन्दोलनों और कार्यों का अवलोकन करने के पश्चात्, अपने 'महिला विश्वविद्यालय' को 'आदर्श विश्वविद्यालय' का रूप देकर, उसमें ऐसी व्यवहारिक दृष्टि एवं प्रणाली का समावेश किया, जो 'नारी उत्थान' के लिये अत्यधिक उपयोगी हो सके। सन् 1958 में कर्वेजी को तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्र प्रसाद ने भव्य समारोह 'भारत-रत्न' की सर्वोच्च उपाधि से सम्मानित किया। उसी वर्ष भारत सरकार के डाकतार विभाग के द्वारा, उनके चित्र से सज्जित एक 'डाक-टिकट' भी जारी किया गया।

सन् 1962 ई० में 'भारत-रत्न महर्षि कर्वे' ने एक सौ पाँच वर्ष की दीर्घायु के उपरान्त अपने नश्वर शरीर का परित्याग कर दिया। 'महर्षि' तो चले गये किन्तु 'नारी जागरण एवं उत्थान' हेतु जलायी गई उनकी 'ज्ञान-मशाल' आज भी जल रही है। उसी मशाल से देश भर के उनके अनुयायी समाज सेवकों ने 'नारी-जागरण' की अपनी 'मशालों' को आलोकित किया। परिणामतः आज 'भारतीय नारी' विश्व पटल पर वैदिक नारियों के सदृश्य अपना पूर्ण सम्मानित स्थान बना पाने में सफल रही और भारतीय समाज में पूर्ण आस्था के साथ इस क्रान्ति आन्दोलन को पूर्णता प्रदान करने में अपनी भागीदारी निभाना प्रारम्भ कर दिया।

दरिद्र-सखा

रमाकान्त लिंका
हिन्द सेवक संघ

उड़ीसा के पुण्य क्षेत्र पुरी में, जगन्नाथ के मन्दिर सिंहद्वार के उत्तर पहलू में ठीक सामने एक संगमरमर की मूर्ति स्थापित है। उड़ीसा वासी उसको 'दद्रिर-सखा' (दरिद्र के सखा) के रूप में स्मरण करते हैं। उनका नाम 'गोपबन्धु दास', उड़ीसा में राष्ट्रीयता एवं स्वाधीनता संग्राम की बात चलने पर लोग सबसे पहले उन्हीं का नाम लेते हैं।

सन् 1875 में पुरी जिले के सत्यवादी थाना के अन्तर्गत 'सुआंडों' नामक एक क्षुद्र पल्ली (ग्राम) में उनका जन्म हुआ था। प्रारम्भिक शिक्षा ग्रहण करने के उपरान्त उन्होंने वकालत की पढ़ाई पूरी की और जीविका हेतु वकालत करने लगे, तथापि शिक्षक जीवन को वह आदर्श मानते थे। कुछ दिनों तक उन्होंने शिक्षण कार्य भी किया था।

अंग्रेजी शासन में पराधीन रहकर भी उन्होंने स्वाधीन शिक्षा पद्धति अपनाई थी। बंगाल के 'शान्ति निकेतन' की तरह उड़ीसा के 'सत्यवादी' नामक स्थान में उन्होंने खुले आकाश के नीचे एक 'बन-विद्यालय' खोला था, जहाँ 'कुलबन' में छात्रों को स्वाधीन ढंग से शिक्षा दिया करते थे। उन्हीं के प्रेरणा से उड़ीसा के विशिष्ट 'जननेता' और कवि स्वर्गीय गोदावरीश मिश्र और उत्कल विधान सभा के 'वाचस्पति' (प्रमुख) पं० नीलकंठ दास ने इस 'बन-विद्यालय' में शिक्षण कार्य किया था। उत्कल के विच्छिन्न अंचलों को संगठित कर 'पूर्णांग-उड़ीसा' बनाने के लिये उन्होंने प्राणपण से चेष्टा की। उड़ीसा के प्रतिष्ठित दैनिक पत्र 'समाज' के वे संस्थापक थे।

बचपन से ही गोपबन्धु के अन्दर कवित्व का उत्कृष्ट भाव स्पष्ट दिखाई देने लगा था। स्कूल में प्रारम्भिक दौर में ही वे सुन्दर, मर्मस्पर्शी और सरल कवितायें लिखा करते थे। उड़िया साहित्य में वे एक नये युग के स्रष्टा हुये। उसी युग का नाम 'सत्यवादी' युग है। सरलता और राष्ट्रीयता इस युग की विशेषतायें थीं।

गोपबन्धु दास की 'अवकाशचिन्ता', 'बन्दीर आत्मकथा' और 'धर्मप्रद' जैसी रचनाओं में से प्रत्येक ग्रन्थ एक-एक उज्जवल मणि है। 'बन्दीर आत्मकथा' जिस शैली में लिखी गई है, उड़ियावासी उसे पढ़ते ही राष्ट्रीयता की भावना से ओत-प्रोत हो उठते हैं, अनुप्राणित हो उठते हैं। जून 1928 ई० में मात्र 53 (तिरपन) वर्ष की अवस्था में 'दरिद्र-सखा' ने 'इहलोक' त्याग दिया।

सज्जन-दुर्जन

मनस्यन्य द्वचसन्यत्काये चान्यददुरात्मनाम्, मनस्येकं वचस्येकं कर्मण्येकं महात्मनाम्।
नारिकेलसमाकारा दृष्यन्तेऽपि हि सज्जनाः, अन्ये बदरिकाकारा बहिरेव मनोहराः।।

दुर्जन के मन में कुछ और, वाणी में कुछ और, एवं क्रिया में कुछ और होता है, परन्तु सज्जनों के वही मन में होता है, वही वाणी में और वही कर्म में होता है।

सज्जन नारियल की भाँति अन्दर से कोमल और सुन्दर होते हुए भी, ऊपर से कठोर तथा जटिल दीखते हैं, और दुर्जन बेर की तरह अन्दर से कठोर व असुन्दर होते हुए भी, ऊपर से कोमल और मनोहर लगते है।

सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसायटी - इतिहास के पन्नों में

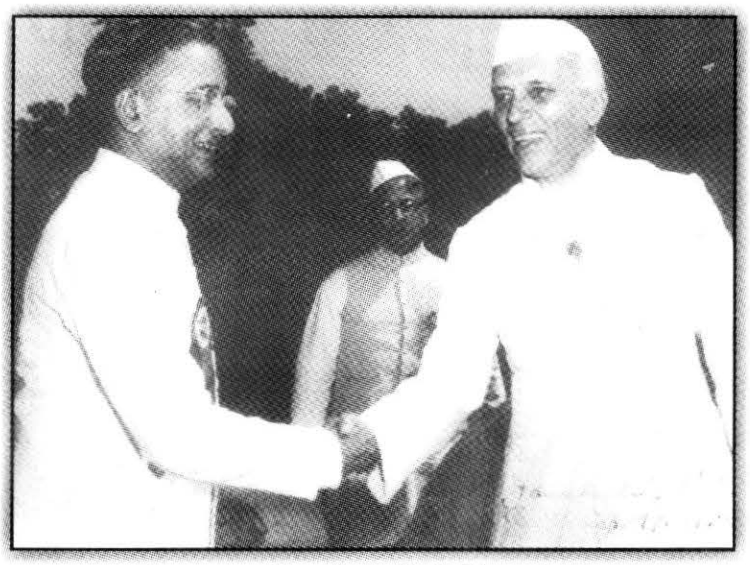

पूर्व उपाध्यक्ष श्री ए.डी. मनी पं० नेहरू के साथ

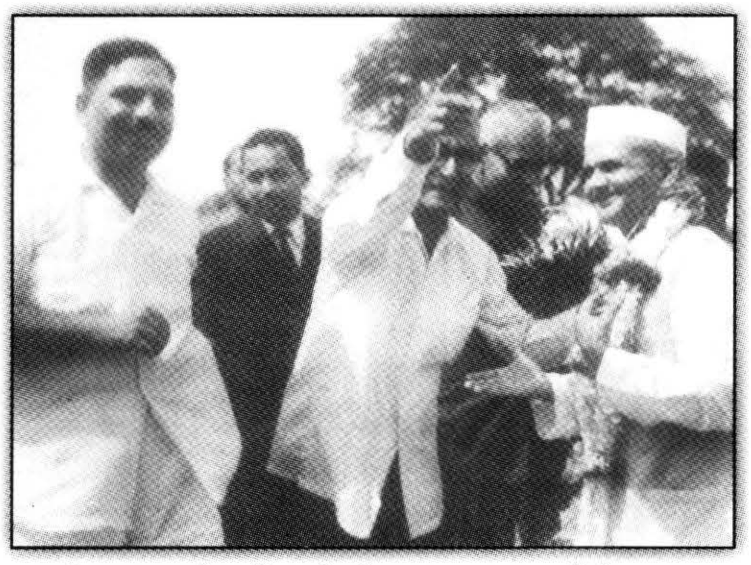

पूर्व उपाध्यक्ष श्री ए.डी. मनी श्री लाल बहादुर शास्त्री के साथ

श्री दामोदर साहू, राष्ट्रपति श्री शंकरदयाल से राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त करते हुए

पं. ह्रदय नाथ कुंजरू, श्री राम भारतीया के साथ

श्री प्रेम कृष्ण द्विवेदी, उपाध्यक्ष, श्री गुलाब सेहरा, समाज कल्याण मंत्री उत्तर प्रदेश को लखीमपुर खीरी की थारूं जनजाति की समस्याओं से अवगत कराते हुए चन्दन चौकी (सीमांत ग्राम) में

उपाध्यक्ष, श्री पी. के. द्विवेदी मुख्य मंत्री श्री नारायण दत्त तिवारी से बुक्सा जनजाति की समस्याओं से अवगत कराते हुए

सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसायटी
महिला एवं बाल कल्याण

बुक्सा महिला
प्रशिक्षण

थारू महिलाओं का
प्रशिक्षण

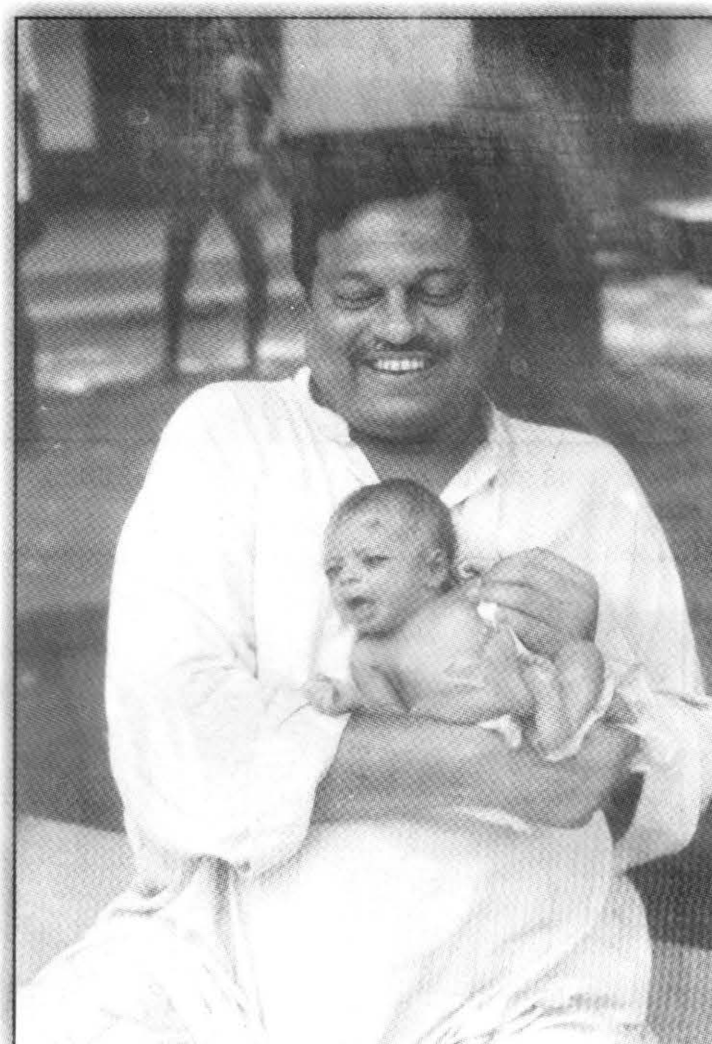

श्री दामोदर साहू
अनाथ बच्चे के साथ

बुक्सा आदिम जाति
आश्रम स्कूल बाजपुर

राइट आनरेबुल श्री वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री

आर०वी नेवे सदस्य
सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी नागपुर

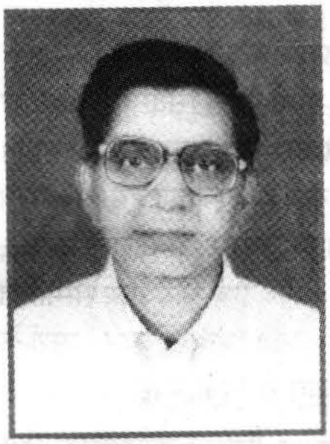

मद्रास के बालिगमन नामक स्थान पर एक गरीब ब्राह्मण परिवार में सन् 1869 ई० में महान् भारतीय समाजसेवी श्री वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री का जन्म हुआ था। उच्च शिक्षा प्राप्ति के उपरान्त उन्होंने मद्रास विश्वविद्यालय के उपकुलपति के रूप में जीवन का प्रारम्भ किया।

प्रारम्भ से ही सामाजिक समस्याओं, कुरीतियों, अशिक्षा एवं रूढ़िवादी समाज की बुराइयों सहित, दलित, दबे, कुचले एवं आदिवासियों की पीड़ा, उनके दर्द और उनकी हीन दशा देख, उनका हृदय कचोटता रहता था। शिक्षण कार्य जुटा वह महान् शिक्षक, समाज की समस्याओं, उसके निदान एवं कार्य पद्धति के प्रति सदैव चिन्तन करता रहता था।

'सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी' की स्थापना हो चुकी थी। पं० गोपाल कृष्ण गोखले ने वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री के अन्त: को पहचाना, व्यथित समाज की दुर्दशा से व्यथित, श्री शास्त्री जी को एक मंच की और 'सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी' के संस्थापक पं० गोपाल कृष्ण गोखले को श्री शास्त्री जी जैसे कर्मठ, वीतराग एवं ध्येयनिष्ठ कार्यकर्ता की आवश्यकता थी। दोनों की इच्छा पूरी हुई। श्री वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री ने 'सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी' की सदस्यता ग्रहण कर ली।

'सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी' के बैनर तले श्री शास्त्री समाज सेवा के राष्ट्रीय व्रती बन गये। अतिशय लगन एवं समर्पित ध्येय निष्ठा के साथ, निस्पृह सेवाभाव से, अल्पकाल में ही श्री शास्त्री प्रखर राष्ट्रीय व्यक्तित्व के रूप में अपनी उच्च पहचान बनाने में सफल हो गये। परिणामत: 'सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी' के अध्यक्ष पद से साथ ही 1916 में वे 'ब्रिटिश इण्डिया' के वायसराय की विधान परिषद में भी आये। माण्टेक-चेम्सफोर्ड सुधार आयोग की योजना कार्यान्वित होने के बाद वे नई काउन्सिल ऑफ स्टेट के सदस्य चुने गये। 1921 में सरकार की रेलवे समिति में भी उन्हें शामिल किया गया।

श्री वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री अपने समय के सर्वश्रेष्ठ भारतीय वक्ता के रूप में सम्पूर्ण देश में प्रसिद्ध हो चुके थे, जिसके कारण 'लीग ऑफ नेशन्स' जैसी अन्तर्राष्ट्रीय संस्था में उन्होंने भारत का प्रतिनिधित्व किया। प्रिवी काउन्सिल में शामिल होने वाले वे तीसरे महान् भारतीय थे। इतना ही नहीं 1927 में ब्रिटिश सरकार ने उन्हें दक्षिण अफ्रीका में एजेण्ट जैसे गौरवशाली एवं जिम्मदारी भरे पद पर नियुक्त किया। लन्दन की गोलमेज परिषद् की पहली बैठक में अति सक्रिय सदस्य के रूप में रहे।

1946 तक आजीवन 'सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी' के अध्यक्ष के रूप में राष्ट्रीय ही नहीं अन्तर्राष्ट्रीय व्यक्तित्व के अप्रतिम स्वरूप से, उन्होंने समाज की जो सेवा की, उसे कभी भी भुलाया नही जा सकता। 'राइट आनरेबुल श्री वी० एस० श्रीनिवास शास्त्री भारत ही नहीं मानवता के अमर सपूत थे, जिन पर 'सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी' को गर्व है।

भारतीयों की अकृत्रिमता

"भारतीयों की मुखाकृति में जीवन के प्रकृति रूप का दर्शन होता है। हम तो कृत्रिमता का आवरण ओढ़े हुए हैं। भारतीय मुख-मण्डल की सुकुमार रूप रेखाओं में ही कर्त्ता के कराङ्गष्ठ की छाप दिखाई पड़ती है।"

भारतीयों की निष्कपटता

"भारतवर्ष के करोड़ों व्यक्ति वहाँ के साधु सन्तों की ही भाँति रहते आये हैं। सरल, सहज, कपट रहित और ऋण रहित।"

-प्रो० पी० जाज

हरिजन आन्दोलन

दिनेश मिश्रा
सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी
(SIS) सदस्य

बात सन् 1932 के अन्त की है, गुजारात के एक अन्त्यज ने महात्मा गाँधी को एक गुजराती भजन का हवाला देते हुए लिखा — "अन्त्यजों को 'हरिजन' जैसा सुन्दर नाम क्यों न दिया जाय। इस भजन में हरिजन ऐसे को कहा गया है, जिसका सहायक संसार में, सिवाय एक 'हरि' के कोई दूसरा नहीं है।" बस गाँधी जी को यह नाम पसन्द आ गया और उन्होंने इस नाम की घोषणा कर दी और यह प्रचलित हो गया।

हिन्दू समाज में जिन जातियों या वर्गों के साथ अस्पृश्यता का व्यवहार किया जाता था, उनको अन्त्यज, अस्पृश्य या दलित जैसे अपमानजनक नाम से पुकारते थे। ज्ञात हो कि वैदिक काल में अस्पृश्यता का कोई भी उल्लेख नहीं मिलता। यह मात्र वर्ण-व्यवस्था के विकृत हो जाने तथा ऐतिहासिक, राजनैतिक एवं सामाजिक बुराइयों का अवश्यम्भावी परिणाम रहा है।

'वज्र सूचिक' उपनिषद एवं महाभारत में कुछ स्थलों पर जाति भेद आधारित ऊँचनीचपन की निन्दा की गई है। कई ऋषि-मुनियों, महावीर, गौतमबुद्ध, राजा राममोहन राय, स्वामी दयानन्द सरस्वती और कितने ही साधु सन्यासियों ने इस सामाजिक बुराई की ओर समाज का ध्यान आकृष्ट कराते हुये इसकी समाप्ति का प्रयत्न भी किया, किन्तु सर्वाधिक जोरदार प्रयत्न महात्मा गाँधी जी ने इसे "हिन्दू धर्म के माथे का कलंक" एवं "यदि अस्पृश्यता रहेगी तो हिन्दू धर्म, तात्पर्य 'मानव-धर्म' का नाश निश्चित है" जैसी मर्म स्पर्शी उक्तियों द्वारा प्रकट किया।

सन् 1932 के सितम्बर माह के लन्दन में आयोजित 'गोलमेज सम्मेलन' में अछूतों की ओर से बोलते हुए गाँधी जी ने कहा —"मेरा दावा है कि अछूतों के प्रश्न का सच्चा प्रतिनिधित्व तो मैं कर सकता हूँ। यदि अछूतों के लिये पृथक निर्वाचन मान लिया गया तो, मैं इसके विरोध में अपने प्राणों की बाजी लगा दूँगा।" उनकी मान्यता थी कि ऐसा करने से 'हिन्दू-समाज' दो टुकड़ों में बँट जायेगा और यह अंगभंग लोकतन्त्र तथा राष्ट्रीय एकता के लिये महाघातक होगा, किन्तु ब्रिटिश मन्त्री रैमजे मैकडानल्ड ने साम्प्रदायिक निर्णय लेकर, समाज को तोड़ने के उद्देश्य से 'दलित वर्गों' के लिये पृथक निर्वाचन को ही मान्यता प्रदान की।

उक्त निर्णय के विरोध में महात्मा गाँधी ने 13 सितम्बर 1932 को आमरण अनशन की घोषणा कर दी। सारे देश में भूचाल जैसा आ गया। देश के सभी बड़े नेता इस समस्या से छुटकारे हेतु एकत्रित हुये। पं० मदन मोहन मालवीय, तेज बहादुर सप्रू, एम० आर० जयकर, अमृतलाल ठक्कर, भीमराव अम्बेडकर, श्रीनिवासन तथा एम० सी० राज और अन्य सम्मानित शीर्षस्थ नेता व प्रतिनिधियों ने, तीन दिन के अति गम्भीर विचार विमर्श के उपरान्त 24 सितम्बर 1932 को सर्वसम्मति से 'पूना पैक्ट' के नाम से, एक समझौते पर हस्ताक्षर किया गया।

'पूना पैक्ट' में दलित वर्ग के लिये ब्रिटिश भारत के अन्दर मद्रास, बम्बई, पंजाब, बिहार, उड़ीसा मध्य प्रान्त, आसाम, बंगाल और संयुक्त प्रान्त को मिलाकर 148 स्थान संयुक्त निर्वाचन प्रणाली मानकर, सुरक्षित कर दिये गये, जबकि ब्रिटिश प्रधानमन्त्री द्वारा 71 स्थान दिये गये थे। केन्द्रीय विधान सभा में 18% स्थान उस पैक्ट में सुरक्षित कर दिये गये। पैक्ट की अवधि 10 वर्ष की रखी गयी। यह मानकर की 10 वर्ष की अवधि में अस्पृश्ता से पैदा हुई निर्योग्यतायें दूर कर दी जायेंगी।

सर तेज बहादुर सप्रू एवं श्री जयकर ने तार द्वारा इस पैक्ट का मसौदा ब्रिटिश प्रधान मन्त्री को भेज दिया। परिणामत: प्रधान मन्त्री ने जो साम्प्रदायिक निर्णय लिया था, उसमें से दलित वर्गों के पृथक निर्वाचन का भाग निकाल दिया गया।

समस्त भारत के हिन्दू प्रतिनिधियों की परिषद जो 25 सितम्बर को बम्बई में पं० मदन मोहन मालवीय की अध्यक्षता में हुई, उसमें एक प्रस्ताव पारित किया गया। उसका मुख्य अंश निम्नलिखित है—

'आज से हिन्दुओं में कोई भी व्यक्ति अपने जन्म के कारण 'अछूत' नहीं माना जायेगा और जो लोग अब तक अछूत माने जाते रहे हैं, वे सार्वजनिक स्थानों, कुओं, सड़कों और दूसरी संस्थाओं का उपयोग उसी प्रकार कर सकेंगे, जिस प्रकार दूसरे हिन्दू करते हैं। अवसर मिलते ही, सबसे पहले इस अधिकार के बारे में कानून बना दिया जायेगा और यदि स्वतन्त्रता प्राप्त होने के पहले ऐसा कानून न बनाया गया तो 'स्वराज्य-संसद' पहला कानून इसी के बारे में बनायेगी।'

26 सितम्बर को गुरूदेव रवीन्द्र नाथ टैगोर तथा अन्य मित्रों की उपस्थिति में संतरे का जूस देकर गाँधी जी का अनशन समाप्त कराया गया। भावविह्वल गुरूदेव टैगोर ने —"जीवन जरवन शुकाये जाये, करुणा

धाराय एशो..........." स्वरचित गीत गाया। गाँधी जी ने प्रकाशनार्थ वक्तव्य दिया— "अब मेरी ही नहीं किन्तु सैकड़ों, हजारों 'स्वयं सेवकों', 'समाज-शोधकों' की यह जिम्मेदारी बहुत अधिक बढ़ गई है कि जब तक अस्पृश्यता का उन्मूलन नहीं हो जाता, इस कलंक से हिन्दू धर्म को मुक्त नही कर लिया जाता, तब तक कोई चैन से बैठ नही सकता।'

30 सितम्बर को पुनः पं० मालवीय की अध्यक्षता में जो सार्वजनिक सभा हुई, उसमें सारे देश के हिन्दुओं, नेताओं ने अस्पृश्यता निवारणार्थ 'अखिल भारतीय अस्पृश्यता विरोधी मण्डल' (एण्टी-अनटचबेलिटी लीग) जिसका प्रधान कार्यालय दिल्ली और विभिन्न प्रान्तों में शाखा कार्यालय इस घोषणा के साथ स्थापित किये गये—

(क) सभी सार्वजनिक कुएँ, धर्मशालायें, सड़कें, स्कूल, श्मशान घाट इत्यादि दलित वर्गों के लिये खुले घोषित कर दिये जायें।

(ख) सार्वजनिक मन्दिर उनके लिये खोल दिये जायें।

(ग) 'क' और 'ख' के सम्बन्ध में जोर-जबरदस्ती का प्रयोग न किया जाय, केवल शान्तिपूर्वक समझाने-बुझाने का सहारा लिया जाये।" यही 'अस्पृश्यता विरोधी मण्डल' बाद में परिवर्तित नामकरण 'हरिजन सेवक संघ' हुआ, जिसका संविधान महात्मा गाँधी ने स्वयं तैयार किया, जिसका मूल उद्देश्य— "संघ का उद्देश्य हिन्दू समाज में सत्य एवं अहिंसक उपायों द्वारा, 'छुआ-छूत' को मिटाना और उससे पैदा हुई उन दूसरी बुराइयों तथा निर्योग्यताओं को जड़मूल से नष्ट करना है, तथा कथित अछूतों को, जिन्हें इसके बाद 'हरिजन' कहा जायेगा............ और इस प्रकार उन्हें पूर्ण रूप से, शेष हिन्दुओं के समान स्तर पर ला दिया जायेगा। अपने इस उद्देश्य प्राप्ति हेतु 'हरिजन सेवक संघ' भारत भर के हिन्दुओं से सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयत्न करेगा, और उन्हें समझायेगा कि हिन्दू समाज में प्रचलित छुआ-छूत हिन्दू धर्म के मूल सिद्धान्तों और मानवता की उच्चतम भावनाओं के सर्वथा विपरीत है, तथा 'हरिजनों' के नैतिक मौलिक और सामाजिक कल्याण साधन के लिये संघ उनकी भी सेवा करेगा।"

'हरिजन सेवक संघ' के प्रथम अध्यक्ष श्री घनश्याम दास बिड़ला तथा महामन्त्री के रूप में श्री अमृत लाल विट्ठल दास ठक्कर को जो 'ठक्करबापा' के नाम से प्रसिद्ध थे, चयनित किया गया।

श्री ठक्करबापा ने सम्पूर्ण देश में सक्रिय परिभ्रमण कर जागरूक, निर्भीक तथा समर्पित समाज सुधारकों एवं लोक नेताओं से मिलकर कुछ ही महीनों में संघ को पूर्णरूपेण संगठित कर दिया।

'हरिजन' 'हरिजन सेवक' एवं 'हरिजन बन्धु' नाम क्रमशः अंग्रेजी, हिन्दी एवं गुजराती पत्रों का प्रकाशन जो कुछ ही दिनों में 'यंग इण्डिया' और 'नवजीवन के स्थानापन्न हो गये, जेल के अन्दर से महात्मा गाँधी द्वारा किये गये प्रयासों के परिणाम थे।

कुछ ही दिनों में श्री ठक्कर बापा के अनुरोध पर गाँधी जी ने अस्पृश्यता निवारणार्थ, सारे देश का दौरा किया, जिसका परिणाम अति उत्साहवर्द्धक रहा, आर्थिक रूप से भी देशवासियों ने भरपूर योगदान करते हुये, दस लाख रूपये का योगदान इस आन्दोलन हेतु अर्पित किया।

'हरिजन सेवक संघ' ने सार भारत के हरिजन छात्र-छात्राओं के लिये हजारों स्कूल और सैकड़ों छात्रावास चलाये। उद्योगशालाओं, छात्रवृत्तियाँ तथा अन्य उपक्रमों द्वारा हरिजनोद्धार के सद्प्रयास सफल होने लगे।

हरिजनों में अपना जन्मजात अधिकार प्राप्त करने का साहस पैदा हुआ। सवर्णों का विरोध भी समाप्त होने लगा। गाँधी जी का यह वाक्य— "यदि अस्पृश्यता रहेगी तो हिन्दू धर्म विनाश से नहीं बच सकता" लोगों के दिल में घर करने लगा। स्वतन्त्रता के उपरान्त 'संविधान-परिषद्' ने डॉ० अम्बेडकर की प्रमुखता में जो संविधान बनाया, उसमें अस्पृश्यता को 'निषिद्ध' ठहरा दिया। भारतीय संसद ने अस्पृश्यता निवारणार्थ, 'अस्पृश्यता-अपराध कानून' भी बना दिया।

आज 'हरिजन' समाज, शासन, प्रशासन, संसद और विधान सभाओं में बरावरी के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर कार्य कर रहे हैं, किन्तु 'समाजसंशोधकों' एवं 'समाजसेवी-संस्थाओं' का कार्य समाप्त नहीं हुआ है। यह आन्दोलन मात्र सरकार और कानून पर आधारित नहीं रह सकता। पूर्णरूपेण अस्पृश्यता का उन्मूलन प्रत्येक हिन्दू का अपना कर्त्तव्य है, जिसके लिये उसे स्वतः अनवरत् भगीरथ प्रयत्न में विराम नहीं लेना है।

नमन्

"हे प्राचीन भारत भूमि! हे मानव जाति की पालन करने वाली! हे पूजनीया! हे पोषणदात्री! तुझे नमन है।" शताब्दियों से लगातार चलने वाले पाशविक अत्याचार तुझे नष्ट नहीं कर सके, तेरा स्वागत है। हे श्रद्धा, प्रेम, कला और विज्ञान की जन्मदात्री! तुझे नमस्कार है।"

–ऐम० लुई जेकोलियट

Gokhale And His Economic Thinking

By—**Om Prakash**
Retd. Head of Instrumentation Engg. Deptt.
Institute of Engg. & Rural Technology, Allahabad.

In early (around 1885) years of India National Congress's Emergence, Govind Ranade, a political economist, fully alive to economical imbalances in India and draining of financial & economical resources from India, put up demand for economic rehabilitation. Congress then adopted a half patronising significantly Non hostile attitude. Ranade's never to be forgotten service lies in his dedicated mission to bring in group of thinkers who could put forward case for India, effectively with patience. Ranade found Gopal Krishna Gokhle Shared his outlook, doctrine and philosophy and started training him as a disciple.

At the same time, Bal Gangahar Tilak came up in prominance. He, however represented thinking of total rebellion against England and was full of fierce patriotism with ideals of Shivaji. Gokhale was influenced by Bal Gangadhar Tilak also. Ranade and Gokhale alike, transformed the economic thinking and politics by spiritualising it towards complete dedication to the cause of the country with purity and motive of action. In 1907, Gokhale himself summed up his mission of life :

''at this stage of the country's progress our achievements may be small with many failures. It will be given to our future generation to serve India by these small successes we got. Following Ranade, Gokhale worked for political social and economic regeneration of the country, as Dinshaw Edulji Wacha and Srinivasa Sastri joined him.''

Gokhale's career saw its supreme manifestation in series of well balanced, well conceived and constructive criticism of British Political & economic policy. He said british rule was root cause of India's poverty. Gokhale's always used to quote.

''Nothing in excess''

''Know thyself an maintain self discipline''.

Gokhale exhibited most clearly & effectively the practical application of the idea of his predecessor to economic problems, facing Govt. and the country.

In next few pages, we may attempt to study Gokhale's economic thinking in terms of his humanistic political philosophy. In those day of British rule, Gokhale saught response by searching enquiry into British Economics Policy. This meant that political economy became matter of public concern and liberal thoughts made deep impact on his economic thought. Randade, the mentor of Gokhale, G.V. Joshi a well known economic analyst and Gokhale, who were intellectuals having knowledge of economics affairs, economic reality and awareness of economic conditions, studied the problem and possible solutions. Their study was admirable and as good as sophisticate economics. In course of time, Gandhi and Dadabhai gave it a spiritual colour.

On May 30, 1901, Gokhale gave speech on Bombay Land Revenue Bill at Bombay Legislative Council. This speech was received admirably by Public. It brought out characterstic Gokhale's humality and bore stamp of his own intellectual approach to nationalist economic thinking.

Following are some important aspects of Gokhale's economic thinking, which made him most distinguished economic thinker.

On our (India's) poverty and low per capita national income. His position was picturesquely stated in following phrase :—

"deep and deepening poverty"

He made a point that satisfactory estimation was an impossible task. He produced evidence in terms of

per capita salt consumption, area under cultivation, etc etc.

As an exponent of public finance, Gokhale was an indefeatigable advocate of lessening the burden of taxation which was essentially regressive in character in poor agriculture country. He advocated that taxation was most important single cause of Indian poverty.

On subject of "drain", Gokhale established before Welby Commission (1897) that free trade policy has killed Indian industries. His thinking formed the core of thinking of Indian Public men in those days and was upheld by Dadabhai, Wacha, Ranade and G.V. Joshi.

Gokhale presented a strong case on "drain" and indian poverty. He spoke at various meetings and seminars both in India and London. In his presidential address, at Indian national Congress, he presented the same aspects.

Gokhale's thinking on India's industrial development had an impact on Gandhi's ideas. This was the nationalist economic thinking down to many years. It has relevance even today. His view on decay of Indian industry followed nationalist view but with a high degree of sophistication. He said that objective of East India Co. was to reduce India to simply an agriculture country producing agriculture raw material. He projected this as cause of our industrial decay, and talked about manufacture and handloom (1907). On many occasions, Gokhale admired Japan's economic development and pin pointed 3 factors.

(a) a strong nationalist feeling.

(b) Adoption of Western System 40 years earlier.

(c) Concentrated and coordinated effects by leaders & masses.

His view is relevant event today.

Unlike Gandhi, Gokhale believed in machine production together with handloom and emphasised technical and higher scientific education as instrument of technological progress (budget speech of 1903). He hit hard high tax of 20/25 percent on machines.

Remarkably, Gokhale's economic philosophy had deep concern for people's welfare. He pleaded for measures to be taken up at 1911 session of imperial legislative council. Gokhale's quiet eloquence used to attract attention. He made strong case for a welfare state. Even after 50 years of independence, this remains a debatable subject. His philosophy and its relevance today need to be a topic of research. In a relatively short time, he demonstrated his deep understanding of economics, with mass welfare, nationalistic feeling and purity of thought.

भारतीयों की प्रामाणिकता

"हिन्दू इतने ईमानदार हैं कि न तो उन्हें अपने दरवाजों में ताले की आंवश्यकता है और न कोई बात निश्चय हो जाने पर उसकी प्रामाणिकता के लिए किसी लिखा पढ़ी की।"

–प्रसिद्ध यूनानी इतिहासकार, श्री स्ट्रैबो (ईसा पूर्व)

भारतीयों का एकात्मबोध

"भारतीय चरित्र की आन्तरिक दयालुता, उनके स्वभाव की सुन्दरता और सरलता ही उनको वास्तविक बन्धुत्व की भावना प्रदान करती है। ऐसा प्रतीत होता है कि, उनमें गहरे से पैठा हुआ समस्त प्राणियों का एकात्मबोध ही, जिसका उन्हें स्वयं भी पता नहीं, हर एक को लक्षित हो रहा है।"

–पोलैण्ड की, कुमारी दिनोवास्का।

तमसो मा ज्योतिर्गमय

प्रो० डॉ० सुरेश चन्द्र द्विवेदी.
(अंग्रेजी विभाग) इलाहाबाद विश्वविद्यालय

कुहरे का इस तरह छा जाना कि अपना हाथ भी न दे दिखाई
और सूरज चला जाये सेबैटिकल लीव़ पर
ठंड इतनी की हाथ-पाँव गलने लगे
और ऊपर से मौसम की गद्दारी, चिड़ियों की बेवफाई
और फूलों का रूठना मानों मौसम पर लग गया हो आपातकाल
किससे बोलूँ, किससे बतियाऊँ किससे हाथ मिलाऊँ
इसे जाड़े की तानाशाही कहूँ या कि सूरज की नपुंसकता
महावीर मार्ग पर गंगा की कटान बढ़ रही है परन्तु कोहरा जितना सीनेट हाउस को टाँपताआ है
उतना ही पश्चिमवाहिनी गंगा को गंगा अब किसको वारेंगी ?
अब कौन करेगा मल-मूत्र, विष्ठा, कूड़ा-कचरा, लाश-वाश आदि।
कितने टीले और ढहे गिरते हैं गंगा में धड़ाम्-धड़ाम्
परन्तु क्यों नहीं गिरता है उसमें तानाशाहों का अहंकार, सत्ताधीशों का मद-मत्सर, मठाधीशों का जंगलीपन
शहर एक लाश की तरह ठंडा पड़ा है
यह न उठता है, न बैठता है न बोलता है, न सुनता है
यह दिसम्बर का अन्तिम समय है एक पुराना साल सिर पर उठालेता है ठंड एक बार आती है
तो जाने का नाम नही लेती कुहरे की चादर ओढ़कर सभी सोये हैं।
लौकी गुरू घाट पर चीलम सुलगाये है
देवानन्द शुक्ल गंगा जी का कटान रोकने चल पड़े हैं
दनादन - ईंट-पत्थर, टेला, गंगा का कटान रोकने के लिये फेंक रहे हैं
पैंटन ब्रिज कुछ बन रहे हैं कुछ बनने बाकी हैं।
यह मत पूछो कि कुहरा कहाँ नहीं है,
यहाँ वहाँ हर जगह है कुहरा तानाशाह के बूट की तरह
हम सभी की छाती पर सवार है कहीं वह ट्रेनों की टक्कर कराता है
तो कहीं बसों की, कहीं स्कूटरों की, तो कहीं कारों की
यह द्रौपदी की चीर की भाँति बढ़ता ही जाता है। अन्दर काम, क्रोध, मद, मोह, लोभ का कोहरा है
तो पर्यावरण में अलग टाइप का कोहरा
एक कोहरा वह भी है जो औपनिवेशिक है
और फूट डालो और शासन करो की नीति से उत्पन्न है।
अच्छा हुआ अंग्रेज चले गये और अपनी औलादें छोड़ गये
गंगा का पुल और यमुना का पुल कोहरे से है ढका
फाफामऊ का पुल भी है कोहरे से ढका
नेहरू मार्ग, मालवीया मार्ग, गाँधी मार्ग सभी हैं कोहरे में लिपटे
कुछ हैं चूहों से बिलों में बन्द एक सर्वग्रासी कोहरा
निरन्तर बढ़ रहा है यह कहाँ से आया है, और कहाँ तक जायेगा ?
कुछ कह नहीं सकता ऐसे में ह्यरुमन राइट्स या ऐनिमल राइट्स की बात टोटली बेमानी है।
ऊपर नीचे बायें दायें दाहिने बायें अन्दर बाहर
हर तरफ राक्षस के हाथ सा बढ़ता हुआ आ रहा है कोहरा
सूरज चाँद और सितारों की रोशनी को चुराता हुआ
और आदमी को चूहे सा बुजदिल बनाता आ रहा है कोहरा।

भारतीयों की विद्या

"ध्यान की प्रणाली को भारतीयों ने ही जन्म दिया है। उनमें स्वच्छता एवं शुचिता के गुण विद्यमान हैं। ज्योतिष, आर्युवेद, गणित एवं अन्य विद्याओं में हिन्दू लोग आगे बढ़े हुए हैं। प्रतिमा-निर्माण, चित्र-लेखन तथा वास्तु आदि कलाओं को उन्होंने पूर्णता तक पहुँचा दिया है। उनके पास काव्य दर्शन, साहित्य तथा नैतिक शास्त्रों का अद्वितीय संग्रह है।"

–अल्जहीज (आठवें शताब्दी)

सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसायटी - जन सभाओं में

पं० एच.एन. कुंजरू, राजा बलदेवदास बिड़ला सोनघाटी विद्यालय सलखन में मीरजापुर की जनजातियों को सम्बोधित करते हुए

श्री नारायण दत्त तिवारी बुक्सा छात्रावास में आदिवासी बुक्सा जातियों के बीच जनसभा को सम्बोधित करते हुए

पं. रमाशंकर मिश्र, पूर्व उपाध्यक्ष मिर्जापुर के जन जातियों के मध्य जनसभा को सम्बोधित करते हुए

श्री दामोदर साहू, वरिष्ठ सदस्य (उड़ीसा ब्रान्च) बुक्सा छात्रावास में बुक्सा जातियों के जनसभा को सम्बोधित करते हुए

उपाध्यक्ष श्री पी.के. द्विवेदी, सर्व इण्डिया उच्चतर माध्यमिक विद्यालय रोशनपुर के शिलान्यास के अवसर पर उपस्थित जनसभा को सम्बोधित करते हुए तथा साथ में सोसाइटी के अन्य सदस्य

श्री आत्मानन्द मिश्र आदिवासी इण्टरमीडिएट कालेज सिलथम में २६ जनवरी को आयोजित कार्यक्रम में उपस्थित जनसभा एवं छात्रों को सम्बोधित करते हुए

सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसायटी

प्रमुख सचिव समाज कल्याण

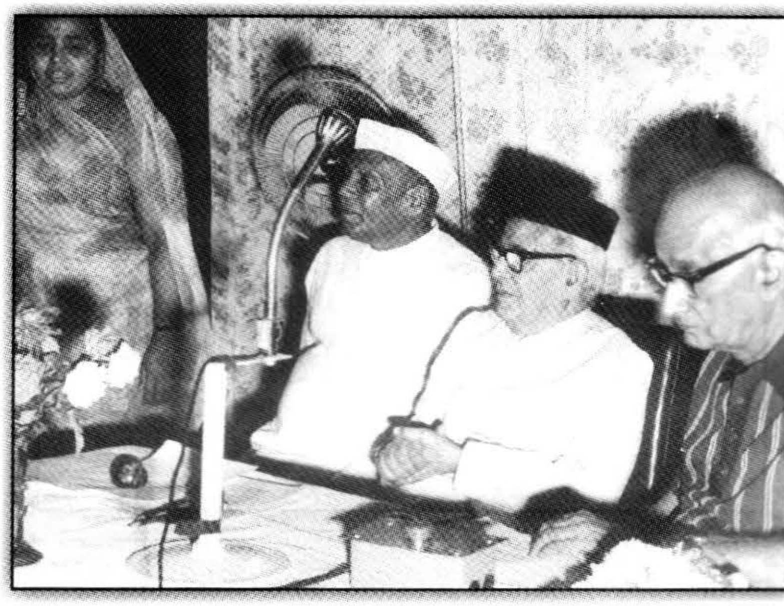

कुंजरू जी - बिड़ला परिवार

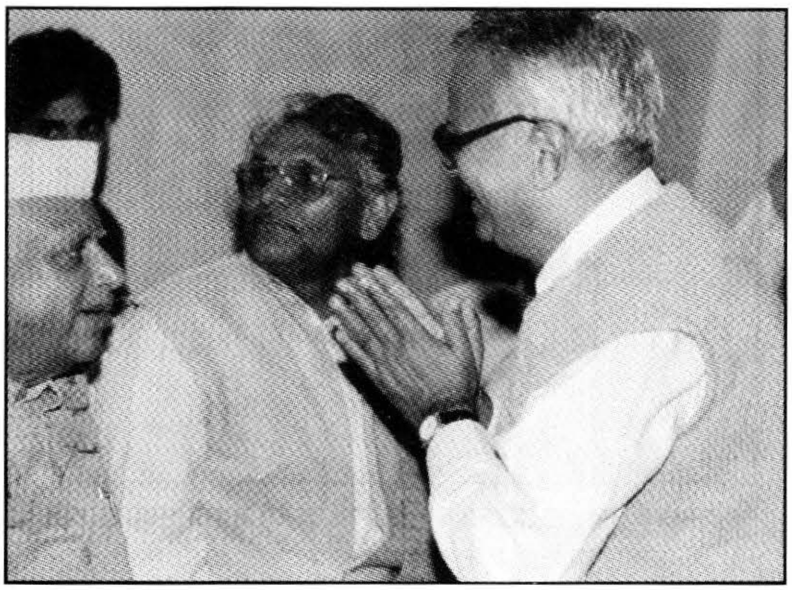

मुख्यमंत्री (उत्तरांचल) एन. डी. तिवारी बुक्सा छात्रावास बाजपुर में

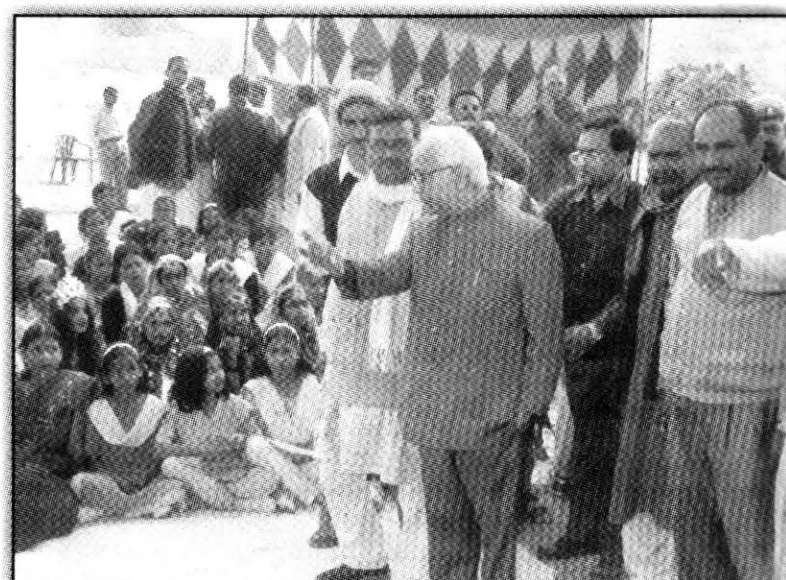

विधानसभा अध्यक्ष श्री केशरी नाथ त्रिपाठी इण्टर कालेज सलखन सोनभद्र

इण्टर कालेज सिलथम में माननीय राम सकल एम.पी. के साथ प्रधानाचार्य

श्री सत्येन्द्र चन्द्र गुड़िया एम. पी. गुफ्तगू करते हुए

Gokhale Institute of Politics and Economics

(Deemed to be University)

S.S. Ajgavarkar Secretary
(S.I.S.)

The completion of Seventy-Five years is the most significant event in the life of an Institution. The Gokhale Institute of Politics and Economics Pune, which will be celebrating its Platinum Jubilee, soon has traversed that longish span in its unpretentious though not uneventful life. Founded on the 6th June, 1930 with objects to conduct research into the economic and political problems of the country, providing for instructions and training and to facilitate for research and dissemination of knowledge on allied subjects. Among others, Dr. D.R. Gadgil, first Director of the Institute for 35 years, devoted himself to teaching post-graduate students and guiding research students. During his tenure G.I.P.E. attained name and fame as Premier Institute in Economic Research in the country. Throughout his career Dr. Gadgil combined academic excellence with social commitment. He believed that economic, political and social problems are interdependent and can not be separated while dealing with development economy. He believed that abstract principle of economics have to be tested in the crucible of experience and to be related to the specific facts and situation. He, therefore, laid great stress on an empirical approach and conducted his research work by a number of economic surveys together with data and facts related to local environment. Though he was not Marxist nor even Socialist, he stated that unbridled capitalism leads to inequality and exploitation. He emphasized regulatory framework in planned economy. Dr. Gadgil brought great name, fame and status to G.I.P.E. In 1951 Indian embarked on planned process of economic development through successive five years plan. Dr. Gadgil entirely contributed to thinking on planning in the country. His two notable contributions to planning were the provision (a) of an objective basis for determination of plan grants to the states known as Gadgil formula (b) decentralization of planning at the district level. Though he was stern in appearance he had a great heart and his life was utter simplicity, utter integrity. The stamp of his personality was so great and so distinctive which you could hardly find to compare with. It is hoped that such a glorious life and lesson of it will inspire others to follow in his footsteps and to imbibe values cherished by him and enhanced prestige and reputation of G.I.P.E. as Premier Institute in the country. For members of the Servants of Indian Society (past) it ws an intellectual treat every year to listen to Pro. Gadgil's lucid interpretation of economic problems faced by the country at the meeting of associates during the Foundation Day of the Society when Wrangler Paranjpe, Prof. Karve, Wrangler Mahajani also addressed the meeting. I may be permitted to refer to 'Changing India' essays in honour of Prof. D.R. Gadgil edited by Prof. N.V. Sohani and Prof. V.M. Dandekar presents various fields of Prof. Gadgil's work and activities by is eminent colleagues, successors and friends on the occasion of his 61st Birth Day. These articles of his academic standard contributed by Prof. M.L. Dantawalla, B.N. Data, B.N. Ganguly, Eric Zacopy, D. Karve, B.K. Madan, V.L. Mehta, S.K. Muranjan, V.K.R.V. Rao, Prof. N. Sohoni, Maurice Zinkin and oth-

ers represents the considered views and covers up academic interest of Prof. Gadgil himself which includes Economics, Agricultural Economics, Labour Econmics, Banking, Public Administration, Education, Statistics and Social Science Research Methods.

Servants of Indian Society, Trustees of Gokhale Institute of Politics arrived at the decision to convert the Institute as 'Deemed to be University'. It was momentous and crucial decision taken by the Trustees in the interest of the development and progress of G.I.P.E. It is now unique undiscipline University in the country concentrating so higher studies and research in economics and developing allied fields. It was so declared by the notification (Central Govt.) on May 9, 1993 the Birthday of Gopal Krishna Gokhale, after whom the Institute is named.

Library of G.I.P.E.

The original Gokhale Institute Library though founded by Gokhale and Servants of India Society and developed by Dr. D.R. Gadgil, Servashri Prof. S.V. Sohoni and Dr. V.M. Dandekar was ceremoniously named Dhananjay R. Gadgil Library on 31.3.2001. In fact the library was initially founded y Gokhale as repository of knowledge. Gokhale conceived the idea of starting library for the use of life workers of S.I.S. during their training period, for others and to have access to knowledge through such library, a repository of economics, political science, history, sociology etc. Whenever Gokhale went abroad he could spare time and make it convenient to purchase and send books to this library. Com. M.N. Roy in his booklet "A Library of a Revolutionary" also referred to his library Gokhale's successor Hon. Srinivasa Sastri (silver tongue orator of British Empire) made special efforts to built Madras Branch library. After the closure of Madras branch all its treasured books, vital reports and documents etc. were sent to G.I.P.E. library at Pune. It also contained important records including books of history, politics, economics, literature and at the same time literature on Marxism, Gandhism etc. Even Bombay Branch at the request of Shri Sharangpani and the librarian Sovani sent books to G.I.P.E. on varied subjects, controversial reports of labour struggle (movement), proceedings of Bombay Legislative Assembly and Central Legislative Assembly etc. Bombay Branch was hubbub of numerous Trade Union and Social Reform Activities, spearheaded by legendary figures Sarvashri G.K. Deodhar, Thakkar Bapa, N.M. Joshi (Father of the Indian Trade Union Movement) including the radicals like S.R. Parulekar, Dinkar Desai, N.V. Phadke, and Godavari Gokhale. Bombay branch was center of numerous activities including Social Reform Movement. All the reports were sent to G.I.P.E., library for preserving of Trade Union and Social Reform Movement of the country.

राधेश्याम अग्रवाल
गल्ला आढ़तिया
चन्दन चौकी
लखीमपुर–खीरी

गोखले एवं गाँधी के जीवन के कतिपय प्रेरणादायी प्रसंग

प्रेम कृष्ण द्विवेदी
वरिष्ठ सदस्य (उपाध्यक्ष)
हिन्द सेवक संघ

हम अपनी स्वाधीनता के सत्तावन वर्ष पूर्ण कर लिए हैं। अपना देश, अपना संविधान, अपनी व्यवस्था, अपने शासक और अपने लोग। ऊपर-ऊपर सभी अपने पर अन्दर से नारंगी के समान अलग-अलग। रस होते हुए भी समरसता नहीं। आज भी हम अंग्रेजों की विरासत में मिली "फूट डालो और राज करो" नीति पर ही चल रहे हैं। अपने पूर्वजों के त्याग एवं बलिदान को तिलांजलि दे चुके हैं। हममें पद लिप्सा हो गयी है कि, न तो हमें अपने भूत की याद है औन न भविष्य की। आज क्या हम कुछ ऐसा कर रहे हैं जिसको हमारी आने वाली संतानें अपना आदर्श मान सकें? क्या हमारा जीवन किसी माने में अनुकरणीय रह गया है? ये प्रश्न क्या हमें कभी झकझोरते हैं? या हम अपने मद में ही चूर हैं। हमें किसी की परवाह नहीं। आज केवल हम हैं और हमारा वर्तमान।

हम अपने देश के त्यागी, तपस्वी, वीतरागी, बलिदानी शहीदो को याद करना तो क्या अक्सर उनकी आलोचना करने से नहीं थकते। उसी में अपनी शान समझते हैं। एक मदहोश शराबी की भाँति हमारा व्यवहार हो गया है। कभी-कभी तो हमारा आचरण एक ऐसे ऐय्यासी सन्तान की तरह हो जाता है, जो स्वयं कुछ न करके अपने पूर्वजों की संचित गाढ़ी कमाई को कोठे पर जाकर लुटा रहा हो। हमारी दशा दिन प्रतिदिन बद से बदतर होती जा रही है।

इस दशा से उबरने और सुधरने का एक ही रास्ता है कि हम अपने गौरवशाली अतीत को देखें। उससे प्रेरणा लें। इसके लिए ऐसे महापुरुषों के जीवन के प्रसंगों एवं घटनाओं की ओर हम अपने को ले जायें जो आज भी हमें सही राह दिखा सकें। आज हम अपने सही रास्ते से भटक सेगये हैं। हमारी सही सोच भटक गयी हैं हममें दृढ़ता नहीं रह गयी है। भ्रष्ट आचरण अपनाने के कारण अपने को कमजोर मानने लगे हैं, हम सुविधाभोगी हो गये हैं। अपनी आत्मा की आवाज को सुनना और तदनुसार आचरण करना हम भूल से गये हैं। विश्व के अधिसंख्य लोगों में गाँधी जी एक अहिंसा के पुजारी के रूप में पूज्य एवं अनुकरणीय है।विश्व के अधिसंख्य लोगों ने उन्हें "शताब्दि-पुरुष" माना। राजनीति के अतिरिक्त जीवन के अनेकानेक विधाओं को लेकर उन्होंने उसकी शुद्ध भारतीय शैली में मानवीय पहलुओं की वैज्ञानिक व्याख्या प्रस्तुत की। उसे अपने जीवन में अपनाया। इसके लिए उनकी, उनके जीवन काल में ही आलोचना भी हुई और अन्त में उन्हें अपना बलिदान भी देना पड़ा, पर वे दृढ़ रहे। कभी अपने सिद्धान्त के प्रति झुके नहीं। ऐसे महापुरुष को भी आज के कुछ बहके हुए लोग अपने स्वार्थवश बहुत कुछ अनर्गल कह जाते हैं। मैं समझता हूँ कि सम्भवत: वे अपनी अज्ञानता या कमजोरी के वशीभूत होकर ऐसी बाते करते हैं। पढ़े-लिखे लोगों को भी मैंने कहते हुए सुना है, "कमजोरी का नाम महात्मा गाँधी" आज जो समस्यायें हैं उसका समाधान अपनी कमजोरियों के कारण आज के परिप्रेक्ष्य में नहीं ढूँढकर उलाहना देकर अपने कर्त्तव्य की इतिश्री समझ लेते हैं। माहात्मा गाँधी की दृढता के लिए उनका काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के शिलान्यास के समय दिया गया भाषण आज के युवकों के लिए प्रेरणादायक है।जरा उस समय की परिस्थितियों को समझें। परतन्त्र भारत का वायंसराय, देश के राजे-महाराजे और उनके समक्ष एक कृशकाय सामान्य व्यक्ति उस समय गाँधी को बहुत कम लोग जानते थे। सार्वजनिक शक्ति का बल भी नहीं था। ऊपर से कोई संरक्षण भी नहीं मिलने वाला था, पर आत्मवल इतना दृढ़ कि अकेला सभी को ललकारता हैं, इस ललकार से सभी डिग गए, पर गाँधी अडिग रहे।

आपके समक्ष मैं भाषा का प्रश्न विचार हेतु रखता हूँ। आज हिन्दी राष्ट्र की मान्य भाषा है। क्या हम और हमारे लोग या हमारा नेतृत्व करने वाले अपने इस कर्त्तव्य के प्रति दृढप्रतिज्ञ हैं? क्या हम हिन्दी की अपनाने में गर्व का अनुभव करते हैं? इसका उत्तर सम्भवत: आप के मन-मस्तिष्क में इन पंक्तियों के साथ ही मिल गया होगा आज भी हिन्दी को हेय दृष्टि से देखा जाता है। अंग्रेजी हमारे शासकों की भाषा थी। आज भी हम और हमारे शासक एवं प्रशासक अंग्रेजी की गुलामी से मुक्त नहीं हुए हैं। उसी भाषा में बात करने, और उसमें लिखने पढ़ने में अपना गौरव मानते हैं। आज अंग्रेजी, स्वाधीनता के पहले से अधिक पढ़ी, बोली व उपयोग में लायी जाती है। जनभाषा का मजाक उड़ाया जाता है। ऐसा लगता है कि गुलामी हमारे रगों में वस गयी है और हमारे शिर चढ़कर बोल रही है।

भारत में सार्वजनिक जीवन जीने वाले दो गुजराती महापुरुषों ने देश को जोड़ने के लिए हिन्दी के महत्व को बहुत पहले ही आत्मसात कर लिया था। प्रथम स्वामी दयानन्द सरस्वती तथा दूसरे थे महात्मा गाँधी। हिन्दी के मातृभाषा नहीं होने पर भी दोनों युगपुरुषों ने हमेशा हिन्दी में ही सार्वजनिक भाषण दिया। इन लोगों ने हिन्दी को भारत की राष्ट्रभाषा के रूप में बहुत पहले ही स्वीकार कर लिया और जीवन पर्यन्त उसे बढ़ावा दिया। स्वामी दयानन्द जी भारत में ही रहे और सम्पूर्ण देश में इस व्रत का पालन किया, पर इग्लैण्ड में वैरिस्टरी पास किये हुए महात्मा गाँधी तो दक्षिण अफ्रीका में भी हिन्दुस्तानी भाई-बन्धुओं से हमेशा अपनी टूटी-फूटी हिन्दुस्तानी में ही बात करते थे। दक्षिण अफ्रीका से जब भारत लौटे तो सार्वजनिक सभा हो या भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का अधिवेशन, हमेशा हिन्दुस्तानी में ही अपना भाषण दिया करते। आज के सार्वजनिक जीवन जीने वाले उच्च पदस्थ लोगों को इससे सीख लेनी चाहिए। मैं अपने युवक बन्धुओं से इस महत्वपूर्ण राष्ट्रीय प्रकरण पर गम्भीरता से विचार करने का अनुरोध करता हूँ।

इस क्रम में श्री जे०बी० कृपलानी द्वारा महात्मा गाँधी के शताब्दी वर्ष में लिखी गयी पुस्तक "महात्मा गाँधी जीवन एवं चिन्तन" से ऐसे तीन प्रेरणदायी प्रसंगों तथा एक अन्य ऐसा प्रसंग जो गोखले जी की सहिष्णुता के सम्बन्धमें है, को सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी के शताब्दी वर्ष में देश के लोगों को स्वयं के मूल्यांकन हेतु दिया जा रहा है।

(1) श्री गोखले का दक्षिणी अफ्रीका में महात्मा गाँधी के बुलाने पर जाना और उनका सार्वजनिक भाषण :-

महात्मा गाँधी के राजनीतिक गुरु श्री नामदार गोपाल कृष्ण गोखले सन् 1912 में उनके (गाँधी के) निमंत्रण पर दक्षिण अफ्रीका में उनके द्वारा स्थापित टालस्टाय आश्रम में गये। गोखले जी एकमात्र ऐसे भारतीय थे जो वहाँ के प्रवासी भारतवासियों की स्थिति में रुचि लेते थे। गाँधी जी भी दक्षिण अफ्रीका की स्थिति से उनको अवगत कराते रहते थे। उस समय गोखले ही ऐसे भारतीय नेता थे जो बिना रोक-टोक के भारत और इंग्लैण्ड में उच्चाधिकारियों से मिलते रहते थे। अंग्रेज उन्हे अपना मित्र समझत थे। यद्यपि वे कभी-कभी भारत में अफसरों की आलोचना भी किया करते थे।

आज कल भारत में भाषा सम्बन्धी चल रहे विवाद के सिलसिले में गोखले की दक्षिण अफ्रीका की यात्रा की एक घटना दिलचस्प लगेगी। गाँधी जी भारतीयों से हमेशा गुजराती में अथवा हिन्दुस्तानी में बात करते थे, जिसे वे भारत की राष्ट्रभाषा कहते थे। गोखले हिन्दुस्तानी नहीं जानते थे। गाँधी जी ने उन्हें सुझाया कि वे अपनी मातृभाषा मराठी में बोले और वे (गाँधी जी) उसका हिन्दुस्तानी में अनुवार कर देंगे। गोखले जोर से हंसे और बोलें "मैं आफकी हिन्दुतानी की तह तक पहुँच गया हूँ। यह ऐसी दक्षता है जिस पर आपको बधाई तो नहीं दी जा सकती। परन्तु आप मराठी का हिन्दुतानी में अनुवाद करना चाहते हैं, क्या मैं पूँछ सकता हूँ कि मराठी का इतना गम्मीर ज्ञान आपकों कहाँ से प्राप्त हुआ" गाँधी जी ने जवाब दिया "जो बात मेरी हिन्दुस्तानी के सम्बन्ध में सच है, वही मराठी के बारे में भी सच है। मैं मराठी का एक शब्द नहीं बोल सकता परन्तु मुझे विश्वास है कि विषय की जानकारी होने के कारण मैं आपके मराठी भाषण का मतलब समझ जाऊँगा। खैर, आप स्वयं देखेंगे कि मैं आपकी बात को सही-सही बताता हूँ या नहीं। और भी दूसरे लोग हैं जो मराठी अच्छी तरह जानते हैं और आपके दुभाषिया हो सकते हैं। परन्तु शायद वह आपको पसन्द नहीं होगा। इसलिए मेरी बात मानिए और कृपा कर मराठी में जरुर बालिए। मैं भी अपने कोंकण मित्रों के साथ आपका मराठी भाषण सुनने का इच्छुक हूँ।" गोखले ने जबात दिया "आप तो अपनीजैसी ही करेंगे। मेरे लिए कोई दूसरा उपाय भी नहीं है क्योंकि यहाँ मैं आप पर निर्भर हूँ।"

गोखले दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों से मराठी में बोलते। गाँधी जी उनके भाषण का हिन्दुस्तानी में अनुवाद करते।

इसी यात्रा में गोखले जी ने गाँधी जी से कहा था कि अब दक्षिण अफ्रीका में उनकी आवश्यकता नहीं है। उन्हें भारत आकर कार्य करना चाहिए।

(2) काशी हिन्दू विश्वविद्यालय स्थापना समारोह:

भाारत में आने पर गाँधी को गोखले ने यह राय दी थी कि तब तक राजनीति में हिस्सा न लें जब तक भारत वे एक बरस रहकर राजनीतिक स्थिति का अध्ययन न कर लें। वे इसलिए हमेशा घूमते रहते थे। फरवरी 1916 में जैसे ही गोखले द्वारा लगाीय गयी एक साल के मौन की अवधि समाप्त हुई, गाँधी जी की कई सार्वजनिक महत्वकी बातों पर अपने विचार प्रकट करने का मौका मिला। अवसरथा बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय का वाइसराय लार्ड हार्डिज द्वारा शिलान्यास। मालवीय जी ने इस अवसर पर भारत के देशी राज्यों के अनेक राजाओं को आमंत्रित किया था। उन्होंने गाॅण्धी जी को भी आमंत्रित किया था, उपस्थित रहने और बोलने के लिए श्रीमती एनीबेसेंट भी इस उत्सव में भाग लेने के लिए आमंत्रित थीं। शिलान्यास समारोह की समाप्ति के बाद, जब वाइसराय चले गये तक सभा की अध्यक्षता दरभंगा महाराजा ने की। जब गाँधी जी से बोलने को कहा गया तो उन्होंने <u>इस बात पर दु:ख प्रकट कियाकि सारी कारवाई अंग्रेजी में की गयी। उन्होंने कहा कि लोगों की प्रतिभा का कोई अवसर नहीं मिलता, यदि विद्यार्थियों को अपने विकासशील वर्षों का एक विदेशी भाषा सीखने में व्यतीत कर देना पडे।</u> उन्होंने श्रोताओं का ध्यान इस बात की ओर भी दिलायाकि काशी विश्वनाथ के मुख्य मंदिर में दर्शन के लिए जाने का रास्ताा संकरी और गन्दी गलियों से होकर है। लोगों की इसकी इतनी आदत पड़ गयी है कि उन्हें यह बुरा नहीं लगता।

श्रोता, राजागण बेचैन हो गये जब गाँधी जी ने कहा '-हिज हाइनेस महाराजा ने जिन्होंने कल हमारी इस सभा की अध्यक्षता की थी, भारत की दरिद्रता की चर्चा की थी।" दूसरे वक्ताओं ने भी इसकी चर्चा बड़ी गम्भीरता से की, परन्तु हम लोगों ने कल इस विशाल मण्डप में, जिसमे वाइसराय द्वारा शिलान्यास समारोह सम्पन्न हुआ, क्या देखा: निश्चय ही एक शानदार

बड़ तमाशा, रत्नों और आभूषणों का ऐसा प्रदर्शन कि यदि पेरिस का बड़े से बड़ा जौहरी आता तो उसकी आंखे तृप्त हो जाती। मैं आभूषाणों से लदे धनी अभिजात वंशीय पुरुषों की तुलना करता हूँ, गरीबों से। इन राजा महाराजाओं से मेरी यह कहने की इच्छा होती है, "भारत का उद्धार तब तक नहीं हो सकता जब तक आप लोग इन आभूषणें को न उतार फेंके और इन्हें अपने देशवासियों के हित में थाती के रूप में न रखें" 'महाशय, जब कभी मैं भारत की किसी महानगरी में एक विशाल महल के निर्माण की बात सुनता हूँ तो मुझे फौरन ईर्ष्या होती है और मैं कहता हूँ, अच्छा यह तो वही रूपया है, जो किसानों से आया है। उन्होंने साथ ही यह भी कहा कि वाइसराय के आगमन के कारण ऐसा लगता है कि जैसे बनारस पर घेरा डाल दिया गया हो। वाइसराय की सुरक्षा के लिए हर जगह पुलिस बैठा दी गयी है, शासक होते हुए भी वह हमेशा भयग्रस्थ रहते हैं। हद तब पहुँची जब गाँधी जी ने क्रान्तिकारियों की हिंसात्मक कारवाइयों की चर्चा की। उन्होंने उनके तरीके की निन्दा तो की पर उनकी देशभक्ति की प्रशंसा की। गाँधी जी ने कहा- "मुझसे कहा गया है कि यदि कुछ लोगों ने बमों का प्रयोग न किया होता तो हम लोगों को बंग-भंग के सिलसिलें में जो मिला वह न मिलता।" इस पर श्रीमती बेसेन्ट ने चिल्लाकर कहा, "कृपया इसे बन्द कीजिए", लेकिन गाँधी जी बोलते चले गये- 'यही बात मैंने बंगाल की एक सभा में कही थी जिसकी अध्यक्षता श्री लायल ने की थी। मैं समझता हूँ कि जो कह रहा हूँ वह कहना आवश्यक है। इसी मौके पर पर श्रीमती बेसेन्ट, सभा के अध्यक्ष और कई राजा शान के साथ, यदि उनके पास कुछ थी, सभा से बाहर निकल गये। इस घटना के सम्बन्ध में गाँधी जी ने बाद में अपने एक मित्र से कहा-"मैंने श्रोताओं को ऊबकर जाते हुए देखा है, मैंने वक्ताओं को बैठ जाने के लिए मजबूर किये जाते देखा है परन्तु मैंने स्वयं अध्यक्ष को अपनी सभा छोड़कर जाते हुए कभी नहीं देखा है।" रात को पुलिस कमिश्नर ने एक हुक्म जारी कर गाँधी जी को तुरन्त बनारस से चले जातने की आज्ञा दी। मालवीय जी के कहने से वह मानगया और हुक्म तामील नहीं हुआ। लेकिन गाँधी जी दूसरे दिन प्रातः बनारस से चले गये।

(3) कांग्रेस का लखनऊ अधिवेशन:

गाँधी जी १९१५ और १९१६ के बम्बई और लखनऊ के कांग्रेस अधिवेशन में सर्मिलित हुए। इन अधिवेशनों में उन्होंने कोई उल्लेखनीय भाग नहीं लिया। लखनऊ कांग्रेस अधिवेशन में उन्होंने दक्षिण अफ्रीका परएक प्रस्ताव पेश किया था। छोटे भाषण से इसका बिल्कुल आभास न हा सका कि यह व्यक्ति कितना दमदार है। जब उनसे अपना प्रस्ताव पेश करने को कहा गया, तो उन्होंने लखनऊ में, जहाँ सबसे अच्छी हिन्दुस्तानी बाली जाती है, अपनी टूटी-फूटी हिन्दुस्तानी में बोलना शुरु किया। प्रतिनिधि चाहते थे कि वे अंग्रेजी में बोलें। गाँधी जी इस तरह आसानी से मानने वाले नहीं थे। उन्होंने कहा वे श्रोताओं को हिन्दुस्तानी सीखने के लिए एक साल का समय देते हैं। यदि वे चूक गये तो उन्हीं का नुकसान होगा, क्योंकि कांग्रेस मंच से वे फिर कभी अंग्रेजी में नहीं बोलेंगे।

(4) सहिष्णु गोखले

गोपाल कृष्ण गोखले के सहिष्णुता की अनेक कथायें प्रचलित हैं। एक इस प्रकार है-'गोखले ने अपने जीवन काल में सात बार इंग्लैण्ड की यात्रायें की थी, एक यात्रा में-'अपने एक मित्र के पत्र के आधार पर गोखले ने इंग्लैण्ग में अपना एक वक्तव्य दिया। पुलिस ने उस वक्तव्य के आरोपों के सम्बन्ध में उनसे प्रमाण मांगा। प्रमाण बिना मित्र का उल्लेख किये नहीं दिया जा सकता था। उधर मित्र ने पत्र में ही उन्हें कभी भी अपना उल्लेख न करने के लिए सौगन्ध दिलाई थी। फलस्वरूप मित्र की रक्षा हेतु वे मौन रह गये। वापसी यात्रा में पुलिस ने उन्हें मुम्बई पहुँचने पर गिरफ्तार करने की योजना बना ली थी। मित्र के लिए उन्होंने सरकार से कह कर क्षमा मांग ली कि "उन्होंने अनुचित वक्तव्य दिया था" यद्यपि सारा देश उन्हें 'कायर' जैसे सम्बोधन देने लगा, किन्तु गोखले ने वास्तविक तथ्य प्रकट नहीं किया-'शंकर ने गरल पान' कर लिया, तथापि अपने 'गुरुदेव' रानडे से उन्होंने तथ्य नहीं छिपाया था। प्रणबद्ध गोखले ने कोई सफाई नहीं दी, दूसरे की रक्षा के लिए लांछन का वह गरल चुपचाप पी लिया। जीवन भर उन्होंने यह भेद नहीं खोला।

With Best Compliments &
...for a sweeter life

From:

MAWANA SUGAR WORKS, MAWANA (DISTT. MEERUT)

(Crushing Capacity 11000 TCD) (Unit of Mawana Sugars Limited, New Delhi)

THE MARKET LEADER IN BRANDED SUGAR &
MANUFACTURERS OF PURE WHITE CRYSTAL SUGAR

अद्भुत क्रान्ति द्रष्टा "विनोबा"

श्री श्याम मनोहर
सचिव, भारतीय आदिम जाति सेवक संघ, नई दिल्ली

"सवै भूमि गोपाल की" यही तो मूल मंत्र था बीसवीं शताब्दी के उस अद्वितीय भारतीय संत का, जिसने प्रेम-शान्ति, सत्य और अहिंसा की अनन्य भावना हृदय में धारण कर, मानवता के कल्याण हेतु अहर्निश चिन्तन ही नहीं, प्रयोग सिद्धि हेतु उठे अपने प्रत्येक कदम में "भगवान-वामन" की 'विराटता' प्रदर्शित करते हुए, सम्पूर्ण धरा पर, प्रत्येक पग पर, विकास-जागरण और प्रगति का अजस्त्र 'शंखनाद' करते हुए, भारतीय समाज में उस अनोखी और अद्‌भुत क्रान्ति का समारम्भ किया, नाम जिसे 'भूदान यज्ञ' का मिला, कार्य जिसने 'दरिद्र नारायण' के लिए किया, यज्ञाहुति जिसमें 'भूमिपतियों' ने डाली, 'मंत्रोच्चार' जिसमें अन्तरिक्ष से पूज्य आत्माओं ने किया, और 'भूदान यज्ञ' के विशाल 'यज्ञकुण्ड' से उठता हुआ विश्वकल्याणकारी, सुख-शान्ति धारी— 'यज्ञ-धूम' ने समस्त भारतीय भू-मण्डल को आच्छादित कर लिया होता, यदि सही रूप में 'भारतीय समाज' ने अपने अन्तः के उठते 'दूषित अशान्ति-धूम' को हटाकर वहाँ 'भूदान-यज्ञ-धूम्र' को स्थान दिया होगा।

कृष-काय, उच्च ललाट, ठुड्डी पर छोटी से धवल दाढ़ी, घुटने तक लिपटी खादी की आधी धोती में अपने 'अर्धनग्न' तेजस्वी शरीर को ढके, हाथ में लाठी, आँखों पर ऐनक और पैरों में मजवूत किन्तु सादी सी चप्पल पहने, लघुकाया में विश्व की विराटता का 'बीजमंत्र' संजोये, महासंत विनोवा भावे का जन्म ग्यारह सितम्बर अठारह सौ पन्चान्नवे (11/09/1895) को महाराष्ट्र के 'गंगोवा' नामक ग्राम में पिता नरहरि राव की छत्र छाया में माता रखुभाई के गर्भ से हुआ था।

हाईस्कूल पास नरहरि राव एक सरकारी कार्यालय में 'टाइपिस्ट' की नौकरी करते, घर के अन्दर माता रखुभाई 'वैदिक-भारतीय नारी' की प्रतिमूर्ति बनी, भगवद् भक्ति, गरीब की सेवा और मुँह से स्वनाम धन्य मराठी संतों के पदों की गुनगुनाहट के मध्य, अति सादगी से अतिथि सत्कार, पति-सेवा और 'शिशु-सुसंस्कार' के बीजारोपण में रात-दिन लगी रहती थीं। दीन-दुखियों की सेवा सहायता करने में वे अपने लाभ-हानि की चिन्ता नहीं करती थीं।

वड़ौदा में प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त कर, वालक 'विनायक राव भावे' (विनोवा) ने, 1913 में हाईस्कूल की परीक्षा उत्तीर्ण की, गणित इनका प्रिय विषय था, उसी काल में उन्होंने 'फ्रेंच' भाषा का भी ज्ञान प्राप्त कर लिया, इण्टर की भी परीक्षा उत्तीर्ण की, अब तैयारी थी बी० ए० की, पूरी तैयारी की, परीक्षा बम्बई में होनी थी, चलने की वेला भी आ गयी, फिर पता नहीं उनके 'वैरागी' मन में क्या आया, भोजन बनाती माता जब चूल्हे के पास आग जला रही थीं, उन्होंने अपने सभी शिक्षा प्रमाण पत्र उसी आग की भेंट कर दिया 'स्वाहा'। माँ ने पूछा—"विनायक ये क्या किया तूने?" "माँ! तेरे विनायक को इनकी जरूरत ही क्या?" माँ बेटे का मुँह ही ताकती रह गयी। बेटे ने फिर कहा—"माँ मैं काशी जाऊँगा—माँ! मुझे संस्कृत पढ़नी है, जाऊँ माँ? और माँ की आज्ञा प्राप्त कर विनायक राव काशी प्रस्थान कर गये।

काशी प्रवास में 'विनायक' संस्कृत का अध्ययन करते, दिन-रात अध्ययन केवल अध्ययन, और कभी-कभी गंगा की ओर निकल पड़ते, सीढ़ियों पर बैठे गंगा की शान्त उजली धारा को निरखते, चिन्तन करते, बैठे रहते। कभी वहीं गंगा तट पर बैठे-बैठे 'कवितायें' लिखते, लिखते जाते, लिखते जाते और फिर सभी को उठाकर 'पतित-पावनी गंगा' की लहरों में विसर्जित कर उठ खड़े होते, 'गंगा' से एक 'अंजुरी' जल उठाते, पीते और वापस आ जाते अपने आवास पर, कुछ सोचते— कुछ विचारते— कुछ मनन करते......... ? ...... ? ..... ?

अपने कालेज जीवन में ही विनायक भावे ने 'बड़ौदा सेन्ट्रल लाइब्रेरी' की सम्पूर्ण पुस्तकों का अध्ययन कर डाला था, वहुत ही तीव्र गति से उनका अध्ययन चलता था। न खेलकूद, न नाच-तमाशा, न मित्र मण्डली, वस अध्ययन— मात्र अध्ययन, फिर मनन। वे सोचा करते देश की परंत्रता को, वे सोचा करते, लोगों के संताप को, सोचते-सोचते व्याकुल हो उठते, मन पीड़ा से भर उठता, तव वे फिर चल पड़ते सुरसरि के सानिध्य में, शान्ति की आकांक्षा, समाधान की आशा में। मार्ग की गगनचुम्वी अट्टालिकाओं के 'वैभव' और मार्ग के किनारे 'चिथड़ों' में लिपटे 'दरिद्र' नारायण को निहारते बिसूरते......, फिर वही गंगा तट, वही लेखनी, वही कागज, हृदय के उमड़ते 'भाव' और फिर वही 'विसर्जन' न अर्चन-न-वन्दन, वस एक 'अंजुरी' जल का आचमन....। ऐसे ही हठात एक दिन सुरसरि तीर जैसे उन्हें कोई समाधान मिल गया— और हो उठा संकल्प— "मैं आजीवन ब्रह्मचर्य, अखण्ड 'ब्रह्मचर्य' का पालन करूँगा" अव विनायक का मन काशी में न लगता, उन्हें लगता जैसे कोई उन्हें हिमालय की ओर बुला रहा हो— मन खिंचने लगता, इच्छा करती मन की डोर के साथ पहुँच जाऊँ, हिमालय की प्रशांत हिम-मण्डित चोटियों पर,

'पतंग' की तरह, और ऐसे ही अन्तर्द्वन्द्व में एक दिन काशी में ही.... उन्हें एक राह दिख गयी......।

गाँधी जी की एक सभा आयोजित की गयी थी काशी में, 'अप्रतिम संत' का 'प्रभामण्डल' उस समय तक सम्पूर्ण भारतीय 'तिमिराच्छन्न' आकाश को विदीर्ण करने और 'उज्ज्वल-ज्योति रेख' की आभा फैलाने का अनवरत और सफल प्रयास कर रहा था। 'विनायक' भी गये थे उनका भाषण सुनने, और गांधी के 'गुरु-गम्भीर' भाषण को सुनते ही मानो उन्हें अभीष्ट मिल गया, अन्तर्द्वन्द्व मिट गया, —उन्होंने तय कर लिया 'नहीं जाना है, हिमालय नहीं जाना है। मंजिल की राह मिल गयी, चल दिये 'मानस-गुरू-छाया' के आश्रय हेतु —'साबरमती आश्रम' की ओर।'

साबरमती आश्रम में गाँधी जी की छत्र-छाया में सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह, ब्रह्मचर्य और अस्वाद की कठोर साधना, ऋषिवत दिनचर्या, तेज बढ़ता गया, संयम का प्रभामण्डल विस्तार लेता रहा और तभी एक दिन बापू ने विनायक को बुलाया, कई लोग बापू के पास बैठे हुए थे। वैदिक ऋषि परम्परा का सम्पूर्ण-मूर्त-रूप तेजस्वी, ब्रह्मचारी, विनयावनत हो बापू के समक्ष खड़ा हो गया, कुछ क्षण बापू स्नेह भरे पनीले-नेत्रों से विनायक को निहारते रहे फिर खड़े होकर उसके सिर पर 'आशीष' का वरदहस्त फेरते हुए कहा—'विनायक' इतनी छोटी सी अवस्था में जो तेज और संयम-वैराग्य तुमने प्राप्त कर लिया, उसे प्राप्त करने में तो मुझे न जाने कितना समय लग जाता। और उसी दिन बापू ने उन्हें 'विनायक' से 'विनोबा' बना दिया, 'विनोबा भावे'।

सन् 1929 में 'विनोबा भावे' बापू की आज्ञा से साबरमती छोड़ 'वर्धा' चले गये। 'वर्धा आश्रम' की स्थापना में 'विनोबा' का सर्वाधिक योगदान रहा। विनोबा ने 'साबरमती आश्रम' में जिस सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य की भावना को धारण किया था, वर्धा आश्रम में उसे व्यावहारिकता का जामा पहनाया, तपाया, निखारा और बलिष्ठ बनाया, साथ ही साथ महात्मा गाँधी द्वारा आयोजित सत्याग्रह आन्दोलन के 'प्रथम सत्याग्रही' भी बने जिसके कारण उन्हें 2-3 बार कारावास का दण्ड भी भोगना पड़ा। 'भाषण-प्रतिबन्ध' तोड़ने के उपलक्ष में 1940 में उन्हें अन्तिम बार कारावास की यात्रा करनी पड़ी थी।

कारावास से रिहाई के बाद 'पवनार' नामक स्थान पर रहकर वे 'ग्रामोन्नति' के कार्य व विचार में संलग्न हो गये। 1947 में भारत स्वतंत्र हो गया, एक ही वर्ष बाद 'बापू' शहीद हो गये, अब बापू के 'विनोबा' ने गाँधी चिन्तन को व्यावहारिकता में परिणत करने के लिए 'हरिजनोद्धार', 'हिन्दू-मुस्लिम एकता' एवं 'दरिद्र नारायण' के कल्याण हेतु दिल्ली, अजमेर, मध्य प्रदेश, हैदराबाद आदि स्थानों पर 'देश-बँटवारे' से उपजे, अति भयंकर घावों को सहलाते, भाई-चारे, विश्व-बन्धुत्व का संदेश देते, जाति-धर्म-सम्प्रदाय के नाम पर पशुवत लड़ते मानवों को, बापू के 'शान्ति संदेश' का अमरदीप हाथ में ले, वे 'मानव बन्धुता' का अलख जगाने लगे।

अपने जीवन के अन्तिम काल में गाँधी जी ने, पीड़ित मानवता के उद्धार हेतु 'सर्वोदय' की कल्पना की थी। इसी 'सर्वोदय' का सन् 1952 में हैदराबाद में सम्मेलन आयोजित किया। इस सम्मेलन में सहभागिता हेतु विनोबा ने ट्रेन, बस की यात्रा त्याग, पाँव-पैदल, जन-जागरण करते पहुँचने का निश्चय किया और हैदराबाद पहुँचते-पहुँचते अनुयाइयों का एक जन-सैलाब साथ में हो गया।

हैदराबाद 'सर्वोदय' सम्मेलन के पश्चात् ही विनोबा जी का वह महानतम कार्य जिसका उदाहरण— विश्व के पटल पर कहीं नहीं देखा गया, प्रारम्भ हो गया। वह महानतम जनकल्याण कार्य था 'भूदान यज्ञ'। हैदराबाद सम्मेलन में ही यह तय किया गया कि, उन जमींदारों, खेतिहरों और सरमायेदारों के पास, जिनके अधिकार में अधिक जमींन हो, उन्हें सद्व्यवहार, प्रेम और भाई-चारे के साथ इस बात के लिए प्रेरित किया जाय कि वे अपनी भूमि इस 'भूदान यज्ञ' में दान करें, और पीड़ित, दुखियारे, निर्धन, दम तोड़ते उन गरीब मानव-समाज को दें जो तड़प-तड़प कर, भूमिहीन हो, नारकीय जीवन बिता रहे हैं।

'अल्पकाल में ही, 'विनोबा' की कीर्ति, उनका यश और उनके 'कृतित्व' की चर्चा देश के शहर-शहर, गाँव-गाँव और जन-जन में होने लगी। 'भूदान यज्ञ' में अपनी सहभागिता के लिए देश के कोने-कोने से लोग उठ खड़े हुए। आंध्र, केरल, बंगाल, उत्तर प्रदेश, विहार और सम्पूर्ण भारत में— सहयोगी साथियों के साथ, पैदल घूमते, भूमि दान लेते, भूमि दान करते, जयकारों के मध्य, 'मानवता' के कल्याणार्थ घूमते 'अमन' के इस फरिश्ते ने, करोड़ों वीघे भूमि द्वारा इस महायज्ञ की 'पूर्णाहुति' सम्पन्न की।

'भूदान यज्ञ' चल ही रहा था कि उन्होंने एक कार्यक्रम और चलाया 'सम्पत्ति दान'। भूमि की ही तरह सेठ साहूकारों, राजा महाराजाओं, अमीरों-गरीवों, हिन्दू-मुसलमानों सबसे उन्होंने सम्पत्ति, धन, रुपये-पैसे माँगकर जरूरत मंदों को देने का कार्य प्रारम्भ कर दिया।

बात 1952 की है, जब विनोबा जी विहार दौरे पर पैदल भ्रमण कर रहे थे, ज्वराक्रांत हो गये— एक तो ज्वर, दूसरे पैदल भ्रमण का कठोर परिश्रम, विनोबा कमजोर होने लगे, लोगों ने उनसे औषधि और उपचार लेने के लिए आग्रह करना प्रारम्भ किया, किन्तु उन्होंने इसे स्वीकार नहीं किया, विनोबा 'मूर्च्छित' भी होने लगे। देश में हाहाकार मच गया, आग्रह पर आग्रह, विनय पर विनय किन्तु दृढ़निश्चयी विनोबा का औषधि न लेने का हठ, कोई भी आग्रह न मिटा सका। राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्र प्रसाद भी उनके पास गये, आग्रह किया, अन्त में लोगों की विनय ने, उनकी प्रार्थना ने, विनोबा को विवश कर दिया और उन्होंने मात्र 'कुनैन' लेना स्वीकार कर ही लिया।

कुनैन ने उन पर जादू का असर किया वे ज्वर मुक्त हो गये, फिर वही पैदल भ्रमण, फिर 'भूदान', 'सम्पत्ति दान' का महायज्ञ, फिर पीड़ित मानवता के उद्धार और विकास का सतत प्रयत्न, शान्ति, मानवता और

बन्धुत्व का अखण्ड प्रज्वलित दीप लेकर, भारत के कोने-कोने में अलख जगाना प्रारम्भ हो गया। अनवरत परिश्रम, जर्जर कृषकाया, अनवरत साधना, दधीज जैसी महान आत्मा और दृढ़ संकल्पव्रती उस वृद्ध तेजस्वी महासंत की यथार्थ, मानवता कल्याणार्थ अथक व अनन्त उपक्रम चलता रहा।

'भूदान', 'ग्रामदान', 'सम्पत्तिदान' के अतिरिक्त, सर्वोदय की परिकल्पना, तत्सम्वन्धी प्रचुर साहित्य रचना, कार्यकर्ता निर्माण, सुपात्रों को दान और भारत के 'दरिद्र-नारायण' की षोडसोपचार पूजा के अतिरिक्त, 'गाँधी का मानसपुत्र' ने 'गाँधी के भारत' में प्रथम परिकल्पना 'ग्राम स्वराज्य' के अनुपम ढाँचे का निर्माण करते हुए, सन् 1980 (उन्नीस सौ अस्सी) तक मनसा, वाचा, कर्मणा अनवरत कार्य किया।

अव 'महासंत' अत्यधिक जर्जर हो गये, 'औषधि-विराग' प्रारम्भ से ही था, औषधि नहीं ली, लोगों का आग्रह काम न आया, "राम-हरि-वोल, राम-हरि-वोल" की धुन चलती रहती, कार्यकर्ता साथियों के साथ उनका परिहास भी पूर्ववत चलता रहा.......। उनके अभिन्न साथी श्री राम प्रवेश शास्त्री ने लेखक से वताया—"एक दिन आचार्य जी के पास हम सभी बैठे थे, कुछ चर्चायें चल रही थीं, एकाएक वावा वोले....... अरे 'सुनो भाई सुनो!' 'वी' फार 'भूदान', 'वी' फार 'वावा ', 'वी' फार 'भारत' और 'वी' फार 'वोगस' और यह कहते-कहते बड़े मस्ती से हँसने लगे, हमने उनकी यह अन्तिम बार हँसी सुनी थी।"

1981 का नवम्वर माह चल रहा था, अव वावा ने 'अन्न-जल' त्याग दिया था, उनका समय ध्यान में ही व्यतीत हो रहा था। 15 नवम्वर की दीपावली के दिन प्रातः 9 वजे एकाएक 'वावा' वोले—'सुनो! भगवान' महावीर स्वामी दीपावली को ही शरीर त्यागे थे न? ठीक, राम वोल, हरिवोल राम-हरि-वोल', और उड़ गया 'राजहंस'— नश्वर काया रह गई महापुरुषों की दिव्यात्माओं में एक दिव्यात्मा और जुड़ गयी 'परमात्मा' से मिलने की कतार में एक और........साधक चल पड़ा।

53 MPa तक

बिरला सीमेन्ट सम्राट
एम पी बिरला ग्रुप

आज या कल मज़बूत हर पल

सतना सीमेन्ट का उत्कृष्ट उत्पादन

बिरला कार्पोरेशन लि० (सीमेन्ट समभाग)
सतना सीमेन्ट वर्क्स, बिरला विकास सीमेन्ट
पो० आ० बिरला विकास, सतना (म०प्र०) 485005
फोन : 07672 - 250641 - 47

क्षेत्रीय विपणन कार्यालय,
बिरला कार्पो० लि० (सीमेन्ट सम्भाग)
46-A/1 लाल वहादुर शास्त्री मार्ग
(एल्गिन रोड) सिविल लाइन, इलाहावाद (यू०पी०)
फोन : 0532 - 2601824, 602448, 602017

सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसायटी
स्मरणीय क्षण

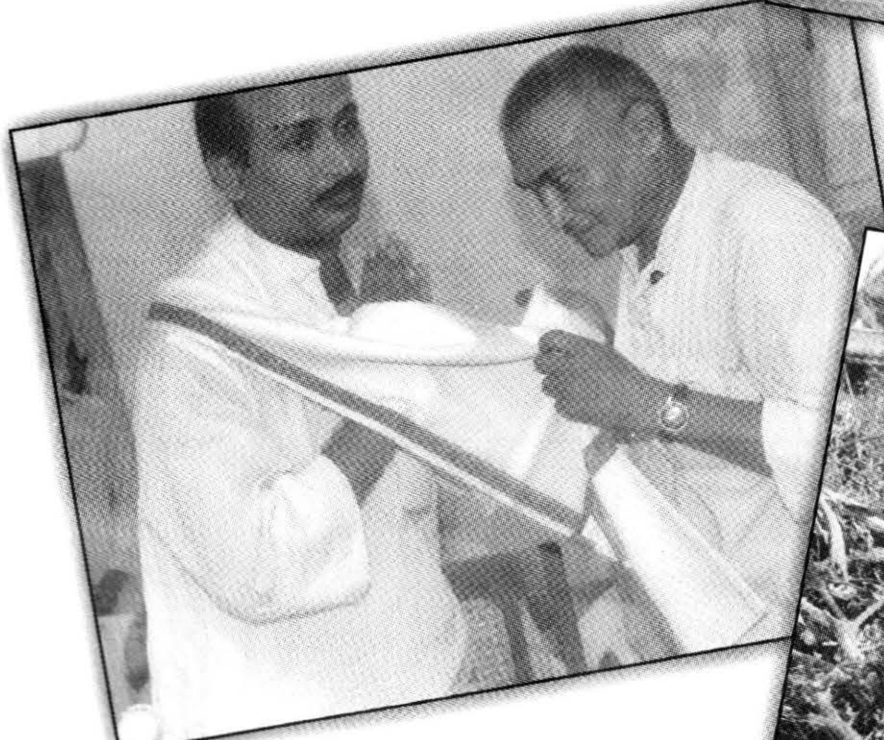

सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसायटी
जनजागरण

नशा बन्दी अभियान

नशा बन्दी अभियान

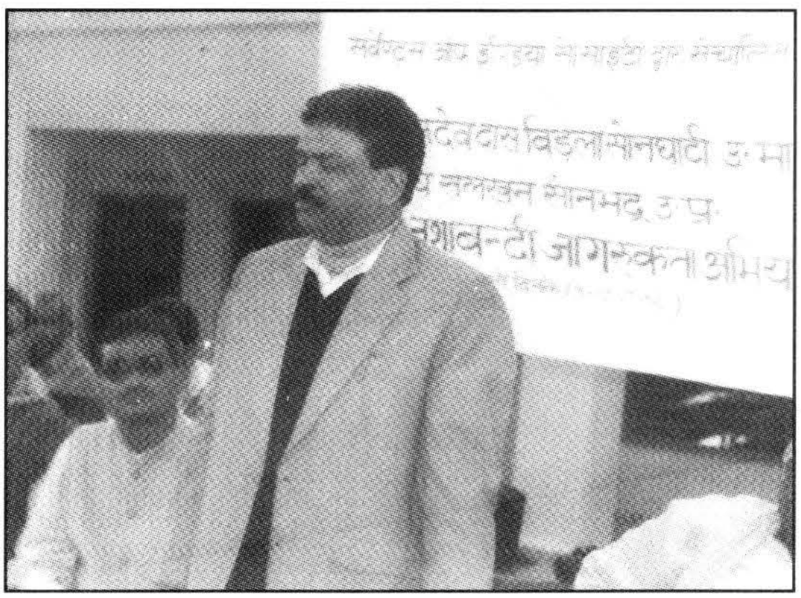

नशा बन्दी अभियान

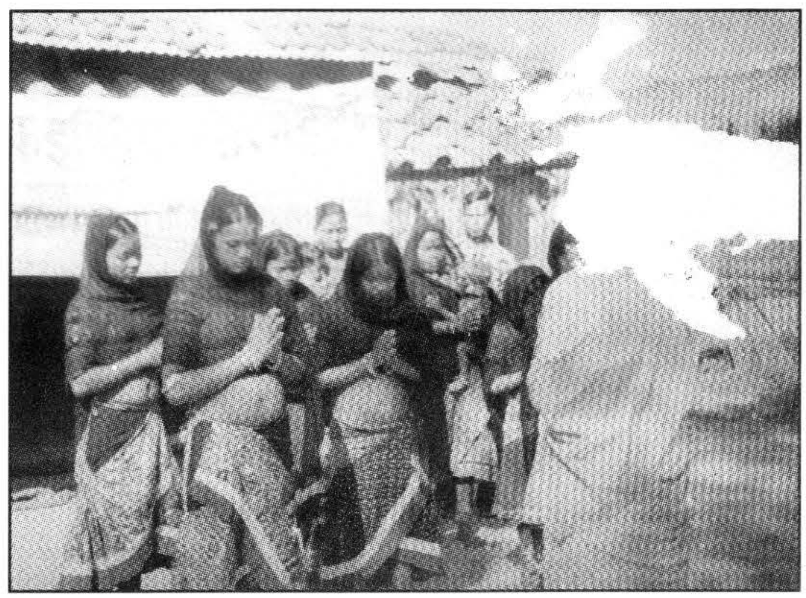

नशा बन्दी अभियान

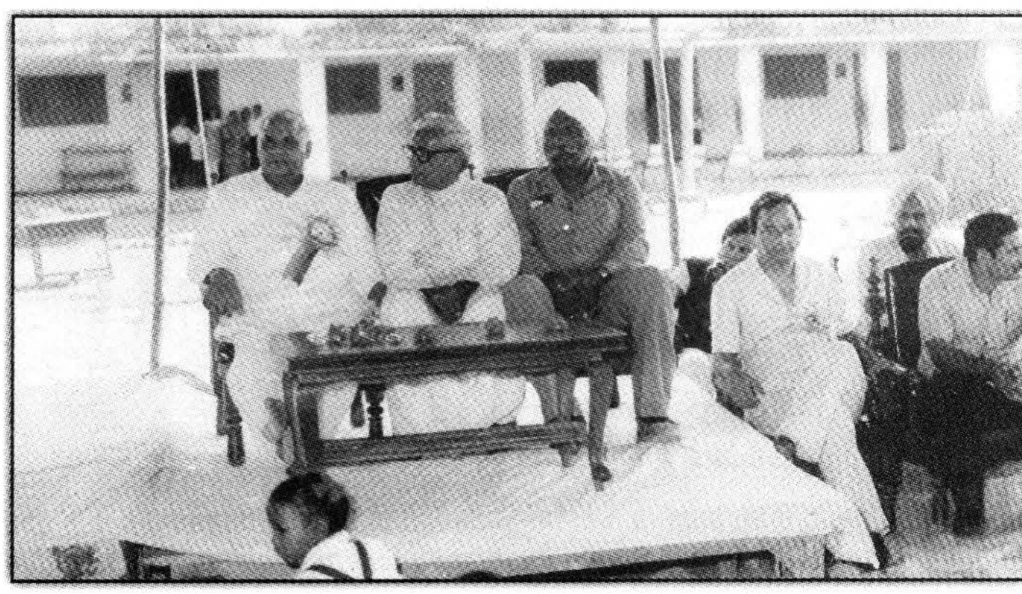

श्री सत्येन्द्र चन्द्र गुड़िया एम.पी., केदार नाथ उपाध्याय व अन्य बालिका आश्रम पद्धति विद्यालय बाजपुर में

पं० हृदय नाथ कुंजरू का संक्षिप्त जीवन

ओम प्रकाश मिश्र
सहायक अध्यापक
डॉ० एच० एन० कुंजरू जू० हा० स्कूल, १, पी० डी० टंडन रोड, इलाहाबाद

कोरी भावुकता नहीं यथार्थ चित्र है। उभरते हुए असीमित भावों को परिसीमित शब्द योजना के साथ सम्बद्ध कर पाना मेरे लिए सर्वथा असम्भव था। स्वर्गीय आत्मा का अनुग्रह एवं पं० ब्रज बिहारी मिश्र, प्रवक्ता, शिव जियावन इण्टरमीडिएट कालेज, लेड़ियारी के आग्रह से उत्पन्न भावातिरेक की परिव्याप्ति है प्रस्तुत श्रद्धांजलि।

सन् 1887 ई० में पं० अयोध्या नाथ कुंजरू के पैतृक निवास आगरा में पं० हृदय नाथ कुंजरू का जन्म हुआ। ये काश्मीरी ब्राह्मण थे। बी० एस-सी०, एल० एल० डी० की उपाधि धारण करने के उपरान्त वे देश सेवा से जुड़ गये। सन् 1905 ई० में श्री गोपाल कृष्ण गोखले ने सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी की स्थापना कर दी थी। यह संस्था आजादी की लड़ाई की रणनीति तैयार करने के लिए बनायी गई थी।

सन् 1909 ई० में यह भारत के गौरवान्वित सपूत सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी में सदस्य बनाये गये। थोड़े दिन बाद ही इस गौरवमयी संस्था के अध्यक्ष चुने गये तथा संस्था में विशेष अधिकार भी दिया गया। डॉ० कुंजरू अनेक समाजसेवी संस्थाओं से जुड़े हुए थे।

सन् 1914 ई० में मदन मोहन मालवीय के साथ अखिल भारतीय सेवा समिति की स्थापना की तथा इसके बाद श्रीराम वाजपेयी के साथ भारत स्काउड गाइड की स्थापना कर अखिल भारतीय कमिश्नर हुए। डॉ० कुंजरू रेलवे बोर्ड के भी अध्यक्ष बने। डॉ० कुंजरू इलाहाबाद, वाराणसी, दिल्ली विश्वविद्यालय के अध्यक्ष पद पर आसीन हुए।

डॉ० हृदय नाथ कुंजरू सन् 1927 ई० में पं० मोती लाल नेहरू, पं० मदन मोहन मालवीय के साथ इंग्लैण्ड की महारानी एलिजाबेथ के दरबार में गये। महारानी इनकी विद्वता, दूरदर्शिता एवं समाज सेवा पर मुग्ध होकर एक प्रशस्ति पत्र, तलवार देकर दरबार में सम्मानित किया।

पं० कुंजरू भारत के संविधान बनाने वाले सदस्यों में अग्रगण्य विपक्ष की भूमिका सुचारू रूप से 395 धाराओं और 8 अनुसूचियों की की थी।

15 अगस्त 1947 ई० से लगातार आजीवन लोकसभा, राज्यसभा के यशस्वी सांसद रहे। डॉ० कुंजरू विधि एवं वित्त के विशेष ज्ञाता भी थे। वित्त विधेयक पर बहस संसद में डॉ० कुंजरू जी से ही कराया जाता था।

डॉ० कुंजरू अनुशासन और समय को बहुत महत्व देते थे। स्व० राज्यपाल कन्हैया लाल माणिक लाल मुन्शी इलाहाबाद में आये। डॉ० कुंजरू से मिलने का समय माँगा। डॉ० कुंजरू ने दूसरे दिन राज्यपाल महोदय को मिलने का समय दिया। दूसरे दिन राज्यपाल महोदय के मिलने के समय से 5 मिनट पहले सर्वेन्ट्स ऑफ इण्डिया के कार्यालय बैठ गये। कुंजरू 10 बजकर 5 मिनट पर कार्यालय के अन्दर कमरे में चले गये। महामहिम के 5 मिनट देर से आने के कारण राज्यपाल महोदय को वापस कर दिया लेकिन महामहिम राज्यपाल महोदय मिलने की इच्छा जाहिर ही करते रहे तो डॉ० कुंजरू ने तीसरे दिन 10 बजे का समय दिया। यह था डॉ० कुंजरू के समय का महत्व।

डॉ० कुंजरू को राष्ट्रपति जाकिर हुसैन भारत रत्न से विभूषित करना चाहते थे। भारत के इस महान सन्यासी ने सर्वश्रेष्ठ सम्मान ग्रहण करने से इन्कार कर दिया। डॉ० कुंजरू आजीवन समाज सेवा करते हुए 3 अप्रैल 1978 ई० में इस दुनिया से विदा हो गये।

पं० हृदय नाथ कुंजरू भारत एवं विदेशों में विभिन्न गूढ़ विषयों पर बोलने के लिए बुलाये जाते थे। इण्डियन कौसिल ऑफ वर्ड अफेयर, जो जुलाई 1965 में मैसूर विश्वविद्यालय में सम्पन्न हुई थी, उसमें उन्होंने भारत की विदेश नीति पर अपना व्याख्यान दिया था, जो बाद में चलकर भारत की विदेश नीति का आधार बना। मैसूर विश्वविद्यालय में ही उन्होंने अमेरिकन प्रोफेसरों के बीच शिक्षा पर अपना व्याख्यान दिया था। आर्थिक मामलों पर उनका व्याख्यान सुनने के लिए विद्वान उत्सुक रहते थे। उनके व्याख्यान को सुनने के लिए उच्च न्यायालय एवं उच्चतम न्यायालय के वरिष्ठ वकील भी अपना कार्य छोड़कर आते थे। भारतीय संविधान की व्याख्या, जैसा की पं० कुंजरू साहब करते थे, उसकी बराबरी करने वाला देश में कोई अन्य विद्वान नहीं हुआ।

अमृत लाल ठक्कर (ठक्कर बापा)

डॉ० रामजीत शुक्ल
सम्बद्ध सदस्य स०इ० सोसाइटी

भारत माँ के अमर सपूत श्री अमृत लाल ठक्कर ने एक इंजीनियर के रूप में अपना जीवन प्रारम्भ किया। उनके मातहत उन्हें प्यार से "इंजीनियर साहब" कहते थे। नौकरी को भी उन्होंने सेवाभाव के रूप में लिया। परसेवा से उन्हें आत्मतुष्टि होती। सेवा भाव उनके रगों में बसा था। विरासत में यह उन्हें अपने पिता श्री बिट्ठलदास ठक्कर से मिली थी। बम्बई (मुम्बई) म्युनिसिपैलिटी में इंजीनियर के पद पर या उससे पहले चाहे पोरबन्दर रियासत हो या युगांडा (अफ्रीका) में इस पद पर कार्य किया हो हमेशा पिछड़े, गरीब, अपाहिज, रोगी या दैवी आपदा से पीड़ित लोगों की सहायता नि:स्वार्थ भाव से करते, अपने कार्य के प्रति समर्पित रहते, कठिन से कठिन कार्य जो अन्य लोगों के लिए असंभव होता वहाँ "ठक्कर साहब" लगाये जाते। बाहर से कोमल सीधे-साधे लगने वाले ठक्कर साहब से, उनके भ्रष्ट अधिकारी डरते, पर ईमानदार मातहत उन पर अपना सर्वस्व लुटाने के लिए तैयार रहते। मुम्बई म्युनिसिपैलिटी से त्यागपत्र देकर जब सर्वेन्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी में जाने का निर्णय लिया तो उन्होंने एक पत्र अपने कार्यालय को इस्तीफे के लिए लिखा। इस पत्र में उनकी अपने कार्य के प्रति निष्ठा व अपने मातहतों के प्रति प्यार व समर्पण की झलक मिलती है—

"अपनी नौकरी के दौरान मुझे अपने मातहत काम करने वाले लोगों के साथ अपार मुहब्बत हो गयी है। इतना ही नहीं, मेरी सड़कें भी निर्जीव होने के बावजूद मेरे स्नेह की पात्र बन गयी हैं। मेरे आप्तजनों की अपेक्षा मुझे अपने इन आदमियों और सड़कों से जुदा होते हुए अधिक दु:ख हो रहा है। जैसा मेरे एक सह-कर्मचारी ने कल कहा, ऐसा लग रहा है, मानों मैं अपने अधीनस्थ सैकड़ों मनुष्यों और मजदूरों का कोई अपराध कर रहा हूँ। ऐसा लग रहा है मानो मुझ पर ममता बरसाने वाले और मुझे सदा मीठी दुआयें देने वाले इन हजारों आदमियों को निराधार बनाकर मैं चला जा रहा हूँ।"

अपनी अन्तर की आवाज पर बिना किसी की सलाह लिए नौकरी से, दृढ़ निश्चयी ठक्कर साहब इस्तीफा दे दिये। इनके इस्तीफे का प्रसंग भी बड़ा ही प्रेरणाप्रद है। समाज सेवा के क्षेत्र में प्रवेश करने वालों के लिए यह घटना हमेशा-हमेशा के लिए एक उच्च आदर्श के रूप में अपना सर्वस्व लुटाने के लिए प्रेरित करती रहेगी। उनका यह मानना था कि "भारत को अपना समग्र जीवन अर्पण करने वालों की जरूरत है; फुरसत या सुविधा के काम करने वालों की नहीं, और जब तक आजीवन कार्य करने वाले भारत को नहीं मिलेंगे, तब तक हमारी कोई प्रगति नही हो सकेगी।" गोखले जी द्वारा स्थापित संस्था सर्वेन्ट्स आफ इन्डिया सोसाइटी में बहुत ही सोच-समझ कर सदस्यों को कौंसिल के निर्णय के बाद लिया जाता था। संस्था के वरिष्ठ सदस्य श्रीनिवास शास्त्री, ठक्कर साहब की अधिक उमर (लगभग 45 वर्ष) हो जाने के कारण इन्हें संस्था में लेना नहीं चाहते थे। यहाँ पाठकों के संज्ञान में यह तथ्य भी लाना चाहूँगा कि, "गाँधी जी इसी कारण चाहते हुए भी सोसाइटी के सदस्य नहीं हो सके थे।" गोखले जी ठक्कर को पूर्व से जानते थे, ने शास्त्री को समझाया कि, "मैं आप को इतना बता देता हूँ कि, ठक्कर की श्रेणी के आदमी ही समाज में प्रतिष्ठा जमायेंगे। वे शक्तिमान, उत्साही और लगन वाले ही नहीं, बल्कि सच्चे नि:स्वार्थी और उत्तम स्वभाव के आदमी हैं।" ठक्कर साहब को संस्था का सदस्य होने के पहले गोखले के कहने पर अपने पद से इस्तीफा देना पड़ा। असमंजस की स्थिति में रहते हुए भी दृढ़ निश्चयी ठक्कर ने ऐसा निर्णय लिया। 6 फरवरी, 1914 को ठक्कर व डॉ० हरि कृष्ण देव को संस्था के आजीवन सदस्य के रूप में मा० गोपाल कृष्ण गोखले द्वारा शपथ दिलाई गयी।

इंजीनियर ठक्कर साहब अब स्वतंत्र रूप से अपने लिए ईश्वर द्वारा नियत कार्य में, जिसके लिए उनका अवतार हुआ था, तन-मन-धन से लग गये। रात-दिन, गर्मी-सर्दी, दैवी आपदा या कोई भी संकट हो, वे वहाँ (संकटग्रस्त लोगों के पास) पहुँच जाते। अस्पृश्य व आदिवासियों के बीच उनका जीवन गुजरने लगा। उन्हें अश्पृश्य एवं आदिवासियों को अपना पूर्व जन्म का संरक्षक (पिता) मिल गया। वे प्यार से ठक्कर साहब को "बापा" कहने लगे। उन्होंने "भील सेवा मंडल" की स्थापना की, उनकी सेवा में रम गये, उनके अपने हो गये। वस्त्र, दवा, शिक्षा के साथ-साथ उनको उत्तम संस्कार दिया। उनके लिए मंदिर बनवाया। देश की मुख्यधारा से दूर रहने वाले आदिवासी अपने को पहचानने लगे। अन्य समाज सेवी भी इस कार्य में जुड़ते गये। जंगलों में तीर-धनुष लेकर घूमने वाले आदिवासी बालक-बालिका आश्रमों में आकर कलम पकड़ ली और तुलसी रामायण की चौपाइयाँ गाने लगी।

अछूतोद्धार के कार्य में महात्मा गाँधी के साथ वर्ष 1933-34 में ठक्कर बापा ने पूरे भारत का भ्रमण किया। यह भ्रमण सम्पूर्ण भारत में,

लेकर हिमालय से रामेश्वर, द्वारका से जगन्नाथपुरी, अटक से कटक, थारपारकर के रेगिस्तान तथा विन्ध्य की पर्वतमालाओं से लेकर घाटियों, कछारों, जंगलों, झाड़ियों एवं गाँवों, कस्बों, नगरों की गलियों तक किया गया। 12,500 मील का सफर 270 दिनों में पूरा हुआ। जल, थल, रेलमार्ग, बैलगाड़ी, नाव, खच्चर, ऊँट तथा पैदल यात्रा करके हिन्दुओं में व्याप्त छुआछूत के उन्मूलन, आपसी भाईचारा, सफाई, शिक्षा, बेरोजगारी दूर करने के उपाय, बाह्य संसार में घटने वाली घटनाओं का संदेश जन-जन में बापू के साथ पहुँचाया। खादी का कार्य जो बहुत ही मंद पड़ गया था उसे जागृत किया। स्वाधीनता की अगली लड़ाई के लिए पृष्ठभूमि तैयार हुई। ठक्कर बापा अब आदिवासियों के ही "बापा" न रहकर देश के अन्य ऊँचे वर्गों के भी "बापा" हो गये। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी जिन्हें लोग प्यार से "बापू" कहते थे, ठक्कर को "बापा" कहकर उस पर अपनी मुहर लगा दी।

अछूतोद्धार के कार्य के साथ-साथ "बापा" ने स्वच्छकारों के कल्याण का कार्य इतनी निष्ठा व लगन से किया जिससे उनमें जागृति आयी। उनके लिए आवास, शिक्षा आदि की व्यवस्था की। इसके लिए वे उच्च वर्गीय अपने सगे-सम्बन्धियों के कोप भाजन बने, पर इसकी परवाह नहीं की। महात्मा गाँधी ने उन्हें "ढेड़ों (स्वच्छकारों) का गुरू" की संज्ञा से विभूषित किया। उनकी सेवा मानवता के प्रत्येक विधा में समान रूप से अनवरत चलती रही। अदम्य उत्साह के साथ अस्वस्थ रहने पर और अपने हितैषियों के मना करने पर भी वे सेवा से कभी विमुख नहीं हुए। उनकी सेवा का क्षेत्र इतना व्यापक था कि गाँधी जी भी उससे होड़ करने लगे थे। उन्होंने कहा है कि "मेरी महत्वाकांक्षा बापा की निःस्वार्थ सेवाओं की लंबी फूलमाला की होड़ करने की है।"

भारत के बँटवारे के समय पूर्वी तथा पश्चिमी पाकिस्तान में साम्प्रदायिक दंगे होने लगे। लोग अपना सर्वस्व छोड़कर पलायन करने लगे। लोगों की पाशविकता इतनी बढ़ गई कि बच्चों, वृद्धों, नारियों को भी नहीं छोड़ा। मकान व सम्पत्ति जला दी गईं, लाखों लोग मारे गये या जबरन मुसलमान बना दिये गये। इसका असर उत्तर प्रदेश, बिहार, दिल्ली आदि में भी हुआ। नरसंहार इतना बढ़ गया कि मानवता काँप उठी। एक तरफ हजारों वर्ष की पराधीनता के बाद स्वाधीन होने की खुशी और दूसरी ओर भीषण बर्बादी व नरसंहार। जब सारा देश 15 अगस्त 1947 को स्वतंत्रता की खुशी में लाल किले पर प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू द्वारा तिरंगा फहराने की खुशी से उछल रहा था, ठक्कर बापा, "बापू" के साथ पूर्वी पाकिस्तान (वर्तमान बांगला देश) के नोआखली के दंगों से पीड़ित मानवता के आँसुओं को पोंछ रहे थे। उनको ढाँढस बँधाते, उन्हें जीवन जीने के लिए सांत्वना देते, पुलिस व अधिकारियों को समझाते, अपने प्राणों की बाजी लगाकर वहाँ जुटे रहे। इसी बीच वे अस्वस्थ हो गये। उन्हें 104 से 105 डिग्री बुखार था। वे बहुत कमजोर हो गये थे। इसी बीच उन्हें दिल्ली आना पड़ा। उन्होंने अपने साथियों व गाँधी जी से लौटने का वचन दिया था। दिल्ली आने पर उनके शुभचिन्तकों ने उनके बूढ़े कमजोर शरीर को देखते हुए उन्हें पुनः नोआखाली जाने से रोकने का प्रयत्न किया। बापा के नहीं मानने पर सर्वेन्ट्स आफ इन्डिया सोसाइटी के तत्कालीन अध्यक्ष पं० हृदय नाथ कुंजरू जो इलाहाबाद में रहते थे, से उन्हें (बापा को) रोकने हेतु अनुरोध किया। पं० कुंजरू ने सोसाइटी के आजीवन सदस्य श्री रमाशंकर मिश्र द्वारा व्यक्तिगत रूप से पत्र भेजकर अनुरोध किया पर सेवा के प्रति अपना सर्वस्व न्यौछावर करने वाला भारत माँ का सच्चा सपूत अपने प्रण पर अटल रहा। अपनी यात्रा स्थगित नहीं की नोआखाली गये जिसको बुरा असर उनके गिरते स्वास्थ्य पर हुआ। उनका स्वास्थ्य फिर गिरता ही गया। उसके बाद वे कभी पूर्ण स्वस्थ नहीं हुए। ऐसी अवस्था में भी वे सेवा कार्य को करते ही रहे।

सेवा के साथ-साथ वे जहाँ जाते उस क्षेत्र की दशा का अध्ययन करते। पिछड़े, दलित, कमजोर और आदिवासियों एवं पीड़ितों के आँकड़े इकट्ठे करते और अपनी रिपोर्ट अधिकारियों, उच्चस्तरीय समितियों या अन्य ऐसी संस्थाओं को पहुँचाते जहाँ से उनको राहत मिलने की आशा होती। यह कार्य वे अनवरत करते रहे। गाँधी जी की राय से भारतीय आदिम जाति सेवक संघ की स्थापना की और उसके कार्य को पूरे देश में फैलाया। हरिजन सेवक संघ व कस्तूरबा ट्रस्ट का काम भी वे अन्य कार्यों के साथ-साथ करते रहते। कस्तूरबा ट्रस्ट के अध्यक्ष 'बापू' अध्यक्ष थे और 'बापा' मंत्री। बापू ने ट्रस्ट के पदाधिकारियों से कह रखा था कि, "यदि किसी मसले पर बापा से मेरा मतभेद हो तो मेरी राय न मानकर 'बापा' के अनुसार काम किया जाय।" यह थी बापा की विश्वसनीयता।

बापा सेवा के पर्याय बन गये। बापा 29 नवम्बर 1949 को 80 वर्ष पूरे किये। बापा का 81वाँ जन्म दिवस पूरे देश में आदिवासी क्षेत्रों से लेकर दिल्ली, मुम्बई, अहमदाबाद, पूना, इलाहाबाद, कटक, कलकत्ता, दाहोद, मांडला, राजकोट, भावनगर आदि स्थानों पर पूर्ण श्रद्धा के साथ मनाया गया, सभायें हुयीं। दिल्ली के समारोह में पंडित जवाहर लाल नेहरू, सरदार बल्लभ भाई पटेल, मौलाना अब्दुल कलाम आजाद, कांग्रेस अध्यक्ष डाक्टर पट्टाभि सीतारमैया आदि शामिल हुए।

सरदार बल्लभ भाई की अध्यक्षता में समारोह प्रारम्भ हुआ। संसद के अध्यक्ष श्री गणेश वासुदेव मावलंकर बापा को महान वयोवृद्ध पुरुष (Grand Old Man) बताकर कहा कि "बापा ने 80 वर्ष पूरे करने के बाद भी अपने शरीर और मन की जवानी कायम रखी है। वे बालक जैसे निर्दोष हैं। उनमें शक्ति का अटूट भंडार भरा है। आज यदि वे देश के एक कोने में गरीबों का काम करते होंगे, तो कल ठेठ दूसरे कोने में पड़े हुए दलित वर्ग का काम करते नजर आयेंगे। सेवा का काम किये बिना उनके प्राणों को चैन नहीं पड़ता। उन्हें कभी थकावट नहीं आती। सफर से वे कभी नहीं ऊबते।"

मौलाना अब्दुल कलाम आजाद ने, ठक्कर बापा की सेवाओं को याद करते हुए कहा कि, "मैं उस देश को मुबारकबाद देता हूँ जिस देश में उन्होंने (बापा ने) जन्म लिया और सेवा का काम किया।" बाबू जगजीवन राम ने बापा को "आधुनिक युग का दधीचि" कहा।

कांग्रेस के अध्यक्ष डॉ० पट्टाभि सीतारामैया ने कहा कि, "ठक्कर बापा भारत के सच्चे सेवक हैं। हिन्दुस्तान में अलग-अलग वर्ग और

जातियाँ जगह-जगह बिखरी हुई हैं। उनमें काम करके ठक्कर बापा ने भारत की राष्ट्रीयता के मंदिर का पुनर्निर्माण करने में बहुत बड़ा भाग लिया है। आज के धन्य प्रसंग पर मैं उनका अभिनंदन करता हूँ।"

भारत के प्रथम प्रधानमंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू अपनी मधुर और सरल भाषा में बोले कि, "मालूम नहीं मैं आपको आज के दिन क्या बधाई दूँ, या हम सब अपने आपको या देश को बधाई दें। बाजी लोग ऐसे होते हैं, जैसे कि आप हैं। वे सेवा के कामों में ऐसे खो जाते हैं कि इन कामों से अलग करके उनके बारे में विचार करना बहुत मुश्किल होता है। ऐसे लोग अपने आप में एक इंस्टीट्यूशन (संस्था) बन कामों के एक समूह बन गये।"

प्रधानमंत्री ने बापा के पिछड़े समाज में खो जाने के साथ कहा कि, "वैसे एक आदमी दुनिया में आता है और जिन्दगी बसर करके चला जाता है। मगर जो काम वह करता है वह कायम रहता है; क्योंकि काम हमेशा चलता रहता है, वह कभी समाप्त नहीं होता। वैसे तो काम हम सब करते हैं, मगर उन्होंने मानव सेवा के कामों में सिर्फ दिलचस्पी ही नहीं ली, बल्कि उनमें एक तरह से खो-से गये। इसलिए ठक्कर "बापा" को किसी बधाई या ईनाम की जरूरत नहीं है। उन्होंने अपनी सेवा में ही पूरा ईनाम पाया। असली मायने में उनकी जिन्दगी सफल हुई। दुनिया में ऐसे शख्स को देखकर दिल में खुशी होती है, उत्साह बढ़ता है और कुछ हासिल भी होता है। ऐसे शख्स जीवन के पेचीदे मसले सेवा के जरिये अपनी जिन्दगी में ही हल कर लेते हैं और फिर उनके सामने चाहे कितने ही बड़े मसले क्यों न आयें उनसे वे घबराते नहीं।"

इसके बाद समारोह के अध्यक्ष सरदार बल्लभभाई पटेल ने अवसर को शोभा देने वाला छोटा किन्तु प्रभावशाली व्याख्यान दिया। उन्होंने नौजवानों को एक नमूने के रूप में ठक्कर बापा को अपने जीवन में उतारने का आह्वान किया। उन्होंने कहा कि, "ठक्कर बापा को तो दिन-रात, जात-पाँत और प्रान्त-प्रान्त के बीच कोई भेद नहीं था। सारे हिन्दुस्तान में जहाँ कहीं भी दुखः पड़ा वहीं वे पहुँच गये। जहाँ कहीं भी आफत आती— फिर वह कुदरती हो या अन्य प्रकार की—वहाँ सब इन्हीं की तरफ देखने लगते। इसलिये इनका जीवन भारत के नौजवानों के लिए एक नमूना है, जो लोग उनका अनुकरण करना अपना जीवन कर्त्तव्य मानते हैं, उनके लिये रास्ता खुला हुआ है। उन्हें सेवा के लिए धारा सभा में जाने की जरूरत कभी मालूम नहीं हुई। फिर भी हम उन्हें धारा सभा में इसलिए खींच ले गये हैं कि उन्हें दलित जातियों का एक खास अनुभव है। आज तो हम थोड़ा सा काम करते ही मोह में पड़ जाते हैं और हमें ख्याल होता है कि सेवा करने के लिये राजनैतिक संस्था में ही शरीक होना चाहिये। परन्तु यह विचार ठीक नहीं, सेवा यदि करनी ही हो तो इसके लिए अनेक क्षेत्र मौजूद हैं। देश बड़ा लम्बा-चौड़ा है। जहाँ बैठिये वहीं काम का तो ढेर पड़ा है। ठक्कर बापा जब से काम में पड़े, तब से न किसी दिन उन्होंने आराम किया, न चैन लिया, न कभी शांति से बैठे। सफर करते समय भी उन्होंने कभी सुख-सुविधा का विचार नहीं किया और वे तो सारी जिन्दगी सफर ही करते रहे। "भारत में ऐसे ही कार्यकर्ताओं की जरूरत है, जो बात न करें परंतु काम करें। मैं हिन्दुस्तान के नौजवानों को इतना याद दिलाना चाहता हूँ कि ज्यादा बोलने या भाषण झाड़ने से सेवा नहीं होती। बोलने का काम तो उन्हीं को करना चाहिये जिनकी सेवा इतनी बढ़ गयी हो कि जिससे वे देश को कुछ न कुछ उपदेश दे सकें। सेवा सिपाही से ही हो सकती है और सिपाही बने बिना नेतागिरी नहीं हो सकती। इतने पर भी जो नेतागिरी करते हैं उनको गिरने का खतरा रहता है।"

व्याख्यान पूरा करने के बाद सरदार श्री ने ठक्कर बापा को अभिनंदन-ग्रंथ अर्पण किया और उनसे प्रेमपूर्वक आलिंगन किया। बापा इतने प्रभावित हो गये कि क्षण भर उनकी आँखों में हर्षाश्रु आ गये, उनका गला भर आया। गद्गद कंठ से वे जवाब देने खड़े हुए, परन्तु थोड़ी देर तक कुछ भी नहीं बोल सके। फिर आँखों में आँसू लिये भर्राई हुई आवाज से वे जो थोड़े से शब्द बोल सके, उनसे ऐसा लग रहा था कि शब्दों का स्रोत उनके मस्तिष्क से नहीं, अपितु सीधा हृदय से बह रहा है। उन्होंने कहा : "मेरा हृदय कुंठित हो गया है। आप सबका प्रेम देखकर मेरा दिल भर आता है। फिर भी एक-दो बातें मैं जरूर कहना चाहता हूँ। एक तो मेरे जैसे मामूली आदमी अथवा हरिजन के लिए इतना बड़ा समारोह, लोगों का यह जमाव और दिखावा वगैरा करने की कोई जरूरत नही थी। यह सारा अपराध पीछे बैठे भाई देवदास का है। उनके प्रेम के आगे मैं लाचार हूँ। आज सवेरे हरिजन और सवर्ण भाई सभी यहाँ आये, यह देखकर मुझे बहुत ही आनन्द हुआ है। सच पूछा जाय तो मेरा स्थान दिल्ली जैसे आलीशान शहर में नहीं, बल्कि जंगलों में तथा गरीबों की झोपड़ियों में है। वहीं मेरे लिए काम पड़ा है।"

उन्होंने कहा, "आप लोग मेरा सम्मान कर रहे हैं, यह आप सबकी उदारता है। परन्तु अब तो काम करना ही मेरे बस की बात नहीं रही, इतनी ज्यादा मेरी उम्र हो गयी है और अब मैं आधा अंधा और आधा लंगड़ा हो गया हूँ। पहले की तरह सफर भी तीसरे दर्जे में नहीं कर सकता। ऐसे निर्बल शरीर को लेकर मैं क्या कर सकता हूँ? इसके बावजूद भी आप सबने, पंडितजी ने, सरदार बल्लभ भाई पटेल ने और मौलाना साहब ने मेरा जो सम्मान किया है, उसके लिए मैं सबका अत्यन्त आभारी हूँ।

भारत का यह सपूत गाँधी जी के जन्म के लगभग एक माह बाद गुजरात के ही भावनगर जिले में एक व्यापारी परिवार में दिनांक 29.11.1869 को पैदा हुआ। इंजीनियरिंग की परीक्षा पास कर नौकरी की। पहली पत्नी जो रोगी थी अल्पायु में ही चल बसीं। एक पुत्र भी पैदा हुआ जो छः वर्ष की अवस्था में परलोक सिधार गया। पिता के कहने पर दूसरी शादी की वह भी दो साल बाद ही ईश्वर को प्यारी हो गई। सेवा करते-करते जब शरीर जर्जर हो गया तो अपने पैतृक गृह (भावनगर) में अपने भतीजों के साथ अन्तिम समय तक रहे। अपने जीवन के अन्तिम दिन तक दलितों, पीड़ितों की सेवा के प्रति सजग रहे। अन्तिम समय तक लोगों द्वारा भेजे गये पत्रों का उत्तर, अन्य डाक को निपटाना, सभी अपनों को सेवा का निर्देश देते रहे। सहज भाव में अपने गुरू गाँधी जी एवं मित्र सरदार बल्लभ भाई पटेल ने जिस दिन "शुक्रवार" को अपना शरीर त्यागा था, उसी दिन (शुक्रवार) उन्नीस जनवरी, उन्नीस सौ इक्यावन को "ठक्कर बापा" अपनी नश्वर शरीर से अपने को अलग कर सूक्ष्म में विलीन हो गये।

A DAUGHTER'S DIARY

Dr. Lakshmi Rao

The Servants of India Society celebrates its centenary in 2005. Had my father Mr. A.D. Mani been alive today he would have been 95. Somewhere destiny chose my father to give his blood, seat and tears for the noble work, which was envisaged by Late. Gopal Krishna Gokhale when he founded the society.

30th January, 2005 : I am watching the Martyr's day function on TV. My thoughts go back to the day when my father would lovingly show me the letters, which Mahatma Gandhi had written to him. He would read out the letters time and again. Somewhere in his mind, Gandhijis philosophy was embedded. Appa was such a simpleton, his philosophy of live and think simple was threaded through all his actions.

1960 : Our house was abuzz of activity. Appa had just been elected as an Independent member of the Rajya Sabha. People were dropping in with flowers and wishes. My mother was worried. Appa seemed tired. But he did not allow her to prevent visitors from coming in. Though I was very young then, I only have faint memories of doing a relay of running and picking up bouquets as they came in. But more than that, it was the humble look on my father's face, which is etched in my memory.

1967 : I was excited. In Delhi with my mother for my holidays, I was going to attend Parliament for the first time. From the visitor's box. I looked down to spot Appa. In his characteristic style he was restlessly moving from one place to another talking to other members. Appa was recognized for this restlessness. In Parliament he would constantly interact with other members whether it was to discuss an important issue in Question Hour or to ask a colleague about his health. On that day the famous Nagarwala Case was tabled. Amidst the uproar. Appa stood up to make his statement. As a hushed silence fell over the house. I was exposed to another fact of my wonderful father. He was an excellent orator. Today when I speak at functions and am applauded, I know I have inherited these skills from him.

1969 : It was my first visit to the Servants of India Society Campus in Pune. I was accompanying Appa for the first time for the Annual Meeting. I was thrilled to see the huge campus where I could take an exploratory journey when Appa would be busy. Just as I was leaving the guesthouse to take the tour, Appa drew me to his side and said, "This is sacred land to me. My life's mission is to die serving this institution. Never forget this. When you go around this place, look at it through my eyes." When I visited the place again in December, 2004 his words were ringing in my ears. My father's greatest quality was to passionately involve his family in his life's calling.

1972-1976 : Appa decided to call it a day as far as politics was concerned. He was concerned about the future of the society and felt that he was neglecting it. He decided not to contest and retired as the Vice-Chairman of the Rajya Sabha. The day we packed his belongings at the Western Court in New Delh, he seemed to be in a

tearing hurry. I have to go back to society. My experience in the political arena will be of great help, he said. As I write this piece, I remember Appa getting up early morning, sitting at the typewriter and typing articles in rapid fire. Thank You appa, for passing down this quality to me.

1976 : One of my father's life long friends was his hypertension and diabetes. Always cheerful, he would discuss about these diseases with everyone whom he met. His friends who accompanied him on his evening walk came back to tell my mother how enlightened he was on these illnesses and how he used to educate them. But these friends turned foes on July 24, 1976 when he suffered a major paralytic attack. I saw Appa shrunk, and shaken.

July 25, 1977 : Appa was bedridden but his will power was at work. Furiously trying to participate in a physiotherapy program to get back to independence. But fate had other things in store. My only brother Krishna Kumar, a professor at IT Powai died in a road accident. I think Appa mentally died that day. Broken and shattered, he tired to put up a brave front before my inconsolable mother. As I held him in my arms, he whispered, "You are all that, I have I hope you are there when I go".

December 25, 1977 : I could not fulfill my father's wishes. I go with my friend for a short trip, I had left Nagpur three days ago. As I said goodbye to him, I thought I saw reluctance in his eyes to let me go. He died a peaceful death in the early hours of Christmas Day and I was not there.

Mr. A.D. Mani left behind a rich legacy of thoughts and deeds. As I pay tribute to him through this article I am privileged to be his daughter and thank him for the greatest gift he gave me. His date of birth. We were born on the same day.

सर्वेन्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी की

'सौवीं' वर्ष गांठ पर

सम्पूर्ण राष्ट्र को बधायी

डॉ० एच० एन० कुंजरू स्मारक समिति

बाजपुर–उधमसिंह नगर उत्तरांचल

Honurable Mahapandit Gopal Krishna Gokhale's Tour in South Africa

Shubha Dwivedi
Lecturer in English
MLNNIT

Pt. Gopal Krishna Gokhale was in a certain sense maker of Mahatma Gandhi. There can be no real history of Modern India without a respectful reference to Gokhale. It is a pity that most of the Indians have forgotten Gokhale. But without Gokhale and his distinguished service of Indian community we cannot truly understand Indian Politics. Indian History and Indian Culture. His special role not only in India but also even outside India must be remembered today when we are going to celebrate the Centenary of Servants of India Society founded by him. This institution is the living embodiment of his constructive genius. We can compare this institution with Pt. Madan Mohan Malviya's Banaras Hindu University, Tagore's Shanti Niketan and Rama Krishna Paramhansa's Rama Krishna Mission. As these institutions are nationally and internationally renowned so is the case with Servants of India Society. Gokhale founded this Society to make India an independent and progressive nation. Service of India is the motto of this great Institution. Its role has been very large in the past and even today it is carrying on Gokhale's mission. According to American poet, thinker and essayist Emerson "an institution is the lengthened shadow of one man". I have no hesitation in stating this fact that Servants of India Society is the lengthened shadow of Mahapandit Hon. Gopal Krishna Gokhale. We are planning to make India not only a prosperous, scientific and enlightened nation but also a great leader of the world in the 21st Century. At this juncture we have no option but to follow his great principles of tolerance, service, freedom and discipline. He was a tireless traveler, thinker, speaker and statesman. In order to understand Gokhale's personality today I would like to quote the following poetic lines :

Heights by great men reached and kept.
Were not attained in a sudden flight
But they while their companions slept.
Were toiling upwards in the night.

This brilliant son of our Bharatmata worked enthusiastically towards upliftment of India and Indian community outside India. His tour in South Africa should be taken as a part of his great mission. He was a missionary of National Freedom and his tour in South Africa is of great historical value. It has given me the essential key to open the lock of his mind, personality and missionary zeal. Without taking his tour in South Africa in consideration we cannot truly visualize the larger role of Gokhale and his brainchild Servants of India Society. Gokhale is still relevant and his Servants of India Society is still relevant in 21st Century. We must look into past in order to build a prosperous India. Govind Ranade, Bal Gangadhar Tilak and Gokhale transformed Indian politics. Mahadev Govind Ranade was a great political economist and historian with clear-sighted vision. He was fully alive to the regional economic imbalances of India. Though his tone was moderate, yet he demanded gradual replacement of Indian for British agency. Govind Ranade gave a perfect training to Gopal Krishna Gokhale. Gokhale imbibed the vision of Tilak and Ranade and was influenced by their fierce attacks on the British rule. Gokhale was a scholar politician like Ranade and Tilak and he influenced the thought and actions of India and abroad. He visited England several times and he visited Africa two yeas before his death. He lived only for 49

years but in these years he developed his own political and social philosophy. To me he was more than a mortal man. His achievements and dreams were extraordinary. This is a great Indian achievement that Gandhiji came to India and was inspired by Gokhale to come back to Indian and serve Indian people. Gokhale advised Gandhiji, to serve Indian people in his visit to South Africa. Thus, Gokhale's visit changed the course of Indian history. His intelligence and sharpness were extra ordinary and his capacity to transform the course of Indian history and politics were extraordinary. Ranade trained him to follow his vision and footsteps. Gokhale made his philosophy very clear in these words, "we are at a stage of the country's progress when our achievements are bound to be small and our disappointments frequent and trying. It will, no doubt, be given to our countrymen of future generation, to serve India by successes" His visits to Africa and England were definitely successes. He will go down in the pages of history as a disciple of Ranade and political Guru of Mahatma Gandhi. Gandhiji always called Gokhale his political Guru and `Good'. In a foreword to Rt. Hon. Sastriar's speeches and writings entitled **My Master Gokhale.** Gandhiji had said "I had and have no gifts which Gokhale had and Sastriar had in luxurious abundance." Gandhiji's forward foreword to the book **My Master Gokhale** is not very long. But I am not quoting this 'Foreward' because of two reasons. Firstly, I am not focusing on Gandhi-Sastriar controversy because of which Gandhi could not become member of Servants of India Society, despite his heart felt desire and Gokhale's desire. The members of Servants of India Society, Pune were not in favour of Gandhi's inclusion as a member of Servants of India Society. The last para of this `Forward' is worth quoting, "It should be enough to find in them the transparent sincerity and patriotism of the writer or shall I say the biographer and the master." Thus, Gandhi has praised the transparency, honesty, ability, patriotism, tolerance and sincerity of Gokhale in a full throated voice. Gandhi has been regarded as a "Man of The Millennium". Gokhale Gandhiji's master, maker, and political Guru must be occupying a higher position than Gandhi. The historians of India and abroad have not evaluated Gokhale in proper perspective. A leader like Gokhale is not born daily. His scholarship and leadership were rare and several visits to England and Africa cannot be forgotten. He was a torch-bearer, of total freedom, "Poorna Swaraj".

Let us turn the pages of history because Gokhale was a historical figure and his visit to South Africa was a historical importance. Very few people today can imagine the great importance of Gokhale's visit. It was in the Indian National Congress held at Calcutta that he had announced his visit to South Africa. His declaration was praised by more than 7000 people who had assembled there. They represented all creeds and classes of people who came from every part of India. It is crystal clear that people in India were aggrieved to know about the great sufferings of Indians in Africa. I should rather call them Indian Africans as Indians in America are known as Indian Americans or Asian Americans. Indians in Africa were suffering acutely and intensely and it was thought in India that Pt. Gopal Krishna Gokhale should go to Africa to protect their honour as a saviour. Gokhale was welcomed as a brilliant, honest and responsible politician who had come to Africa to help Indians and also the African Govt. Shelley has said "If winter comes can spring be far behind?". If Indians in Africa suffered because of the policy of apartheid, Gokhale could not remain in India as a mute spectator. Everybody felt a feeling of great relief that Gokhale had at last arrived in Africa. It is a long tale and it cannot be summarized in a short space of my essay. Whatever he did, thought, wrote and planned was felt intensely by the Govt. and the masses. In one sentence I can say that his African visit adds a chapter to Indian history and World history. To me it was as tempestuous as Tsunami waves. It was both destructive and constructive like Shelley's "West Wind". Gokhale's visit destroyed the fear, loneliness, helplessness, anguish and exploitation of the Indians. Indians in Africa became fearless after Gokhale's visit to South Africa and Servants of India Society became an internationally known Society through Gokhale's memorable speeches. Gokhale's visit helped in advocating the cause

सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसायटी शिक्षा क्षेत्र में

बालिका आश्रम पद्धति विद्यालय चन्दन चौकी खीरी

जूनियर हाई स्कूल मजराविधि उधमसिंह नगर उत्तरांचल

थारू छात्रावास चन्दन चौकी खीरी

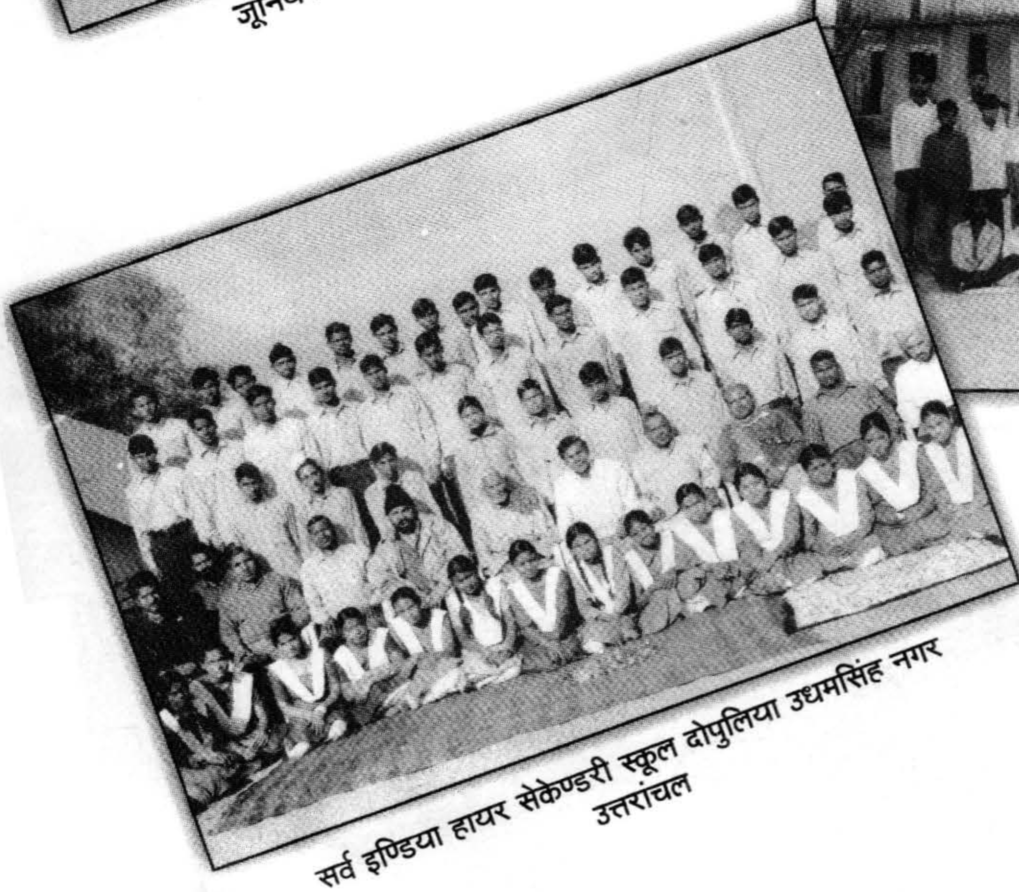

सर्व इण्डिया हायर सेकेण्डरी स्कूल दोपुलिया उधमसिंह नगर उत्तरांचल

सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसायटी
शिक्षा क्षेत्र में

of the Indians living in Africa. His farewell speech at Pretoria must be remembered today, To my own countrymen resident in this land, my parting appeal is always remember that your future is largely in your hands. You have by no means, an easy position here, and it is possible that it may grow even worse. But whatever happens, do not lose faith or give way to despair". Gokhale's words are ***mantric*** and are full of relevance even today. The problems of Gokhale's lines have not vanished totally from our midst. This is the great relevance of Hon. Gopal Krishna Gokhale and his Servants of India Society in our times. I am happy to be associated with the Society. We would not forget these words of Gokhale, "Do not waste your time in writing a biography or setting up statues but pour your soul in the service of India". How may contemporary leaders will gladly follow Gokhale ? Have not our leaders failed in pouring their souls in the service of India ? I would like to conclude this essay with the following words of Gandhi's tribute to Gokhale, "Gokhale seemed to me all I wanted a political worker, pure as a crystal, gentle as a lamb, brave as a lion and chivalrous to a fault. He was and remains for me, the most perfect man in the political field." Gokhale was a brilliant teacher, ideal man, powerful thinker, a servant, a sage, an honest soul, a great writer, orator, activist and thinker. It is a pity that he did not live long. But his historical actions and speeches will always guide us and his brainchild Servants of India Society will always remind us of our beloved leader. I would like to conclude this essay with the following lines of my poem :

Gopal Krishna Gokhale

Your attitude had been perfectly reasonable.
You were noble and honourable.
As a leader you opposed all evil and ignoble.
You were friend of Indian masses who always found you admirable.
You had gone to Africa as Ambassador of the East.
And asked Indians in Africa to show self-respect.
'Self-discipline is necessary for human survival' You had said
They must show their best, They must show their best,
You fully, freely and frankly solved their difficulties.
Your charismatic personality and sincerity were felt by all.
You influenced the African Govt. to a great degree.
And said 'Indians were brave and honest, and not a doll.
You succeeded in arousing the better mind of South Africa.
And warned Indians against false hope during
Your visit in South Africa.

Modern Public School
Bawa Road, Bazpur (U.S. Nagar)
Phone No : 282189
English Medium Nursary to Vth Class English Medium
Governed By :
Nagendra Memorial Siksha Samiti, Bazpur

पर्यावरण-पत्रिका

(प्रातः स्मरणीय महात्मा गोखले की पावन स्मृति में)

प्रो० डॉ० सुरेश चन्द्र द्विवेदी
वरिष्ठ कवि, समीक्षक
अंग्रेजी विभाग प्रयाग विश्वविद्यालय

धरती की सुन्दर गोदी में रहते हैं सारे नर-नारी।
माता सी पालन करती वह हम सब उसके आभारी।।1
धरती माँ के सारे बेटे फैले यहाँ वहाँ पर हैं।
आसमान में उड़-उड़ कर भी आता मनुज धरा पर है।।2
उस धरती माता का नित प्रति ही अभिनन्दन हो वन्दन हो।
सभी सुखी हों, सभी स्वस्थ हों नहीं रूदन या क्रन्दन हो।।3
पद-पादप सुगन्धियुक्त हैं धरती माँ के आभूषण।
उन्हें न काटो, उन्हें न पीटो उनका हो संरक्षण पोषण।।4
जहरीला धुआँ खुद पीते वातावरण विशुद्ध बनाते हैं।
बाग-बगीचे जंगल, निशिदिन जीवन सफल बनाते हैं।।5
इनमें ही मेरा ईश्वर है इनमें है मेरा रक्षक।
इनकी महिमा अकथनीय है ये न कभी होते भक्षक।।6
खुद भीषण गर्मी सहते हैं हमको ये छाया देते।
अपना फल स्वयं न खाते परोपकार करते रहते।।7
एक पेड़ करोड़ों का हमको देता है आक्सीजन।
प्राण-वायु का हँस हँस करता चौबीसों घण्टे उत्पादन।।8
ऊँचे ऊँचे मेघों को वे अपने पास बुलाते हैं।
रिमझिम-रिमझिम बारिश से ये जग की प्यास बुझाते हैं।।9
अमृत सा इनका फल चख कर धन्य-धन्य हम हो जाते।
इनका मीठा-मीठा रस पी इन्हें न कभी भुला पाते।।10
पर इनका उपकार भूल कर जो नर इनको काट रहे।
आत्मघात में लीन रहें, अपना जीवन छाँट रहे।।11
वनस्पतियों के न रहने पर मानव-जीवन मिट जायेगा।
धरती माँ फिर नहीं बचेंगी जीवन सारा घट जायेगा।।12
बूँद-बूँद पानी के हित तरसेगी देखो मानवता।
जल की धन की बरबादी से दुखित होवेगी मानवता।।13
बोतल में पानी बिके यदि फिर जीवन कैसे चल पायेगा?
कार्बनाडाइआक्साइड पी पीकर क्या हृदय अनाहत बच पायेगा?।।14
नदियाँ देखो कल-कल करतीं कैसे वे छल-छल बहती हैं।
गन्दे नालों का जल पीतीं मीठा जल हमको देती हैं।।
हे चिकित्सकों, वैद्यों अरे उठो औषधियाँ कैसे पाओगे।
निज धरा बचा, निज धरा बचा, डिस्पेन्सरी कैसे चलाओगे?।।15
तुलसी सूखी, पीपल सूखा यह मौलसिरी भी बाँझ हुआ।
अनगिनत पेड़-पौधे सूखे सारा पर्यावरण बाँझ हुआ।।16
पर्यावरण रक्षा करनी है हाँ करनी है भाई करनी है।
धरती की रक्षा करनी है जन-जन की रक्षा करनी है।।17
सौ साल कैसे जी पाओगे सौ साल कैसे सुन पाओगे?
तम-तोम बढ़ रहा प्रदूषण का सौ साल कैसे कह पाओगे?।।18
पर्यावरण दोष बढ़ते जाते फिर भी मनुज आलसी हुआ।
अजगर सा सुन्न पड़ा लेटा कुछ भी न हुआ, कुछ भी न हुआ।।19
सृष्टि-विनाश अरे रोको, धरती का विनाश अरे रोको।
गंगा-जमुना को साफ करो ओजोन-परत का विनाश अरे रोको।।20
प्राकृतिक सम्पदा का दोहन रे बन्द करो, रे बन्द करो।
लकड़ी, कोयला, पेट्रोल, तेल का अतिदोहन, अति शोषण बन्द करो।।21
बिजली की बरबादी रोको ऊर्जा की बरबादी रोको।
जनसंख्या की वृद्धि रोको मानसिक पतन, भय, क्षय रोको।।22
हिमगिरि के उत्तुंग शिखर पर जब भी सूरज सुस्तायेगा।
वह पत्रिका के पन्नों को पढ़-पढ़ कर मुस्कायेगा।।23
थके हारे लाचार मनुज को यहाँ मिलेगा सुखद् ठाँव।
याद करेंगे इसको पढ़ कर शहराती कुछ अपने गाँव।।24
पृथ्वी के पुत्र सभी हम धरती माँ सबकी प्यारी है।
ऐ पाठक उनकी सेवा की हम सबकी जिम्मेदारी है।।25
पर्यावरण पत्रिका पढ़ कर धरती को चलो बचाओ।
वसुधा को स्वर्ग बनाने ऐ पाठक उठकर आओ।।26

जनजातियों के शैक्षिक विकास में

...सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी का योगदान...

हरिशंकर शुक्ल
प्रधानाचार्य
राजा वलदेव दास बिड़ला सोनघाटी उ० मा० विद्यालय, सलखन, सोनभद्र (उ० प्र०)

सामाजिक परिवर्तन में समाज सेवकों की अहम् भूमिका होती है जव देश में अशिक्षा का साम्राज्य हो। ऐसी दशा में कुरीतियों, अन्ध विश्वासों, रूढ़ियों की जंजीरों में जकड़ा समाज कैसे विकास कर सकता है? सत्ता सेवा की नहीं शासन की होती है और अशिक्षितों को शासन की नहीं सहानुभूतिपूर्वक मार्गदर्शन की जरूरत होती है। शिक्षित व्यक्ति ही शासन का वास्तविक अर्थ एवं महत्व समझ सकता है। हम अपनी मातृभूमि के प्रति अन्तर्तम भावनात्मक प्रेम, जनजीवन में भ्रातृ-भाव, सहयोग की भावना और त्यागमय जीवन से दबे कुचले निरीह लोगों को ऊपर उठार ही अपने देश का विकास कर सकते हैं। सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी की स्थापना के इन्हीं मूलभूत उद्देश्यों की प्रतिपूर्ति में उत्तर प्रदेश के अति दुर्गम, पहाड़ी, जंगली क्षेत्रों में आवाद जनजातियों, वनवासियों की सेवा में सोसाइटी के योगदान की चर्चा करना समाज सेवी भावनाओं के प्रति कृतज्ञता होगी।

उत्तर प्रदेश के जनपद सोनभद्र तत्कालीन मीरजापुर जनपद की तहसील राबर्ट्सगंज, दुद्धी आवागमन की वर्तमान सुलभ-सुविधाओं से वंचित घनघोर जंगली, पहाड़ी वादियों में आबाद आदिम संस्कृतियों को सँजोये, अशिक्षा एवं अंधविश्वासों से व्याप्त कुरीतियों में सने पगे किन्तु भोले-भाले जनजातियों की एक मुश्त लाखों की आवादी आजादी के ठीक वाद भी राष्ट्र की मुख्य धारा से बिल्कुल अलग-थलग थी। सोसाइटी के तत्कालीन अध्यक्ष डॉ० हृदय नाथ कुँजरू एवं मंत्री श्री रमाशंकर मिश्र सन् 1951—52 में दुद्धी तहसील का सामाजिक-आर्थिक सर्वेक्षण कर दोनों तहसीलों में एक-एक जूनियर हाईस्कूल तथा राबर्ट्सगंज तहसील में 22 प्राइमरी विद्यालय और दुद्धी तहसील में 10 प्राइमरी विद्यालयों की स्थापना किया। धूलभरी सड़कों, ऊबड़-खाबड़ पथरीले कंटका कीर्ण जंगली राहों पर पैदल गाँव-गाँव जाकर गरीव वनवासियों की सामाजिक आर्थिक दशा का सर्वेक्षण करना उस समय वहुत ही दुष्कर था जबकि भोजन तो दूर पीने का पानी दूर दराज नालों से ढोकर लाना पड़ता था। पं० रमाशंकर मिश्र दुद्धी क्षेत्र में घर-घर जाकर वनवासियों की सेवा की, बीमार लोगों को दवा, वस्त्र आदि की व्यवस्था भी सर्वेक्षण के दौरान किया जवकि उन्हें कई बार इसके लिए इलाहाबाद मुख्यालय जाना आना पड़ता था। श्री मिश्र को उनके सेवा कार्य से उस समय 'विन्ध्य के गाँधी' के नाम से पुकारा जाता था।

सन् 1954 में कैमूर पर्वत मालाओं से घिरे सोनघाटी में आवाद सलखन गाँव में गोड़ जनजाति के मुखिया स्वतंत्रता संग्राम सेनानी शंकर गौंहा विद्यालय चलाने के लिए 5 बीघा भूमि तथा ग्रामीणों एवं शिक्षकों के सहयोग से तीन शिक्षण कक्ष, वरामदा सहित खपरैल का वनवाकर दान किया। म्योरपुर में भी जुलाई 1954 से जनजाति वच्चों की शिक्षा व्यवस्था हेतु सोसाइटी ने एक जूनियर हाईस्कूल स्थापित किया। डा० हृदयनाथ कुँजरू के घनिष्ठ मित्र महान उद्योगपति पद्म विभूषण श्री घनश्याम दास विड़ला जी ने सन् 1960—61 में डा० कुँजरू के अनुरोध पर सलखन (पटवध) में 5 शिक्षण कक्षों वाला वरामदा सहित भव्य भवन वनवाया। इसीलिए सोसाइटी ने जू० हाईस्कूल सलखन का नाम उनके पिता के नाम पर राजा वलदेव दास विड़ला सोनघाटी विद्यालय सलखन रखा। इस विद्यालय की स्थापना में स्व० शंकर गौंहा, स्व० धर्मजीत सिंह, तत्कालीन व्लाक प्रमुख चोपन, श्री अमर दत्त चौवे, श्री चन्नू पाठक सरपंच, श्री द्वारिका प्रसाद शुक्ल, श्री वैजनाथ प्रसाद गोंड (मास्टर) आदि का सराहनीय योगदान रहा। विड़ला विद्यामंदिर म्योर पुर का भवन तथा छात्रावास भवन, विज्ञान प्रयोगशाला वनवाकर विड़ला जी ने सोसाइटी के समर्पित सेवा कार्य को गति दी।

सन् 1964 में इलाहाबाद जिले की मेजा तहसील के दक्षिणी क्षेत्र में कोल आदिवासी वहुल इलाके कोंहड़ार में, मीरजापुर जिले में पचोखरा तथा रावर्ट्सगंज तहसील के पूर्वी दक्षिणी क्षेत्र सिलथम में एक-एक जूनियर हाईस्कूल की स्थापना कर सोसाइटी ने जनजातीय क्षेत्र विशेष रूप से मीरजापुर के शैक्षणिक विकास में अद्वितीय कार्य किया। इसके वाद शिक्षा के प्रति वड़हर, विजयगढ़, अगोरी क्षेत्र में जनमानस में जागरूकता आई। अन्य क्षेत्रीय सम्भ्रान्त लोग भी जगह-जगह स्कूल स्थापित करने

लगे। यह सोसाइटी द्वारा शिक्षा हेतु अलख जगाने का प्रभाव था। सोसाइटी ने आजादी के पूर्व से संचालित 22 प्राथमिक विद्यालयों को आजादी के बाद परिषद को सौंप दिया था। आज उक्त विद्यालयों से पढ़कर निकले छात्र विभिन्न पदों पर देश सेवा कर रहे हैं। यदि ये विद्यालय सोसाइटी ने स्थापित न किये होते तो इस क्षेत्र के अधिकांश बच्चे केवल मजदूर, भेंड़, बकरी चराने वाले चरवाहे बनकर रह जाते।

सन् 1976 तथा 1978 में यू०पी० ब्रान्च में इन स्थापित विद्यालयों, संस्थानों की सुचारू देख-रेख हेतु दो सदस्यों ने सोसाइटी की सदस्यता ग्रहण करते हुये देश सेवा का व्रत लिया। श्री प्रेम कृष्ण द्विवेदी इलाहाबाद से तथा श्री आत्मानन्द मिश्र मीरजापुर से सोसाइटी के इतिहास में सबसे कम उम्र की सदस्यता ग्रहण करने वाले सदस्य रहे। श्री मिश्र सन् 1981 में सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी यू० पी० ब्रान्च के सचिव नियुक्त हुये। तब से अद्यावधि अपनी कुशाग्र बुद्धि, प्रबल इच्छा शक्ति, कर्मठता, कार्य कुशलता से सोसाइटी के कार्यों को आगे बढ़ाया। अपने पूर्व वरिष्ठ सदस्य द्वारा स्थापित केन्द्रों के विकास में अथक परिश्रम किया जिसके फलस्वरूप आज तीनों जूनियर हाईस्कूल (सलखन, म्योरपुर, सिलथम) माध्यमिक स्तर के विद्यालय हो गये हैं। इनके भगीरथ प्रयास से तीनों स्थानों पर इण्टर कालेज हेतु भूमि क्रय की गई साथ ही इनके सद् व्यवहार, जन सम्पर्क तथा क्षेत्र में इनके सेवा कार्य को देखते हुये जन प्रतिनिधियों द्वारा सांसद/विधायक निधि से सोसाइटी के लगभग विद्यालयों में दर्जनों भव्य पक्की इमारतें निर्मित कराये गये। सोनभद्र के सुदूर क्षेत्र, बिहार की जंगली सीमा से लगा हुआ नगवा विकास खण्ड के खलियारी ग्राम में अनुसूचित जाति, जनजाति कन्याओं की शिक्षा व्यवस्था हेतु श्री मिश्र ने एक कन्या आश्रम विद्यालय की स्थापना में दिन रात परिश्रम करके अपने अदम्य साहस, दृढ़ संकल्प शक्ति तथा मनोवैज्ञानिकता का परिचय दिया। उस क्षेत्र में कन्याओं की पढ़ाई लिखाई के प्रति अभिभावकों में कोई रुचि न थी। वे अपनी लड़कियों को स्कूल भेजना अपनी मर्यादा के विपरीत समझते थे। श्री मिश्र ने खलियारी और पटना, सिलथम में महिला जागरूकता प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित कर महिलाओं को अभिप्रेरित करते हुये उनके अभिभावकों को कन्या शिक्षा के लिए मानसिक रूप से तैयार किया। आज उस कन्या विद्यालय में सैड़कों बालिकायें सतत् अध्ययनरत हैं। इनकी देख-रेख में तीन माध्यमिक विद्यालयों के अतिरिक्त आश्रम स्कूल सिलथम, घुवास, दातव्य औषधालय टिकुरिया दो अनुसूचित जाति छात्रावास, पाँच महिला मंगल केन्द्र, 16 प्राथमिक विद्यालय, एक टाइपराइटिंग इन्स्टीट्यूट जनपद सोनभद्र तथा मीरजापुर में संचालित है। इन संस्थाओं से प्रतिवर्ष हजारों की संख्या में अनुसूचिंत जाति, जनजाति के छात्र, छात्रायें लाभान्वित हो रहे हैं। गर्व का विषय है कि जनपद सोनभद्र, मीरजापुर में सोसाइटी के विद्यालयों से पढ़े कई विद्यार्थी आज इन्हीं जनपदों में प्राथमिक, माध्यमिक विद्यालयों में शिक्षक, प्रधानाचार्य आदि महत्वपूर्ण पदों पर विराजमान हैं। इसके अतिरिक्त जज, बैरिस्टर, डॉक्टर, इंजीनियर, सैनिक आदि के उच्च पदों पर भी देश की सेवा कर रहे हैं।

उन्नीस सितम्बर सन् 1968 में बाजपुर, नैनीताल (ऊधमसिंह नगर) में श्री नारायण दत्त तिवारी संयोजक भारतीय युवक राष्ट्रीय कांग्रेस की अध्यक्षता में सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी के यू० पी० ब्रान्च के प्रतिनिधि एवं सचिव पं० रमाशंकर मिश्र ने बुक्सा जनजाति के उत्थान हेतु क्षेत्रीय सहयोग की अपील करते हुए कहा था कि सोसाइटी तथा उसके द्वारा नामित आदिवासी विकास बोर्ड बुक्सा थारूओं के विकास के लिए प्रस्तुत है। इन जनजातियों का विकास बिना शिक्षा व्यवस्था के सम्भव नहीं है। श्री मिश्र की अपील स्वीकार करते हुए इस पुनीत कार्य में श्री केदारनाथ उपाध्याय, चेयरमैन कृषि मंडी समिति बाजपुर, श्री राधेश्याम शर्मा, प्रधानाचार्य इण्टर कालेज, बाजपुर, श्री खेम सिंह, सभापति बुक्सा परिषद, श्री देवकी नन्दन अग्रवाल, श्री रतन लाल शर्मा, श्री मोहर सिंह का अपेक्षित सहयोग प्राप्त हुआ।

जन सहयोग में जन सेवा करना एक सच्चे समाज सेवक की योग्यता का परिचायक होती है। इन्हीं योग्यताओं की परख के बाद ही गोखले की परम्परा में सोसाइटी में सदस्यों का चयन होता आया है। इसी कड़ी में श्री प्रेम कृष्ण द्विवेदी को सन् 1976 में बुक्सा, थारू, भोटिया जौनसारी, रांजी जनजातियों के सर्वांगीण विकास हेतु सोसाइटी ने संगठन मंत्री नियुक्त कर बाजपुर, नैनीताल भेजा। सर्वप्रथम इन्होंने इन जनजातियों के सामाजिक आर्थिक विकास की दिशा में सर्वेक्षण की एक योजना बनाई और इसे साकार रूप देने सन् 1977 से न् 1982 तक तराई-भावर क्षेत्र के घनघोर जंगलों में पद यात्रा की बुक्सार और थरूआट में कल्पवास करते हुए इनके कल्याण की योजनाओं को साकार रूप देने में निश्चित रूप से इन्होंने तप ही किया। उन दिनों जनजातियों का सामाजिक, आर्थिक सर्वेक्षण कार्य बहुत ही रोमांचकारी था। सर्वेक्षण प्रपत्रों का बंडल, बेडिंग तथा गाँधी झोला कंधों पर लादे पैदल जंगली रास्तों, नदी नालों से गुजरते हुए उन्हीं के साथ झोपड़ियों में कई दिनों तक प्रवास अपने आप में बहुत ही सुखद अनुभूतिपरक, गौरवपूर्ण कार्य था। दिन में घर-घर जाकर प्रपत्रों की प्रविष्टियों की पूर्ति, रात में चिन्तन, मनन, लेखन। इतनी भागदौड़, चिन्तन, मंथन एवं जनसम्पर्क करते हुये मैंने इनमें गम्भीर मुस्कान के अलावा कभी आलस्य और थकान नहीं देखा। जिस मुसाफिर को केवल अपनी मंजिल दिखाई दे रही हो तो उसे थकान, आलस्य नहीं होता। मुझे इनके साथ काम करने का चार वर्षों तक सौभाग्य प्राप्त हुआ। मैंने इनमें कभी अपने निजी सम्बन्ध निर्वहन की चिन्ता नहीं देखी। सोते जागते केवल जनजातियों की विकास योजनाओं पर ही चर्चा करते। यहाँ यह बता देना न्याय संगत होगा कि इनके इस पुनीत कार्य में इनकी धर्मपत्नी सम्माननीया श्रीमती लक्ष्मी देवी का प्रेमपूर्ण सहयोग एवं वैचारिक समर्थन सदैव इनके साथ रहा। उनका श्री द्विवेदी के प्रति अटूट विश्वास ही उन्हें लक्ष्य तक पहुँचाने में सहायक सिद्ध हुआ। महिला जागरण में श्रीमती द्विवेदी ने अपनी गौरवपूर्ण भूमिका

निभायी। बिरले लोगों को ऐसे मित्र, जीवन साथी मिलते हैं। श्री द्विवेदी ने अपनी बहुमुखी प्रतिभा का उपयोग पूर्णतः जनजातियों के विकास में किया। बाजपुर इण्टर कालेज के विद्वान शिक्षकों का बहुत आदर करना, उनका सुझाव और सहयोग लेना एक चतुर साधक का परिचायक है। अपने सेवा अभियान को गतिमान करने के लिए इन्होंने सबसे पहले अपनी धर्म पत्नी के सहयोग से गाँवों में महिला मण्डल बनाकर जागरूकता कार्यक्रम संचालित किया। महिलाओं को शिक्षा के प्रति जिज्ञासु, पिपासु बनाया। कई गाँवों में बालवाड़ी, शिशुगृह, पोषाहार केन्द्रों की पहले शुरुआत की। महिलाओं की जागरूकता एवं शिक्षा के प्रबल पक्षधर श्री द्विवेदी की लगन से लक्ष्य की प्राप्ति हुई। परिणामस्वरूप बुक्सा, थारू आदि जनजातियों की शिक्षा व्यवस्था की कड़ी में आज जनपद ऊधमसिंह नगर, नैनीताल, लखीमपुर खीरी, गोंडा, बहराइच, बस्ती, गोरखपुर जनपदों में आबाद इन जनजातियों के बालक बालिकाओं के सर्वांगीण विकास हेतु कई इण्टर कालेज, माध्यमिक विद्यालय, आश्रम पद्धति विद्यालय, प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र, पालनाघर, परामर्श केन्द्र, मत्स्य पालन, रेशमकीट पालन, पशुपालन केन्द्रों की स्थापना हुई और इन जनजातियों को विकास हेतु आयाम मिला। आज से 25 वर्ष पहले जहाँ इन जनजातियों में कोई साक्षर व्यक्ति ढूढ़े नहीं मिलता था वहीं आज बहुमुखी प्रतिभावान श्री द्विवेदी के त्यागमय धार्मिक जीवन और तपस्या से इनके द्वारा स्थापित विद्यालयों, छात्रावासों से पढ़कर निकले हुये युवक, युवतियाँ राष्ट्र की मुख्य धारा से जुड़कर देश-सेवा रत होकर खुशहाल हो रहे हैं। निश्चित रूप से पूज्य ठक्कर बापा के बाद सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटीके झण्डे के नीचे आदिम जनजातियों में इतना बड़ा कार्य श्री प्रेम कृष्ण द्विवेदी ने किया। श्री द्विवेदी सात दशक की दहलीज पर खड़े हैं किन्तु अभी भी उनकी कार्य क्षमता में कोई अन्तर नहीं आया है। कार्य विस्तार को सुव्यवस्थित करने की दिशा में इन्होंने सन् 1990 में दो युवा समाज सेवी सदस्यों का चयन किया। मीरजापुर जिले से श्री अमरेश चन्द्र त्रिपाठी तथा इलाहाबाद से श्री दिनेश मिश्र। इनके निर्देशन में श्री त्रिपाठी इलाहाबाद मुख्यालय का प्रभार और मीरजापुर के खन्तरा आश्रम स्कूल का संचालन कर रहे हैं। श्री दिनेश मिश्र लखीमपुर खीरी जिले के थारू जनजातियों के बालक बालिकाओं के आश्रम विद्यालयों की व्यवस्था सँभाल रहे हैं। सीमित गुजारा भत्ते पर समाज सेवा में जुटे इन समाज-सेवकों द्वारा सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी के उद्देश्यों की पूर्ति सदा वन्दनीय रहेगी।

N.W.C.

HARI BABU JAIN

DONEX™

PLY BOARDS & FLUSH DOORS

AUTH. DEALER :

DIGAMBER TIMBER HOUSE

3-P.D. Tandon Road

Opp. Boys High School, Allahabad.

Phone : 2601706 Mobile : 9415239902

JAS-ANZ

AN ISO 9001 : 2000 COMPANY

A Complete House of Products

NEELGIRI WOOD CRAFTS

Mfrs. of : Ply Boards, Flush Doors & Core Veneers

सुविचार

(1) आलस्य प्रगति का प्रधान शत्रु है।

(2) गुण सभी स्थानों पर अपना आदर करा लेता है।

(3) अनाचार तभी शक्तिशाली बनता है, जब सदाचार चुप रहता है।

(4) क्रोध साक्षात् यमराज है।

(5) ऊँच नीच की मान्यता अन्याय की सूचक है।

(6) कर न सके जो जन कल्याण, उस दर से अच्छा पाषाण।

(7) ईश्वर ने इंसान बनाया, ऊँच-नीच किसने उपजाया।

(8) गुटका, पान-मसाला और तम्बाकू, हैं यौवन हरने वाले डाकू।

(9) उन्हें मत सराहो जिसने अनीति से लक्ष्मी पाई।

(10) अपना सुख दूसरों में बाँटो, दूसरों का दुःख अपने में बाँटो।

(11) अग्नि स्वर्ण को चमकाती है, मुसीबत वीर पुरुष को।

एक और एकलव्य

ब्रज बिहारी मिश्र 'बिराज'

"आर्डर— आर्डर", न्यायाधीश ने मेज पर हथौड़ी की चोट करते हुए कहा, पूरी अदालत में खामोशी छा गई। कटघरे में खड़ा नवयुवक बन्दी, अपने मासूम किन्तु चेहरे को उठाये, निस्तब्ध न्यायाधीश की ओर देख रहा था। हल्का गेहुँआ रंग, भीगती हुई मसें, कुछ छोटी किन्तु अन्तरतम तक को वेधती तीक्ष्ण आँखें, जिनसे निडरता और दृढ़ संकल्प सा टपक रहा था। एकाएक उसने न्यायाधीश की ओर से अपनी आँखें फेर लीं, अदालत में बैठे लोगों को उचटती निगाह से एक बार देखा और फिर दृष्टि शून्य में गड़ा दी। न्यायाधीश के सामने पड़ी मेज से कागज उठाया, ऐनक को एक उंगली के सहारे नाक पर टिकाया और अपना फैसला पढ़ना प्रारम्भ किया—"दोनों पक्षों को सुनने के बाद यह सिद्ध होता है कि, अभियुक्त शिवाजी राव पटवर्धन, वल्द गणेश राव पदवर्धन— देशद्रोह, अधिकारियों की हत्या के षड्यन्त्र और अन्य आपराधिक गतिविधियों में संलिप्त था, जिसके तहत अदालत इस नतीजे पर पहुँची है कि 'ताजिराते हिन्द' की धारा............. के तहत उसे नौ वर्ष के कठोर कारावास की सजा दी जाती है।" फैसला सुनाते ही न्यायाधीश अपनी कुर्सी छोड़ कर उठ गया। पुलिस ने नवयुवक को हथकड़ियाँ लगा दीं, उसे कटघरे से बाहर निकाला, कड़े पहरे में अदालत से बाहर पुलिस वैन की ओर ले जाते समय, उसकी चाल में दृढ़ता थी, सिर गर्व से ऊपर उठा हुआ था।

अदालत कक्ष के बाहर चालिस-पैंतालिस वर्ष का एक प्रौढ़, भीगी आँखों से नवयुवक की ओर निहारता खड़ा था। नवयुवक ने प्रौढ़ की ओर देखा, पैर ठमके, मुँह से निकला "बापा—ऽऽ" तब तक घेर कर चलते पुलिस वालों ने धक्का देकर उसे 'वैन' में ढकेल दिया, वैन चल पड़ी, प्रौढ़ दूर जाती वैन को 'सजल-लोचन' देखता ही रह गया.......। पुलिस वैन अपने पीछे एक गर्द का गुबार छोड़कर ओझल हो गई।

** . ** ** ** **

कर्नाटक के 'असिंगी' नामक ग्राम में रहते थे, एक निर्भीक, किन्तु कद काठी से सामान्य निम्न मध्यम वर्ग के 'गणेश पटवर्धन' बड़ा ही सादा किन्तु विचारों में उच्चता लिये जीवन, जिसमें राष्ट्रीयता कूट-कूट कर भरी थी। उन्हीं के आँगन में 28 दिसम्बर, 1892 को एक पुत्र ने जन्म लिया, गोल-मटोल और स्वस्थ था वह बालक। थोड़ा बड़ा होने पर उसका नामकरण किया गया 'शिवाजी'— 'शिवाजी पटवर्धन'। अल्पकाल में ही बालक ने शिक्षा प्राप्त करनी प्रारम्भ कर दी। मेधावी बालक, विद्या व्यसनी न बनकर सामान्य ढंग से परीक्षा में उत्तीर्ण करता आगे बढ़ता गया। महाराष्ट्र 'तिलक', 'गोखले' और 'रानाडे' जैसी तेजस्वी विभूतियों के साथ 'सावरकर' और बलवन्त फड़के जैसे देश रत्नों की जन्म भूमि था। बालक 'शिवाजी' पराधीन भारत जिस पर एक ओर 'तिलक दल' का बागी स्वर और दूसरी ओर 'रानडे—गोखले' का 'नरम-दल' था, देख और समझ रहा था।

किशोर शिवाजी स्वत: उग्र होने के कारण स्वाभाविक रूप से विद्रोही स्वरों में अपना स्वर पिरोने लगा। एक दिन की बात है— प्रात: सोकर उठते ही शिवाजी को समाचार मिला कि पं० गोखले के ऊपर रिवाल्वर से फायर किया गया किन्तु वह मिस हो गया। सन्देह उस पर भी किया गया किन्तु वह था नहीं। उसकी गतिविधियाँ आजादी के परवानों के साथ कदम पे कदम उग्रता की ओर बढ़ने लगे। बागी लोगों के पीछे अंग्रेज पुलिस कुत्ते की तरह सूँघती फिर रही थी।

शिवाजी अपनी गतिविधियों के कारण गिरफ्तार कर लिये गये और उन्हें अमरावती के 'शिवनी' जेल में नौ वर्ष का सश्रम कारावास भोगना पड़ा। कहते हैं वहीं जेल में सुभाष चन्द्र वोस से शिवाजी का परिचय हुआ। शिवाजी को सुभाष चन्द्र अपना विश्वास पात्र साथी कहते थे किन्तु शिवाजी— सुभाष को अपना नेता ही कहते थे।

** ** ** ** **

आखिर वह दिन आ ही गया, रिहाई का परवाना मिला और जेलर ने शिवाजी की रिहाई कर दी और जब वे जेल का फाटक पार कर बाहर आये उनके समक्ष एक 'दो राहा' था। उनके कदम खुद-ब-खुद उस राह पर चल पड़े जो राह गोखले की ओर जाती थी और जिस समय उसने गोखले के पैरों को छुआ, उसे ऐसा लगा जैसे उसके अन्तस् में एक दिव्य प्रकाश कौंध गया। गोखले ने उनके कन्धे पर हाथ रखते हुए इतना ही कहा था—"जाओ! जाओ! युवक! जो सेवा कर सको, जो समय लगा सको, देश सेवा में लगाना।"

चिकित्सा शास्त्र का अध्ययन, राष्ट्र-सेवा की नित नई कल्पना और अपने सम्पर्क वालों का एक दल गठित करना उनकी दिनचर्या बन गया। उन्होंने जो संगठन बनाया, उसका नाम रखा—'हनुमान व्यायाम

प्रसारक मण्डल'। समय बीतता चला गया। उनका अध्यवसाय अनवरत चलता रहा और जिस दिन वे चिकित्सक माने गये पुन: गोखले के चरणों में पहुँच गये। आशीर्वाद माँगा, सेवा व्रत के संकल्प को दुहराया और गोखले ने आशीर्वाद दिया, प्रसन्नता प्रकट की, किन्तु चाहने पर भी शिवाजी को सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी की सदस्यता प्रदान करने में असमर्थ रहे। वहीं पहली बार शिवाजी ने गुरू पत्नी को देखा। उनकी दोनों हाथों की उंगलियाँ गल चुकी थीं। वह एकटक कभी अपने गुरू गोखले को और कभी 'गुरू पत्नी' को एकटक देखते रहे। उनका हृदय 'हा हा कार' कर उठा।

सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी में प्रविष्टि न पाकर दुःखी शिवाजी ने पुनः गोखले से निर्देश माँगा—"शिवाजी मैंने तो तुम्हें पहले ही बताया था— जाओ! सेवा करो! भारत माँ की सेवा, तो जाओ! करो सेवा..........।" शिवाजी गुरू के निर्देश को स्वीकार कर चल पड़े। अपने स्थिर चित्त में एक 'संकल्प' एक 'दृढ़ संकल्प' और अमरावती से तीन किलोमीटर दूर, एक 'वन-क्रान्तर' में, झाड़ी-झंखाड़, काट-सँवार, दिन-रात परिश्रम करते 'तपोवन' का स्वरूप देने लगे। वहाँ 'फूस' की कुटिया, एक नहीं, दो नहीं, कई बनती चली गईं। निकट ही एक जलाशय और 'गुरू गोखले की प्रतिमा' जो हृदय में संजोये थे, उसी 'महापंडित गोपाल कृष्ण गोखले' को वहाँ तपोवन में स्थापित किया।

"द्रोण द्वारा स्वीकार न किये गये, एक और 'एकलव्य' ने गुरू की मूर्ति के समक्ष, हृदय में 'गुरू' के समक्ष लिये गये संकल्प की पूर्ति में जुट गया। दिन-रात, अंधेरे-उजाले, सर्दी-गर्मी और धुआँधार बरसात में भी उस 'एकलव्य' का अभ्यास व कार्य चलता रहा। 'दरिद्र नारायण' अपने नये वेष में जिनसे 'दीनता' ही नहीं 'विद्रूपता' भी प्रकट होती थी, महाराष्ट्र—कर्नाटक ही नहीं, दूर-दूर से भी 'कुष्ठ-रोगी' के रूप में 'तपोवन' आने लगे। आश्रम के रूप में, 'कुटिया' और 'सेवक' तथा 'चिकित्सक' के रूप में 'शिवाजी'।" डाक्टर शिवाजी राव पटवर्धन, गुरू मूर्ति के ठीक सामने, अपने 'कुष्ठ आश्रम' को, जिसका नाम रखा—'जगदम्ब कुष्ठ आश्रम', व्रत-हीन हो गये।

प्रथमतः पाँच कुष्ठ रोगियों से प्रारम्भ किया गया 'कुष्ठाश्रम' अपने संकल्पित कार्य में लगा रहा। दिन बीते, रात बीती, साल बीते— झोपड़े फैलते गये, आश्रम बढ़ता गया, तीन सौ एकड़ के क्षेत्र में बना 'तपोवन', जिसमें रोगियों की संख्या, जो उनके 'नारायण' थे, अब हजार की संख्या पार कर गयी। वे अपने भोजन के लिए स्वयं वहीं खेती करते— अन्य उद्योग चलाते— और आपस में एक परिवार की तरह रहते। डॉ० शिवाजी पटवर्धन ने उनका आपस में विवाह भी करवाना प्रारम्भ कर दिया जिससे सन्ततियाँ पैदा होतीं रहीं, अब उनकी संख्या चौदह सौ पहुँच गई थी। वह विश्व का सबसे बड़ा 'जगदम्ब कुष्ठ आश्रम' बन चुका था। उसकी ख्याति दिग्-दिगन्त तक फैल गई थी। तीन सौ एकड़ का तपोवन, अब पन्द्रह सौ एकड़ में फैल चुका था। तपोवन के निवासी अपना कार्य करते, खेती करते, शिक्षा प्राप्त करते और डॉ० शिवाजी उन्हें अपना 'पितृवत' स्नेह लुटाते रहते।

'एकलव्य' की साधना पर 'गुरू मूर्ति' आशीष लुटाती रही, तभी एक दिन, एक बड़ा अधिकारी डॉ० पटवर्धन से मिला, उनसे आग्रह करते हुए कहा—"डॉ० साहब! सरकार चाहती है कि देश भर की जेलों में, कुष्ठ रोगियों की संख्या बहुत अधिक हो गई है, क्या आप उन्हें अपने 'तपोवन' में रख सकते हैं? वे सजायाफ्ता और अपराधी हैं।"

डॉ० पटवर्धन ने उत्तर दिया—"आफिसर! मेरे इस 'तपोवन' में केवल 'भगवान दरिद्र नारायण' हैं—यहाँ न कोई 'धर्मात्मा' है, न 'अपराधी', आप उन्हें यहाँ भेज सकते हैं, किन्तु यह 'खुली जेल' रहेगी।"

विभिन्न जेलों से जेलबन्दी कुष्ठ रोगी भेजे जाने लगे। प्रारम्भ में साठ और बाद में दो सौ से लेकर ढाई सौ रुपये 'प्रति कैदी' सरकार से अनुदान प्राप्त होता था। कुछ समय के उपरान्त अव्यवस्था और सरकारी वित्तीय कठिनाइयों के कारण, चालीस बसों में सभी 'कुष्ठ रोगियों' को भारत सरकार बुलवा लिया। किन्तु आश्चर्य तो तब हुआ जब सभी रोगी कैदी कुछ ही समय में भाग कर पुनः 'तपोवन' में आ गये।

कार्याधिक्य के कारण प्रबन्ध हेतु एक कुशल प्रबन्धक की माँग उन्होंने सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी से की। सोसाइटी ने श्रीराम भाऊ गुप्ते को 'तपोवन' भेज दिया। श्री गुप्ते ने वहाँ पहुँचते ही अपनी प्रबन्ध कुशलता और सेवा भाव से लोकप्रियता प्राप्त कर ली। कार्य द्रुत गति से बढ़ने लगा—हस्तकरघा, कृषि, चटाई एवं दरी आदि के निर्माण में कुष्ठ रोगी, जो अब अपने आप को पहले की तरह, दुनियाँ की सड़ी-गली और घृणित वस्तु न समझ कर, इंसान की तरह जीने की लालसा मन में पालने लगे थे। समय बीतता रहा, डॉ० पटवर्धन अब बानबे वर्ष के हो चुके थे।

वर्ष था उन्नीस सौ चौरासी का। एक दिन उन्होंने श्रीराम भाऊ गुप्ते और अपने दूसरे सहयोगी श्री आर० वी० नेवे को बुलाया और कहा—"मैं अब 'तपोवन' से जाना चाहता हूँ। मैं संतुष्ट हूँ कि 'तपोवन' चलता रहेगा, अब मैं आत्म चिन्तन में लगूँगा, मैंने अपने संकल्प की पूर्ति कर ली।" और उस महान 'सेवा-व्रती' ने 'गुरू-मूर्ति' को अन्तिम बार माथा टेक, 'तपोवन' छोड़ दिया।

1984 में डॉ० पटवर्धने ने तपोवन त्यागा था, और ठीक दो वर्ष बाद 1986 में डॉ० शिवाजी राव पटवर्धन ने अपने नश्वर शरीर का त्याग कर दिया। 'गुरू' ने 'एकलव्य' का 'अँगूठा' नहीं माँगा।

** ** ** ** **

सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी के कार्यालय में बैठा हुआ मैं—श्री आर० वी० नेवे से टेलीफोन पर वार्ता कर रहा था। श्री नेवे बता रहे

थे....... बताते-बताते मैंने स्पष्ट महसूस किया कि वे अपने अतीत में, पुरानी यादों में खो गये हैं, उनकी आवाज भर्रा रही थी, मैंने फोन पर उनसे पूछा—"मि० नेवे क्या आप अन्तिम समय में उनके पास थे?"

श्री नेवे—"जी हाँ! मैं उन्हीं के पास था।" पुरानी यादों को टटोलते हुए उन्होंने पुनः कहा—"डॉ० साहब ने मुझसे स्पष्ट कहा, मेरा कार्य समाप्त हो चुका है— मैं अब जाना चाहता हूँ।" कुछ क्षण बाद उन्होंने फिर कहा—"उन्होंने अन्न-जल त्याग दिया, मृत्यु से कुछ पूर्व उन्होंने मुझसे कहा—

"मांझे असते पण लोपो,

मांझे नाम रूप हरपो।

Not a stone should tell where I lie."

मैंने श्री नेवे से उस मराठी वाक्य का अर्थ पूछा। नेवे ने कहा—"मैं हूँ! मेरी यह भावना न रहे, मेरा नाम, मेरा रूप समाप्त हो जाय। एक पत्थर भी न बता सके कि मैं कहाँ हूँ।"

कुछ क्षण फोन पर आवाज नहीं आई। फिर नेवे की भीगी और विसूरती आवाज सुनाई दी—"मैंने डॉक्टर साहब की सभी चीजें जला दीं,........ न एक चित्र बचा, न एक वस्त्र बचा और न उनके उपयोग की कोई अन्य वस्तु, हाँ! मैंने डॉक्टर साहब की उनकी स्वयं लिखित चालीस ग्रन्थों की पाण्डुलिपियाँ नहीं जलाईं। उसे मैंने उनकी बेटी सुश्री अनुताई भागवत के पास, जो एक सच्ची समाजसेविका हैं, भेज दिया।

फोन रख दिया गया था—मैं सोचता रहा—'एकलव्य' के गुरू ने शिष्य का दाहिना अँगूठा माँग कर शिष्य की पहचान मिटानी चाहिए, और इधर! दूसरे एकलव्य ने 'गुरूचरणों' में अपनी पहचान को स्वतः अर्पित कर दिया।

Mr. R.V. Neve – WORK IN TAPOVAN

Vidarbh Mahrogi Seva Mandal is in Amaravati District, Maharashtra. The Institute has 8 centres, 1400 acres agricultural land and near about 1500 patients i.e. inmates.

Mr. R.V. Neve, Member of the Society worked for those patients in the Ashram. Patient's lodging, boarding, treatment etc. was looked after by Mr. R.V. Neve.

Children of the leprosy patients were segregated and sent to remand homes in Maharashtra. Mr. R.V. Neve started and run Gokhale Vidyarthigrih in Tapovan for them.

Convicts who suffered from leprosy in Jail were sent to Tapovan by Maharashtra Govt. Mr. R.V. Neve was running and managing open jail for them in Tapovan.

Mr. R.V. Neve started a handloom unit for leprosy patients in the Ashram. He provided them gainful work.

Mr. R.V. Neve arranged and performed marriages of cured leprosy patients and rehabilitated them near Tapovan Ashram.

Mr. R.V. Neve could provided small business to cured leprosy patients with help of the State Bank of India, Amravati.

'बिराज'

आर० वी० नेव

Neelam Textiles

MAIN ROAD, BAZPUR-262401 (U.S. NAGAR)

Ph. 05949-(S) 281180, (R) 281141, Cell : 9412088180

E-maill : Neelam textiles@ sancharnet, co.in

भारतीय संस्कृति और स्वाधीनता

लक्ष्मी नारायण पाण्डेय

एडवोकेट हाईकोर्ट, इलाहाबाद

'वैदिक भावराशि' भारतीय संस्कृति का मूल है। 'धर्मसूत्र', स्मृति, पुराण, तन्त्र सभी वेद की छाया लेकर धन्य-धन्य हो रहे हैं, तथा ये समस्त ग्रन्थ भारतीय संस्कृति के काण्ड, पत्र और फल-फूल हैं। स्वाधीनता के प्रभात में प्राची दिशा उद्भासित हो उठी है। पराधीनता की अन्धकारमयी रजनी के अवसान से स्वाधीनता का प्रभामण्डल क्या विश्वकल्याण के प्रभात की सूचना देगा?

यही वात हृदय में उठती है कि पुरा-अतीत के विश्ववन्द्य भारत द्वारा जगत का क्या कोई कल्याण हो सकता है? रोगग्रस्त भारत, क्या रोग मुक्त हो सकता है? सदियों की दासता झेल चुका स्वाधीन भारत, विश्व के प्राङ्गण में, मर्यादा वृद्धि का अभ्युदय अर्जित कर सकता है? आज विश्व में विज्ञान का एक छत्र साम्राज्य है, वैज्ञानिक आविष्कार विश्व के निवासियों के मन को चमत्कृत कर रहे हैं। 'परमाणु तकनीकि', 'सुपर कम्प्यूटर', सव मैरिन के पीछे अन्धाधुन्ध भागता पाश्चात्य जगत और कहाँ भारतीय संस्कृति की नीरव साधना, निष्पन्द गति, और शान्तिमय प्रकृति। यदि आज भारत को बाध्य होकर विज्ञान के पीछे, पाश्चात्य अनुवर्ती होकर, यन्त्र-शिल्पादि हेतु, परमुखापेक्षी हो अपनी संस्कृति को तिलाञ्जलि देनी पड़े, तो इस स्वतन्त्रता की सार्थकता कहाँ तक रक्षित हो पायेगी? क्या यह विचारणीय नहीं?

भारतीय संस्कृति के पीछे छिपा हुआ स्वाधीनता का आदर्श क्या है? यही विचारणीय है। सदियों के पराधीन भारत में भी, स्वाधीनता का कवचवद्ध वीज कोई है या नहीं, परन्तु भारत की मिट्टी में इसकी अभिव्यक्ति, दो रूपों में हुई, एक 'भौमिक' (राष्ट्रीय) और दूसरी 'आत्मिक' और इन्हीं दोनों रूपों की सम्यक्-अभिव्यक्ति से ही पूर्ण स्वाधीनता का स्वरूप वनता है।

'राष्ट्र'अथवा भूमि की स्वाधीनता तो कालवश कभी भी विपर्यय को प्राप्त हो सकती है, किन्तु भूमि के पराधीन होने पर भी आत्मिक स्वाधीनता का विपर्याय नहीं होता, जव तक कि उस 'भूमि' के निवासी स्वेच्छापूर्वक अपने आत्मिक स्वरूप को परकीय भावों के अधीन न वनावें। जव तक आत्मिक स्वाधीनता का ज्ञान वना रहता है, तव तक किसी भी देश के निवासी अपने आचार-विचार, आहार-विहार, वेश-भूषा आदि समस्त विषयों में सचेत रहते हैं, अर्थात् अपने देश की संस्कृति के अनुसार चलते ही हैं। भौमिक (राष्ट्रीय) स्वाधीनता पर व्याघात हो भी तो आत्मिक स्वाधीनता के नष्ट होते ही राष्ट्रीय स्वाधीनता भी चली जाती है। उदाहरणार्थ फारस के 'अग्निपूजकों' पर अरव का मुस्लिम आक्रमण हुआ, भौमिक स्वाधीनता समाप्त हुई, कुछ पारसीक स्वदेश छोड़कर भारत में प्रवासी बने, अवशिष्ट पारसी अपनी आत्मिक स्वाधीनता त्याग, चिरकाल के लिये विजेता में घुल-मिल गये, इधर भारत के प्राचीन प्रवासी पारसी, आत्म संस्कृति की रक्षा करके विपुल धन और सम्मान के अधिकारी बने हुये हैं। अनेक जातियों, अनेक संस्कृतियों और अनेक आक्रान्ताओं ने भारत पर सदियों से आक्रमण का दौर चलाये रखा, भूखण्डों पर अधिकार जमाया और उन विजेताओं ने अपनी संस्कृति लादने की अदम्य चेष्टा भी की है, परन्तु 'भारतीय (हिन्दू) संस्कृति' को आंशिक क्षति पहुँचाने के अतिरिक्त इसको विलुप्त नहीं कर सके। संस्कृति की महिमा से, 'आत्मिक-स्वाधीनता' के प्रवल पराक्रम से, 'भारतीय (हिन्दू) संस्कृति' अजेय ही बनी रही, अजेय है, और यदि आत्मिक स्वाधीनता का 'अखण्ड-दीप' जलता रहा तो, अजेय ही रहेगी।

भगवान 'मनु' कहते हैं—

सर्व परवशं दुःखं सर्वमात्मवशं सुखम् ।
एतद्विद्यात्समासेन लक्षणं सुख दुःखयोः ।।

अर्थात् — 'जो कुछ पराधीन है, दुखप्रद है, और जो कुछ स्वाधीन है, वही सुखप्रद है। वही सुख-दुख का संक्षिप्त लक्षण है, ऐसा जानना चाहिए।'

मुगल वादशाह अकवर ने भारत की आत्मिक स्वाधीनता और उसके प्रभाव को समझते हुये, इस्लाम की प्राचीन रीति 'एक हाथ में तलवार, दूसरे में कुरान', को त्याग कर कौशलपूर्वक मधुरता से जन-चित्त को आकर्षित करने की चेष्टा की। जन सामान्य 'दिल्लीश्वरो वा जगदीश्वरो वा' की प्रशस्ति गा उठा, किन्तु उसका भी वह कौशल भारतीय (हिन्दू) संस्कृतिके समक्ष असफल हो गया - मुस्लिम भी इस संस्कृति के प्रभाव से न वच सके - वे भी भावापन्न हो उठे - घर-घर में 'सत्यवीर' और 'सत्यनारायण' की उपासना, गाँव-गाँव में 'पीर' की दरगाह में हिन्दू-मुस्लिम धरना, और मनौती, 'औलावीवी' और 'शीतला' की पूजा-परिक्रमा, निराकारवादी मुस्लिम भी साकार उपासना में अग्रसर हो उठे। 'मानिक पीर' के स्थान मिट्टी के घोड़ों से भर गये, - हिन्दू-मुस्लिम सांस्कृतिक सौख्य प्रारम्भ हो गया था, किन्तु एक ओर थी शान्तिमय प्रकृति और दूसरी ओर थी क्रूर आक्रान्ता की सी अशान्त, विप्लवी मानसिकता का नायकत्व,

"The Mohamedons have themselves become Hinduized and have been brought into the meshes of Caste."

(Rev. Sherring in "Castes and Tribes of India.")

1857 का विद्रोह हुआ, अंग्रेजी हुकूमत ने समझ लिया कि 'भारतीय संस्कृति' की प्रेरणा ने ही वैदेशिक शासन के प्रति विद्रोह की भावना पैदा की थी। फलत: एक नवम्बर अठारह सौ अट्ठावन (01.11.1858) को महारानी विक्टोरिया ने घोषणा पत्र निकाला। बाध्य होकर वचन दिया गया—'हिन्दू-संस्कृति के विषय में हस्तक्षेप नहीं किया जायेगा।' इस घोषणा द्वारा हिन्दू जन साधारण चित्त को सान्त्वना प्रदान करने की लाभ भी बुद्धिमान अंग्रेज समझते थे कि "हिन्दू संस्कृति हमको बाहर ही बाहर रखेगी। हम भारत की रक्षा चौकीदार की तरह तो कर सकेंगे किन्तु अन्त: में हमारा प्रवेश न हो सकेगा। उपचार ! मात्र 'हिन्दू संस्कृति' के परिवर्तन से ही सम्भव था।" फलत: इसाई मिशनरियों ने 'भारतीय संस्कृति के विरुद्ध शासन सत्ता के सहयोग से विराट प्रचार-अभियान प्रारम्भ करते हुये, 'हिन्दू संस्कृति' की बड़ी ही कुरूप और विकृत तस्वीर देश-विदेश में प्रदर्शित व प्रचारित करना प्रारम्भ कर दिया। उन्होंने भारत में अंग्रेजी शिक्षा, अंग्रेजी संस्कृति, अंग्रेजी आचार-विचार और उससे प्रभावित भारतीयों को उच्च उपाधि, पद और सुविधा का उत्कोच दिया।

भारतीय (हिन्दू) संस्कृति यही शिक्षा देती है कि - 'पर मुखापेक्षी न रहकर अपने पैरों के सम्बल से ही खड़ा होना सर्वापेक्षा बड़ी स्वाधीनता है।'

हिमालय सी प्राचीर और महासागर सी परिखा द्वारा रक्षित होकर, यह भारत जैसा देश जिस प्रकार वैशिष्ट्य धारण कर रहा है, उसी प्रकार इस देश की शिक्षा-दीक्षा, सभ्यता और संस्कृति अन्य देशों की अपेक्षा असाधारण हैं। इसीलिये श्री 'उडरफ' साहब ने कहा था—

"भारत वैसी कोई भौगोलिक सत्ता नहीं है, और न उस प्रकार की कोई जन समष्टि है, जो अचानक पृथ्वी के किसी अंश में आकर पड़ गई हो, अथवा इसके किसी प्रान्त में पड़ी रह सकती हो, भारत ज्ञान का प्रतीक है।"

'प्लेटो' ने अत्यन्त दुख के साथ कहा — "जो मनुष्य अपने देश की संस्कृति के प्रति घृणा उत्पन्न करता है, उससे बढ़कर पापी कोई दूसरा नहीं, ऐसे मनुष्य का मर जाना ही श्रेयस्कर है।"

'एडमण्ड' वर्क महोदय ने कहा—

"स्वाधीनता एक भाव है और अन्य भावों की तरह यह भी प्रत्यक्षगम्य नहीं है। प्रत्येक जाति अपनी कतिपय प्रिय वस्तुओं की धारणा को लेकर स्वाधीनता के रूप को गठित करती है, जिसकी पूर्णता के ऊपर सुख के मानदण्ड की कल्पना की जाती है।"

स्वाधीनता के द्वारा मनुष्य सुखी होगा, केवल इसीलिये स्वाधीनता की कामना होती है। स्वाधीनताप्राप्त करके भी यदि देशवासी निरन्तर दु:ख-कष्ट भोग करें तो उससे क्रमश: आन्तरिक असन्तोष और अशान्ति ही उत्पन्न होती है।

'स्वाधीनता के नाम पर यदि परमुखोपेक्षित और परकीय संस्कृति का अनुकरण अथवा अपनी संस्कृति का विसर्जन हो तो, विदेशी शासन के स्थान पर स्वदेशी शासन का प्रतिष्ठित होना, स्वाधीनता का आभास मात्र है, यथार्थ स्वाधीनता नहीं है, और ऐसी स्वाधीनता से कभी सुख प्राप्त नहीं हो सकता।'

आज भारत-भूमि से दूर खड़े होकर ब्रिटिश यूरोपियन लोग इस 'हिन्दू' 'भारतीय संस्कृति' के विनाश की बाट जोह रहे हैं, वे लोग स्वयं जिस संस्कृति विनाश में समर्थ नहीं हो सके, आज भारतवासियों के द्वारा ही वे उसी 'संस्कृति विनाश' की कुचेष्टा के सफल होने की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

आज आत्मोन्नति और संस्कृति विषयक शिक्षा की व्यवस्था शून्य है। 'हिन्दू संस्कृति' को विज्ञान के चरण तले लुण्ठित करने की मनोवृत्ति से - 'भारत की वाह्य स्वतन्त्रता कुछ काल तक रहते हुये भी, आन्तरिक पराधीनता क्रमश: जड़ पकड़ती जायेगी। स्वाधीनता के नाम पर स्वेच्छाचारिता का राज्य हो जायेगा, चित्त की मलीनता से प्रान्तीयता और उससे अन्तर्विप्लव बढ़ेगा, और स्वाधीनता विपत्तिग्रस्त हो जायेगी।

आज के सन्दर्भ में यह आवश्यक है कि - विज्ञान के ऊपर मानवता को प्रतिष्ठित करना, विज्ञान के ऊपर धर्म का स्थान निश्चित करना, विज्ञान के नियन्त्रण हेतु लोगों को 'परमार्थ-अनुसन्धान' में लगाना - यही शासन का कर्त्तव्य है, यही भारत का कर्त्तव्य है और यही मानवता की अपेक्षा भी है।

आज के युग में विज्ञान को हेय नहीं माना जा सकता है, परन्तु इसी के साथ वह मध्यम मार्ग भी खोजना होगा, वह योजना भी बनानी होगी, जिसके द्वारा विज्ञान की अनिष्टकारिता और इष्टकारिता की तुलनात्मक समालोचना निष्पक्ष भाव से की जा सके, जिससे विज्ञान के विनाशात्मक प्रभाव को नष्ट करने के लिये 'शान्ति और सन्तोष' के आदर्श को विश्वपटल पर रखा जा सके। इस आदर्श की स्थापना होने से 'भारतीय संस्कृति' का अत्युच्च आसन विश्व के समक्ष प्रतिष्ठित होगा, और परस्पर भौतिक स्पर्धा में लीन पाश्चात्य शक्तियाँ-जातियाँ, आत्म विनाश रूपी रोग की महौषधि के रूप में इस आदर्श को ग्रहण करने के लिये बाध्य होंगी। यदि किसी दिन इस प्रकार का विश्व कल्याण प्रतिष्ठित हो सका तभी भारत की स्वाधीनता सार्थक होगी।

राष्ट्रकवि मैथिली शरण गुप्त ने कहा है—

"अपनी संस्कृति का अभिमान,
करो सदा हिन्दू सन्तान।
सब आदर्शों की वह खान
नररत्नत्व करेगी दान"
अपनी चिर संस्कृति की मूर्ति,
है मनुष्यता की परिपूर्ति।
प्राण रूप उसका पुरुषार्थ,
साधन करता है, परमार्थ।।
युग-युग के संचित संस्कार,
ऋषि मुनियों के उच्च विचार।
धीरों वीरों के व्यवहार,
हैं, निज संस्कृति के श्रृँगार।।

आदिवासी भारत के
(एक संक्षिप्त परिचय)

बनवारी लाल गौड़ (अध्यक्ष)
भारतीय आदिम जाति सेवक संघ नई दिल्ली।

सामान्यतया 'आदिवासी' शब्द का प्रयोग किसी क्षेत्र के मूल निवासियों के लिये किया जाना चाहिए, कि विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में जहाँ अलग-अलग धाराओं में अलग-अलग क्षेत्रों से आकर लोग बसे हों, उस क्षेत्र में, उस विशिष्ट भाग के प्राचीनतम अथवा प्राचीन निवासियों के लिए भी इन शब्दों का प्रयोग किया जाता है; उदाहरणार्थ— 'रेड इंडियन' अमेरिका के आदिवासी कहे जाते हैं। प्राचीन साहित्य में दस्यु, निषाद आदि के रूप में जिन विभिन्न प्रजाति के समूहों का उल्लेख किया गया उनके वंशज समसामयिक भारत में आदिवासी माने जाते हैं।

अधिकांश आदिवासी संस्कृति के प्राथमिक धरातल पर जीवन यापन करते हैं। वे सामान्यतः क्षेत्रीय समूहों में रहते हैं। उनकी संस्कृति अनेक दृष्टियों से स्वयं पूर्ण रहती है। इन संस्कृतियों में ऐतिहासिक जिज्ञासा का अभाव रहता है तथा ऊपर की थोड़ी सी पीढ़ियों का यथार्थ इतिहास क्रमशः किंवदन्तियों और पौराणिक कथाओं में घुल-मिल जाता है। सीमित परिधि और लघु जनसंख्या के कारण इन संस्कृतियों में स्थिरता रहती है। किसी एक काल में होने वाले सांस्कृतिक परिवर्तन अपने प्रभाव एवं व्यापकता में अपेक्षाकृत सीमित होते हैं। परम्परा केन्द्रित आदिवासी संस्कृतियाँ, इसी कारण अपने अनेक पक्षों में रूढ़िवादी सी दिखाई देती हैं। उत्तर और दक्षिण अमेरिका, अफ्रीका, आस्ट्रेलिया, एशिया तथा अनेक द्वीपों-द्वीप समूहों में आज भी आदिवासी संस्कृतियों के अनेक रूप देखे जा सकते हैं।

भारत में आदिवासी समूहों की संख्या 292 है। प्रजातीय दृष्टि से इन समूहों में नीग्रिटो, प्रोटो-आस्ट्रालायड और मंगोलायड तत्व मुख्यतः प्राप्त होते हैं। यद्यपि कतिपय नृतत्व शास्त्रियों ने नीग्रिटो तत्व के सम्बन्ध में शंकायें प्रकट की हैं। भाषा शास्त्र की दृष्टि से इन्हें 'आस्ट्रो-एशियायी', द्रविड़ और तिब्बती-चीनी परिवारों की भाषायें बोलने वाले समूहों में विभाजित किया जा सकता है। भौगोलिक दृष्टि से 4 प्रमुख क्षेत्रों में आदिवासी भारत का विभाजन किया जा सकता है—

1. उत्तर-पूर्वीय क्षेत्र
2. मध्य क्षेत्र
3. पश्चिमी क्षेत्र
4. दक्षिण क्षेत्र

उत्तर-पूर्वीय क्षेत्र के अन्तर्गत हिमालय अंचल के तिस्ता उपत्यका और ब्रह्मपुत्र की यमुना-पदमा शाखा के पूर्वी भाग गुरूंग, लिंबू, लेपचा, आका, डाफला, अबोर, मिरी, मिशमी, सिंगपो मिकिर, रामा, कचारी, गारो, खासी, नागा, कुकी, लुशाई और चकमा आदि उल्लेखनीय हैं।

मध्य क्षेत्र का विस्तार उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर जिले के दक्षिणी और राजमहल पर्वत माला के पश्चिमी भाग से लेकर दक्षिण में गोदावरी नदी तक है। संथाल, मुंडा, उरांव, हो, भूमिज, खड़िया, बिरहोर, जुआंग, खोंड़, सबरा गोंड़, भील, बैगा, कोरकू, कमार आदि इस क्षेत्र के प्रमुख आदिवासी समाज हैं। पश्चिमी क्षेत्र में, भील, ठाकुर, कटकरी आदि आदिवासी निवास करते हैं। मध्य पश्चिम राजस्थान से लेकर दक्षिण में सह्याद्रि तक का पश्चिमी प्रदेश इस क्षेत्र में आता है। गोदावरी नदी से लेकर दक्षिण में कन्याकुमारी तक दक्षिणी क्षेत्र का विस्तार है। इस क्षेत्र में जिन आदिवासी समूहों का विस्तार है उनमें चेंचू, कोंडा, रेड्डी, राजगोंड, कोया, कोलाम, कोता, कुरूंबा, बडागा, तोडा, काडर, मलायन, मुशुवन, उराली और कनिक्कर आदि उल्लेखनीय हैं।

नृतत्व वेत्ताओं ने इन समूहों में से अनेक का विशद शारीरिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अध्ययन किया है। इस अध्ययन के आधार पर भौतिक संस्कृति तथा जीवन यापन के साधन, सामाजिक संरचना, धर्म, बाह्य संस्कृति तथा प्रभाव आदि की दृष्टि से आदिवासी भारत के विभिन्न वर्गीकरण करने के अनेक वैज्ञानिक प्रयत्न किये गये हैं। इस परिचयात्मक रूपरेखा में इन प्रयत्नों का उल्लेख संभव नहीं है।

यद्यपि प्राचीनकाल में आदिवासियों ने भारतीय परम्परा के विकास में महत्वपूर्ण योगदान किया था, जिनके कतिपय रीति-रिवाज और विश्वास आज भी थोड़े बहुत परिवर्तित रूप में आधुनिक हिन्दू समाज में देखे जा सकते हैं। यद्यपि यह निश्चित है कि वे बहुत पहले ही भारतीय समाज और संस्कृति के विकास की मुख्य धारा से पृथक हो गये थे।

आदिवासियों की सांस्कृतिक भिन्नता को बनाये रखने में कई कारणों का योगदान रहा है। मनोवैज्ञानिक धरातल पर उनमें अनेक में प्रबल 'जन-जाति-भावना' (ट्राइबल फीलिंग) है। सामाजिक, सांस्कृतिक धरातल पर उनकी संस्कृतियों में अनेक ऐसी संस्थायें हैं जो हिन्दू समाज की संस्थाओं से भिन्न हैं, परन्तु जिनका आदिवासियों की संस्कृतियों के गठन में महत्वपूर्ण स्थान है। असम के 'नागा' आदिवासियों की 'नरमुण्ड प्राप्ति' तथा बस्तर के 'मुरियों' की 'घोटुल' संस्था, 'रोडा' में 'बहुपतित्व', 'कोया' समूह में 'गोवलि' की प्रथा आदि का उन समूहों की संस्कृति में बड़ा ही महत्वपूर्ण स्थान है, परन्तु ये संस्थायें और प्रथायें भारतीय समाज की प्रमुख प्रवृत्तियों के अनुकूल नहीं हैं। आदिवासियों की संकलन-अखेटक अर्थव्यवस्था तथा उससे कुछ अधिक विकसित अस्थिर और स्थिर कृषि की अर्थव्यवस्थायें अभी भी परम्परा स्वीकृति प्रणाली द्वारा ही कमोवेश चलाई जा रही हैं। धर्म के क्षेत्र में 'जीववाद', पितृ पूजा आदि हिन्दू धर्म के समीप लाकर भी उन्हें भिन्न रखती हैं।

आज के आदिवासी भारत में, पर संस्कृति प्रभावों की दृष्टि से आदिवासियों के चार प्रमुख वर्ग दिखाई देते हैं। प्रथम वर्ग में पर-संस्कृति प्रभावहीन समूह हैं। दूसरे वर्ग में पर-संस्कृतियों द्वारा अल्प प्रभावित समूह, तीसरे वर्ग में पर-संस्कृतियों से प्रभावित किन्तु स्वतंत्र सांस्कृतिक अस्तित्व वाले समूह और चौथे वर्ग में ऐसे आदिवासी समूह आते हैं, जिन्होंने पर-संस्कृतियों का स्वीकरण इस मात्रा में कर लिया है कि अब वे नाम मात्र के लिए आदिवासी रह गये हैं।

पंथ निरपेक्ष धर्माधारित शिक्षा

डॉ० (श्रीमती) अरून्धती त्रिपाठी
प्रतापगढ़ (उ० प्र०)

शिक्षा का व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ है "ज्ञानाभिग्रहण"। मनुष्य सहज जिज्ञासु प्रवृत्ति का प्राणी है। उसकी ज्ञान पिपासा अदम्य है। वह निरन्तर नवीनतम ज्ञानार्जन की चेष्टा में लगा रहता है। इस अर्जित ज्ञान को विश्वकल्याण के लिए सर्वोत्तम उपयोग की प्रेरणा देता है धर्म, साथ ही धर्म के वास्तविक एवं व्यवस्थित रूप को समाज के सम्मुख प्रस्तुत करने का कार्य करती है शिक्षा। इस प्रकार शिक्षा एवं धर्म का अन्योन्याश्रित सम्वन्ध है। वस्तुतः शिक्षा को धर्मप्राण होना चाहिए। सामान्य रूप से यह मान्यता वड़ी विचित्र-सी प्रतीत होती है, क्योंकि जहाँ आज धर्म के नाम पर मनुष्य-मनुष्य के ही रक्त का प्यासा हो गया है, वहाँ यदि शिक्षा का आधार ही धर्म हो जाएगा तो कल्पना भी नहीं की जा सकती कि किसी समाज या देश की क्या स्थिति होगी। यही कारण है कि आधुनिक गणतांत्रिक शासन प्रणाली के समर्थक, राजनीति को भी धर्म से पृथक रखना चाहते हैं। मार्क्सवादी तो धर्म की तुलना अफीम के नशे से करते हैं। यह परिस्थिति क्यों उत्पन्न हुई? क्यों आज धर्म के नाम से ही भय लगता है? इसका एकमात्र कारण है, धर्म के मौलिक स्वरूप की अनभिज्ञता तथा इसका भी मूल कारण है धार्मिक अशिक्षा। धार्मिक शिक्षा के अभाव में धर्म को सम्प्रदाय का पर्याय मान लिया गया है, यही स्थिति सम्पूर्ण विवादों की जननी है। अतएव हमें सर्वप्रथम यह ज्ञात करना होगा कि सम्प्रदाय अथवा पंथ एवं धर्म का क्या सम्वन्ध है, ये दोनों किस प्रकार एक दूसरे से पार्थक्य रखते हैं तथा शिक्षा प्रणाली में धर्म एवं पंथ का क्या स्थान होना चाहिए।

धर्म शब्द वस्तुतः अत्यन्त व्यापक अर्थ रखता है। 'अमरकोष' के अनुसार धर्म का अर्थ है "धारयति विश्वम्" अर्थात् जो विश्व को धारण करता है वही धर्म है। तात्पर्य यह है कि समग्र विश्व की समाज-व्यवस्था जिन शाश्वत मानवीय सद्‌गुणों के आधार पर टिकी है, वे सद्प्रवृत्तियाँ ही संगठित रूप से धर्म का कलेवर हैं। यथा सत्य, अहिंसा, अस्तेय, करुणा, मैत्री तथा त्याग आदि गुणों को देश, काल की सीमा का अतिक्रमण कर स्वभावतः मानवीय सभ्यता के आदिकाल से ही सम्पूर्ण विश्व में समान रूप से मान्यता प्राप्त है। इनके प्रभाव में किसी भी सामाजिक संरचना की कल्पना भी दुष्कर है। जव भी कोई समुदाय अथवा संगठन इसके विपरीत आचरण करने लगता है, तभी से उसके विनाश की प्रक्रिया मानो प्रारम्भ हो जाती है। इस प्रकार यह तो सिद्ध ही है कि विश्व धर्म एक है। भारतीय धर्मशास्त्रों में धर्म के इसी विश्वमान्य स्वरूप को अनेकशः परिभाषित किया गया है। महर्षि मनु ने धर्म के दस लक्षण बताए हैं, वे कहते हैं—

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।।

अर्थात् धैर्य, क्षमा, दम, अस्तेय, पवित्रता, इन्द्रिय निग्रह, विवेक, विद्या, सत्य एवं अक्रोध धर्म के दस लक्षण हैं। ये लक्षण पृथक-पृथक नहीं वरन् एक सम्यक् संगठन के द्वारा धर्म के स्वरूप का निर्माण करते हैं। संसार के प्रत्येक महापुरुष ने इसी धर्म का पालन किया। इन सद्प्रवृत्तियों के चरमोत्कर्ष ने ही उन्हें महापुरुष वनाया। ईसा मसीह इसके उत्तम उदाहरण हैं, उन्हें सलीव पर चढ़ा दिया गया किन्तु उन्होंने सत्य का मार्ग नहीं छोड़ा। उनके शरीर में कीलें ठोंक दी गईं तव भी उन्होंने ईश्वर से अपराधियों को क्षमा कर देने की ही प्रार्थना की। इसी प्रकार सुकरात ने हँसते-हँसते विषपान कर लिया किन्तु सत्य का दामन नहीं छोड़ा। ऐसा इन्द्रिय संयम था, भगवान महावीर का कि धर्ममार्ग पर चल पड़े तो जीवन पर्यन्त दिगम्वर ही रहे। इन महापुरुषों का जीवन-चरित्र धर्ममय जीवन का आदर्श है।

आज धर्म ईश्वर आराधना की पद्धति तक ही सीमित माना जाने लगा है। वस्तुतः भगवत् उपासना धर्म का एक अंश मात्र है, किन्तु यह अंश अत्यन्त महत्वपूर्ण है। मनुष्य में जहाँ सद्प्रवृत्तियाँ स्वाभाविक हैं, वहीं दुष्प्रवृत्तियाँ भी समान प्रभावी हैं। ये दुर्गुण सामान्यतः सद्‌गुणों की अपेक्षा अधिक प्रवल होते हैं। इनके द्वारा कहीं सद्प्रवृत्तियों का दमन न कर दिया जाए, इस सम्भावना से वचने के लिए उस महाशक्ति के दण्ड का भय आवश्यक है, जो इस सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति एवं संहार की कारणभूत शक्ति है। समय एवं परिस्थितियों के अनुसार संसार के प्रत्येक भाग में इस वात को माना गया तथा अपनी-अपनी सुविधा एवं साधनों के अनुकूल किसी महापुरुष को आदर्श मानकर विभिन्न उपासना पद्धतियों का आविष्कार कर लिया गया। ईश्वर की आराधना के द्वारा मनुष्य उसके शासन में अपना विश्वास व्यक्त करता है। किसी न किसी रूप में प्रत्येक उपासक यह मानता है कि सम्पर्ण विश्व ईश्वर की रचना है। इसी आधार पर तो वह कहता है—

अयं निजः परोवेति गणना लघुचेतसाम्।
उदार चरितानान्तु वसुधैव कुटुम्वकम्।।

अर्थात् यह तेरा है यह मेरा है ऐसा क्षुद्र विचार वाले मानते हैं, महान चरित्र वालों के लिए तो यह सम्पूर्ण धरा ही परिवार है। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना से ही प्रेरित होकर वैदिक ऋषि प्राणिमात्र के कल्याण की प्रार्थना करते हुए कहते हैं—

सर्वे भवन्तु सुखिन: सर्वेसन्तु निरामया।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दु:खभाग् भवेत्।।
सर्वस्तरतु दुर्गाणि सर्वोभद्राणि पश्यतु।
सर्व: काममवाप्नोतु सर्व: सर्वत्र नन्दतु।।

अर्थात् सभी सुखी हों, सभी रोगरहित (स्वस्थ) हों, सभी कल्याण दृष्ट वनें, कोई भी दु:ख का भागी न हो। सभी कठिनाइयों को पार कर लें, सभी का कल्याण हो, सभी कामनाओं को प्राप्त कर लें तथा सभी सर्वत्र प्रसन्नता को प्राप्त करें।

उपासकों की यह व्यापक दृष्टि धर्माचरण को पुष्ट करती हैं। किन्तु धर्म से इसका सम्बन्ध वहीं तक है जहाँ तक ईश्वर को एक माना गया है। वास्तव में होता यह है कि किसी एक प्रकार की उपासना पद्धति को मानने वाले अन्यों के सिद्धान्तों एवं पद्धतियों का न केवल विरोध करते हैं, अपितु सत्ता या अधिकार प्राप्त कर लें तो अपनी मान्यताओं को दूसरों पर वलपूर्वक लादने से भी नहीं चूकते, यही विरोध धार्मिक संघर्ष के नाम से अभिहित होने लगता है।

भारतीय हिन्दू धर्मशास्त्रों में एकेश्वरवाद को विशेष प्रतिष्ठा प्राप्त हुई है। जहाँ वेदान्त दर्शन "एको ब्रह्म द्वितीयो नास्ति" कहकर चराचर विश्व को ही ब्रह्ममय देखता है वहीं वेद, "एकमेवसद् विप्रा: वहुधा वदन्ति" अथवा "इन्द्रोमायाभि: पुरुरूप ईयते" कहकर अनेकता में व्याप्त एकता की पुष्टि करते हैं। यही दार्शनिक एवं वैदिक एकेश्वर वाद अग्रिम लौकिक संस्कृत साहित्य में भी रचा-वसा मिलता है। दामोदर मिश्र रचित हनुमन्नाटक के मंगलाचरण की ये पंक्तियाँ अनेकता की एकतावादी दृष्टि को वड़ी ही सुन्दरता एवं सहजता से उद्घटित करती हैं—

यं शैवा समुपासते शिव इति ब्रह्मेति वेदान्तिनो।
वौद्धा वुद्ध इति प्रमाणपटव: कर्तेति नैयायिका:।।
अर्हन्नित्यथ जैन शासनरता: कर्मेति मीमांसका:।
सोऽयंवो विदधातु वांछितफलं त्रैलोक्यनाथो हरि:।।

यहाँ शिव, ब्रह्म, वुद्ध, कर्ता, अर्हत् इत्यादि विभिन्न नामों से अभिहित एक ही सत्ता अभीष्ट है। इस प्रकार की मान्यताओं में विरोध का स्थान ही नहीं रहता। यदि शिक्षा का आधार इसी प्रकार समन्यववादी रहे तो कोई संघर्ष ही न रह जाए।

धर्म की ही विराट कुक्षि से जन्म होता है पन्थों अथवा सम्प्रदायों का। देश, काल एवं परिस्थितियों के पार्थक्य से धर्म की ही नींव पर सम्प्रदायों के प्रसाद खड़े कर दिये जाते हैं। कभी-कभी तो इन पांथिक अट्टालिकाओं की चकाचौंध में नींव में दवा धर्म पूर्णरूपेण विस्मृत हो जाता है। यद्यपि सम्प्रदायों की स्थिति मूल रूप से धर्म के आधारभूत नियमों पर ही आश्रित है तथापि कुछ राजनैतिक अथवा वैयक्तिक स्वार्थों के कारण इन धर्म नामधारी सम्प्रदायों के गोरखधंधे ने मानव को मानव से जोड़ने की अपेक्षा तोड़ने का कार्य ही अधिक किया है। आज का विश्वव्यापी आतंकवाद, अन्याय, स्त्रियों की उपेक्षा एवं शोषण, मानवाधिकारों का हनन, वैश्वीकरण की निर्वाध लहर में वाजार एवं भोगवादी संस्कृति का व्यापक प्रसार तथा सूचना क्रांति तथा इससे जुड़े उपकरणों का अनैतिक उपयोग, प्राकृतिक संपदा का दुरुपयोग एवं स्वार्थपरक दोहन तथा इस ग्रह (पृथ्वी) को भविष्य की पीढ़ियों के लिए प्रदूपित करना तथा मानवता को उसके नैतिक विकास के लक्ष्य से वंचित कर देना आदि इसके ज्वलन्त उदाहरण हैं।

पन्थ का अर्थ 'पथ' अर्थात् परमसत्ता की ओर ले जाने वाला मार्ग। वस्तुत: इन पन्थों अथवा सम्प्रदायों की मूलभूत भावना इतनी संकुचित नहीं है, क्योंकि किसी भी पन्थ प्रवर्तक ने किसी नवीन धर्म के प्रवर्तन की चेष्टा नहीं की, जैसे सिख पन्थ के प्रवर्तक गुरूनानक देव अथवा भगवान वुद्ध, महावीर स्वामी आदि ने मानव धर्म के शाश्वत् सिद्धान्तों की ही शिक्षा दी, इसे धर्म प्रवर्तन न कहकर यदि धर्म की स्थापना कहा जाए तो अधिक युक्तिसंगत होगा क्योंकि दुष्प्रवृत्तियों के क्रूर प्रहार से इन महापुरुषों के काल में धर्म का कोई विशेष अंग नष्ट होने लगा था क्योंकि धर्म का प्रत्येक अंक दूसरे का पूरक है इसलिए अधर्म की सत्ता मंडराने लगी थी, यही कारण है कि धर्म के उस रूप को पुन: स्थापित करने के लिए इन्होंने स्वाभाविक रूप से शाश्वत् धर्म का ही प्रचार किया। उदाहरणार्थ भगवान महावीर का उपदेश, "अहिंसा परमोधर्म:" उस काल में समाज में वढ़ती जा रही हिंसा की प्रवृत्ति पर अंकुश लगाने के लिए परमावश्यक था, इसी प्रकार भगवान वुद्ध का 'पंचशील' का उपदेश भी समय एवं समाज की आवश्यकता के अनुरूप था, भगवान ईसा मसीह एवं हजरत मुहम्मद साहव के पैगाम उनके समाज एवं उनकी परिस्थितियों के लिए जितने कल्याणकारी तव थे, आज के वैश्वीकरण के युग में सम्पूर्ण विश्व के लिए उतने ही कल्याणकारी आज भी हैं, संसार के प्रत्येक सम्प्रदाय की लगभग यही स्थिति है, किन्तु आगे चलकर इनके कुछ स्वार्थी एवं अवसरवादी, धन एवं वाहुवल से समर्थ अनुयायियों ने एक सम्प्रदाय विशेष के संकुचित दायरे में कैद होकर अन्य सम्प्रदायों एवं जातियों के प्रति घृणा और विद्वेष का विष फैलाना शुरू कर दिया। अपने सम्प्रदाय के प्रचार एवं वृद्धि के नाम पर कहीं अपनी सत्ता को दृढ़ किया तो कहीं अपना कोष। इस प्रकार प्रारम्भ हुआ संकीर्ण पांथिक संघर्ष का।

आज आवश्यकता है धर्म के वास्तविक स्वरूप को पहचानने की। विभिन्न सम्प्रदाय धर्म के किसी एक ही अंग की व्याख्या करके उसको ही सम्पूर्ण धर्म स्वीकार करने लगे हैं। महापुरुषों के उपदेशों की मनमानी व्याख्या करके विभिन्न सम्प्रदायों के स्वार्थी तत्वों ने विश्व को विनाश के कगार पर लाकर खड़ा कर दिया है। अत: आज समाज की यह आवश्यकता

है कि, ऐसी पीढ़ी तैयार की जाए जो प्रत्येक मानव को हृदय से जोड़ने वाले धर्म के वास्तविक रूप के समझे। इस पन्थ निरपेक्ष धर्म के अखण्ड स्वरूप के ज्ञान हेतु धर्माधारित शिक्षा की नितान्त आवश्यकता है। धार्मिक शिक्षा मानव के सर्वांगीण विकास हेतु भी अनिवार्य है। विज्ञान के इस युग में यह बात हस्यास्पद एवं रूढ़िवादी प्रतीत हो सकती है, किन्तु यह बात अटल सत्य है कि धर्मवुद्धि के विना विज्ञान भी सृजन की अपेक्षा विनाश का कारण ही अधिक होगा। जीवन रक्षक औषधियाँ जीवन नष्ट कर सकती हैं, यदि करुणा एवं सेवा की भावना का ह्रास हो जाए। इसी प्रकार महत्वपूर्ण वैज्ञानिक उपलब्धि शक्ति, जहाँ एक ओर मनुष्य जाति के अतीव कल्याण के लिए प्रयुक्त हो सकती है, वहीं धर्म भावना के अभाव में जीव मात्र के महाविनाश का कारण वन सकती है। 'हिरोशिमा एवं नागासाकी' का उदाहरण हमारे समक्ष है, जहाँ धर्मविहीन राजनेताओं ने निर्दोष नागरिकों का जीवन नष्ट ही नहीं किया अपितु आज भी वहाँ बहुसंख्य जनता रक्त कैंसर जैसी अनेक व्याधियों की शिकार है। वहाँ प्रयुक्त अस्त्र आधुनिक महास्त्रों से सैकड़ों गुना छोटे थे, हम केवल कल्पना ही कर सकते हैं कि इनमें से कोई अस्त्र यदि इन सिरफिरे आतंकवादियों के हाथ में पड़ जाए तो महाप्रलय का दृश्य कैसा होगा।

ग्यारह सितम्बर 2001 में घटी वर्ल्ड ट्रेड सेंटर के महाविनाश की घटना धर्महीन साम्प्रदायिक कट्टरता की इस सदी कि घृणिततम क्रूरता की कालिमा है। साम्प्रदायिक कुकृत्य के और भी न जाने कितने उदाहरण इतिहास एवं वर्तमान में मिल जायेंगे। राजनीति को जो धर्म से अलग करने की पुरजोर सिफारिश की जाती है, यदि वास्तव में ऐसा हो जाए अथवा शासक ही व्यक्तिगत रूप से धर्मरहित हो जाएँ तो चारों ओर मनमाना आचरण व्याप्त हो जायेगा, देश में अराजकता फैल जायेगी क्योंकि 'यथा राजा तथा प्रजा' सर्वमान्य सत्य है, सच कहा जाए तो स्वार्थान्ध राजनीति के कारण कमोवेश यह हो भी रहा है, भले ही इसे स्पष्ट रूप से स्वीकार न किया जाए। इन्हीं परिस्थितियों की आशंका से महात्मा गाँधी ने भी धर्म को राजनीति से अलग किये जाने का विरोध किया था।

आज आवश्यकता है, सम्प्रदायों की संकीर्ण परिधि से निकल कर धर्म के अखण्ड स्वरूप का ज्ञान कराने वाली धर्मप्राण शिक्षा की। बालकों को प्रारम्भिक स्तर से ही इस प्रकार की शिक्षा दी जानी चाहिए कि उनमें विश्ववन्धुत्व की उदार भावना सहज विकसित हो सके। छात्र जब विद्यालय में प्रथम प्रवेश करता है तभी अक्षर ज्ञान के साथ-साथ उसे सत्य, अहिंसा, करुणा, मैत्री, त्याग आदि की महत्ता को उद्भासित करने वाली लघु पौराणिक (मिथकीय) कथाओं, इतिहास में घटित सत्य घटनाओं को रोचक कहानियों का स्वरूप देकर सुनाना चाहिए जिससे वालक के निर्मल मानस पटल पर बीज रूप में वे ही संस्कार अंकित हों। यह शिक्षा यहीं तक सीमित न रहे अपितु जैसे-जैसे छात्र योग्यता के सोपान चढ़ता जाए उसी क्रम में धार्मिक शिक्षा की गम्भीरता भी वढ़ती जानी चाहिए। धर्म एवं सम्प्रदाय का क्या सम्वन्ध है? उपासना पद्धति से धर्म कहाँ तक जुड़ा है? धार्मिक संघर्ष की जड़ क्या है? इत्यादि के गहन शिक्षा की विशेष व्यवस्था होनी चाहिए। मनुष्य एवं धर्म का अटूट सम्वन्ध है। अतः जिस किसी भी विषय का मानव कल्याण से सम्वन्ध है, वह धर्म से ही अविच्छिन्न रूप से सम्वद्ध है फिर वह चाहे राजनीति हो, लोक व्यवहार, शिक्षा, न्याय नीति या रणनीति। धर्म के अभाव में राजनीति अराजकता, शिक्षा, कुशिक्षा, लोक व्यवहार, व्यवहारहीनता, न्याय अन्याय तथा रणनीति विनाश का ही नामान्तरण है। अतएव यह आवश्यक है कि पाठ्यक्रम कुछ इस प्रकार निर्मित किया जाए कि वह मानवीय व्यवहार के सभी क्षेत्रों में धर्म के स्वस्थ समायोजन की गम्भीर शिक्षा दे सके। इसी बात को ध्यान में रखकर जन-जागृति एवं सामाजिक सुधार हेतु राजाराम मोहन राय ने ब्रह्म समाज की, स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आर्य समाज की, श्री महादेवगोविन्द रानाडे ने प्रार्थना समाज की स्थापना की। इसी परम्परा में पं० गोपालकृष्ण गोखले ने मनुष्यों की नैतिक स्वतंत्रता तथा वौद्धिक एवं शारीरिक योग्यता के महत्तम विकास हेतु भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के दौर में राष्ट्रीयता की भावना के प्रसार के लिए 12 जून, 1905 में पुणे की 'हनुमान टेकडी' पर सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी (हिन्द सेवक संघ) की स्थापना की।

अरुण किराना स्टोर
मेनरोड बाजपुर
पिनकोड :- 262401 फोन नं० :- 281383

बिन्दल किराना स्टोर
रुद्रपुर रोड दोराहा, बाजपुर
पिनकोड : 262401 फोन नं० :- 283612

अन्नू क्लाथ स्टोर
धर्मशाला के सामने मेनरोड, बाजपुर
मोबाइल :- 9837303913

विक्रेता : ब्रह्मा भोग आटा व चोकर

क्या है समाज सेवा ?

प्रदीप कुमार मिश्र
मन्त्री
ग्राम विकास समिति
बँधवा-मेजारोड़ इलाहाबाद

वैयक्तिक आधार पर, समूह अथवा समुदाय में व्यक्तियों की सहायता करने की एक प्रक्रिया है, जिसमें व्यक्ति अपनी सहायता स्वयं कर सके। इसके माध्यम से सेवार्थी वर्तमान सामाजिक परिस्थियों में उत्पन्न अपनी कतिपय समस्याओं को स्वयं सुलझाने में सक्षम होता है। यह अन्य सभी व्यवसायों से सर्वथा भिन्न होता है, क्योंकि समाज सेवा, उन सभी सामाजिक, आर्थिक एव मनोवैज्ञानिक कारकों का निरुपण कर उसके परिप्रेक्ष्य में क्रियान्वित होती है, जो व्यक्ति एवं उसके पर्यावरण की सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक शक्तियों के साथ व्यक्तिगत जैविकीय, भावात्मक तथा मनोवैज्ञानिक तत्वों की गतिशील अन्त: क्रिया को दृष्टिगत कर ही सेवार्थी को सेवा प्रदान करता है। वह सेवार्थी के जीवन के प्रत्येक पहलू तथा उसके पर्यावरण में क्रियाशील प्रत्येक सामाजिक स्थिति से अवगत रहता है, वह इसकी उपेक्षा नहीं कर सकता।

समाज सेवा का उद्देश्य व्यक्तियों, समूहों और समुदायों का अधिकतम हित साधन होता है। अत: सामाजिक कार्यकर्ता सेवार्थी को उसकी समस्याओं का समाधान करने में, सक्षम बनाने के साथ ही, उसके पर्यावरण में अपेक्षित सुधर लाने का प्रयास करता है। वह अपने लक्ष्य की पूर्ति हेतु सेवार्थी की क्षमता तथा पर्यावरण की रचनात्मक शक्तियों का प्रयोग करता है।

समाज सेवा का वर्तमान स्वरूप निम्नलिखित जनतान्त्रिक मूल्यों के आधार पर निर्मित हुआ है—

1. **व्यक्ति की अन्तर्निहित क्षमता समग्रता एवं गरिमा में विश्वास**—समाज सेवा, सेवार्थी को परिवर्तन और प्रगति की क्षमता में पूर्ण विश्वास करती है।
2. **स्वनिर्णय का अधिकार**—सामाजिक कार्यकर्ता सेवार्थी से स्पष्ट अन्तर्दृष्टि प्राप्त करने में सहायता करता है, जिससे वह वास्तविकता को स्वीकार कर लक्ष्य प्राप्ति की दिशा में उन्मुख हो।
3. **अवसर की समानता में विश्वास**—समाज सेवा सबको समान रूप में उपलब्ध रहती है और शभी प्रकार के पक्षपातों और पूर्वाग्रहों से मुक्त, कार्यकर्ता समूहों अथवा समुदाय के सभी सदस्यों को, उनकी क्षमता के अनुरूप सहायता प्रदान करता है।
4. व्यक्तिगत आधारों एवं सामाजिक उत्तरदायित्वों में अन्तस्संबद्धता व्यक्ति के स्वनिर्णय एवं समान अवसर प्राप्ति के अधिकार, उसके परिवार, समूह एवं समाज के प्रति उसके उत्तरदायित्व से सम्वद्ध होते हैं।

समाज सेवा इस प्रयोजन के निमित्त स्थापित विभिन्न संस्थाओं के माध्यम से वहाँ नियुक्त प्रशिक्षित सामाजिक कार्यकर्त्ताओं द्वारा प्रदान की जाती है। कार्यकर्त्ताओं का ज्ञान, अनुभव, व्यक्तिगत कुशलता एवं सेवा की उसकी मनोवृत्ति सेवा के स्तर की निर्धारक होती है। कार्यकर्त्ता में व्यक्तित्व की सम्पूर्ण प्रक्रिया एवं मानव व्यवहार तथा समूह व्यवहार की गतिशीलता तथा उनके निर्धारक तत्वों का सम्यक ज्ञान समाज सेवा की प्रथम अनिवार्यता है। इस प्रकार ज्ञान पर आधारित समाज सेवा व्यक्ति की समूहों अथवा समुदाय की सहज योग्यताओं तथा सर्जनात्मक शक्तियों को उन्मुक्त एवं विकसित कर स्वनिर्धारित लक्ष्य की दिशा में क्रियाशील वनाती है, जिससे वे अपनी संवेगात्मक, मनोवैज्ञानिक, आर्थिक एवं सामाजिक समस्याओं का समाधान खोजने में स्वत: प्रयुक्त होते हैं। सेवार्थी अपनी दुर्वलताओं, हीनता, असहायता एवं असंपृक्तता की भाव ग्रन्थियों, मानसिक तनाव, द्वंद तथा विद्वेष जनित मनोवृत्तियों का त्याग कर, कार्यकर्त्ता के साथ किस सीमा तक सहयोग करता है, यह कार्यकर्ता और सेवार्थी के मध्य स्थापित सम्वन्ध पर निर्भर करता है। समाज सेवा में सम्वन्ध ही सम्पूर्ण सेवा का आधार है और यह व्यवसायिक सम्वन्ध सदैव साभिप्राय होता है।

समाज सेवा में तीन प्रकार होते हैं—

1. वैयक्तिक समाज सेवा
2. सामूहिक समाज सेवा
3. सामुदायिक संगठन

इस प्रकार समाज सेवा की तीनों विधियों का लक्ष्य व्यक्तियों की आवश्यकताओं की पूर्ति है। उनकी सहायता इस प्रकार की जाती है कि वे अपनी आवश्यकताओं, व्यक्तिगत क्षमता तथा प्राप्य साधनों से भली-भाँति अवगत होकर प्रगति कर सकें, तथा स्वस्थ समाज निर्माण में सहायक हों।

महात्मा गाँधी ने कहा है—

"जव तक हम भारतीयों को सादा और तपस्वी जीवन सुखमय नहीं लगेगा और हम त्याग और कष्ट सहन करना नहीं सीखेंगे, तव तक हम किसी सार्वजनिक प्रयास में कारगर न हो सकेंगे और हम हमेशा अपने त्याग के वदले कुछ पाने की भावना से प्रेरित होते रहेंगे।"

दिव्य ज्योति

दीन अनाथों की सकरुण ध्वनि जगदीश्वर जब सुन पाते—
अवतरित महामानव करते साहाय्य हेतु वे बढ़ जाते।
'सिरसा' 'प्रयाग' की पुण्य भूमि पावन तट गंगा का सुमधुर—
प्रज्वलित हुई उत्कृष्ट ज्योति आलोकित करती रही सुघर।
नैराश्य निशा अंधत्व चीर, प्राची समुदित स्वर्णिम दिनकर—
ज्ञान और तिमिराच्छादित जग में उद्‌भूत 'रमाशंकर'।
शिक्षोपरान्त सद्‌बुद्धि प्राप्त मानवता के वे वन सपूत—
विधिवेत्ता हो, व्यथित हुए, संकट समाज का देख प्रभूत।
सुखमय जीवन, समृद्धि, त्याग आत्मीय स्वजन सवको माना-
वसुधैव कुटुम्व गरीवीओं की उस अश्रुधार को पहचाना।
कोमल सुहृदय तू द्रवीभूत इस विन्ध्य क्षेत्र के गाँधी बन—
निशिवासर पैदल दौड़ पड़े जीवन भर अविरल आँधी बन।
उन फटे चीथड़ों में लिपटे थे विलख रहे झोपड़ियों में—
कानों में सुनकर आर्तनाद वन पर्वत दुर्गम गलियों में।
आराध्य देव निज मान उन्हें प्रभु का साक्षात किया दर्शन—
दारिद्र अशिक्षा देख, दुखी तन मन धन सब निज कर अर्पण।
उद्धार हेतु झोली लेकर जन जन में तू कर शंखनाद—
विड़ला जैसे लक्ष्मीपति भी धन धान्य दिये सुनकर निनाद।
जंगल में मंगल किया सदा झुक गये सभी व्यक्तित्व देख—
ओजस्वी वाणी का प्रभाव अप्रतिम रहा जो अमिट रेख।
डॉ० कुजरू सानिध्य मिला सोने में आई नव सुगन्ध—
अनुयायी अनुदिन तन्मय हो आशान्वित सफल हुए प्रवन्ध।
मिर्जापुर सलखन म्योरपुर सारा विकास तेजस्वी का—
दे रहे दुहाई कण कण भी मिश्रा जी शुभ्र मनस्वी का।
कोल, भील, वुक्सा, थारू, भूटिया आदिवासी जन के—
विद्यालय, छात्रावास सुखद औ अस्पताल उनके मनके।
हो सदस्य गाँधी स्मारक निधि, सेवा समिति किया उपकार—
स्काउट गाइड संरक्षक बन, जन-जन का पावन उद्धार।
नोआखाली की घटना में अहम् भूमिका थी तेरी—
हुआ असम भूकम्प प्रपीड़ित विपति घटायें रहीं घिरी।
वन सोसाइटी अग्रदूत तू प्रकृति प्रभंजन कूद पड़े—
उन अनाथ असहाय जनों की सेवा में तू रहे अड़े।
हरिद्वार से वाजपुर, गोंडा तक का सारा उत्थान—
एन० डी० शुभ्र तिवारी जी सौजन्य मिश्र जी कर आह्वान।
नश्वर तन को त्याग आज तू यश: शरीर विराज रहे—
मार्गप्रदर्शक कार्य तुम्हारे धरती और आकाश रहे।
इस शताब्दि पावन उत्सव में जन जन का शत नमन् तुम्हें—
संस्था हो यह ऊर्ध्वगामिनी दो पावन आशीष हमें।
सोसाइटी योग्य संस्थापक तेजस्वी 'गोपाल कृष्ण'—
सपरिवार सौ वर्ष पूर्ण उत्सवम् मनाते 'प्रेमकृष्ण'।
कीर्ति कौमुदी आलोकित हो रहे उत्तरोत्तर विकसित—
'शिवाधार' की अभिलाषा जनमानस होवे नित हर्षित।

रचयिता
शिवाधार तिवारी, एम०ए०, शास्त्री
अ०प्रा० शिक्षक
रा०इ०का० कोंहड़ार, इलाहावाद

जीवन के साथ भी – जीवन के बाद भी
शुभकामनाओं सहित
अजय शर्मा
बीमा एवं बचत सलाहकार भारतीय जीवन बीमा निगम
कार्यालय : स्टारप्लाजा—(एस-एस-99) बेगमपुलरोड, मेरठशहर आवास : 300, मोरीगड़ा, मेरठ शहर
दूरभाष : 0121 - 2523395 मोबाइल : 9897023395 एवं 9719013395
"हम जानें भारत को बेहतर" "आपकी सुरक्षा हमारी पूर्ण जिम्मेदारी"
हमारी आकर्षक योजनायें : जीवन आनन्द, जीवनश्री, जीवन सुरभि, जीवनमित्र, कोमल जीवन, अनमोल जीवन, जीवनसाथी, जीवनरेखा, जीवना आशा, जीवन किशोर, जीवनछायोएवं जीवनप्रमुख आदि।

श्री सिगनालूर रामकृष्ण वेंकटरमन

अमरेश चन्द्र तिवारी, हिन्द सेवक संघ

17 मार्च, 1887 को तमिलनाडु में जन्मे श्री सिगनालूर रामकृष्ण वेंकटरमन ने स्कूली शिक्षा ग्रहण करने के उपरान्त 1924 में कानून की डिग्री प्राप्त की और कोयम्बटूर में वकालत प्रारम्भ कर दी। कुछ समय के उपरान्त ही वकालत छोड़, वे समाज सेवा, लेखनकार्य, राजनीतिक, सांस्कृतिक और शैक्षिक गतिविधियों में अपनी सक्रियता से, देश एवं समाज हित में रचनात्मक कार्य करते हुए प्रसिद्धि और लोकप्रियता के सोपान दर सोपान चढ़ते हुए, सन् 1929 में 'सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी' के सम्माननीय सदस्य चुन लिये गये।

'भारत स्काउट' के 'मद्रास कमिश्नर' के रूप में उन्होंने सराहनीय योगदान देते हुए उल्लेखनीय विस्तार कार्य किया। 'डिप्रेस्ड क्लासेज मिशन' मगलूर के सेक्रेटरी, 'अखिल भारतीय हरिजन सेवक संघ' के उपमंत्री, 'इंडियन कौंसिल-आफ वर्ल्ड अफेयर' (मद्रास शाखा) के आनरेरी सचिव, उपाध्यक्ष—इण्डियन कान्फ्रेंस आफ सोशल वर्क' और 'गिल्ड आफ सर्विस' मद्रास के भी उपाध्यक्ष पद का सक्रियता और पूर्ण जिम्मेदारी के साथ निर्वहन किया।

श्री एस० आर० वेंकटरमन ने तमिल तथा अंग्रेजी भाषा के कई ग्रंथों की रचनायें भी कीं। `Grand Papa Gandhi's Story', `Dr. M.G. Ranade', `Dr. Annie Besant', `Tribes of India', `What is Inians Scouting' इत्यादि पुस्तकों की रचना के साथ ही साथ उन्होंने `Jawahar Lal Nehru's Letters to his Daughter' का 'तमिल' अनुवाद, जो मद्रास युनिवर्सिटी के पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया गया, की भी रचना की।

जून 1978 में 'सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी' के सदस्य चुने गये। अत्यधिक सक्रियता के साथ भारत की इस 'महान धरोहर' की सेवा करते हुए श्री वेंकटरमन ने 30 दिसम्बर 1985 को अपना शरीर त्याग दिया। 'सोसाइटी' के अध्यक्ष और भारत के 'सेवक' रूप में की गयी, उनकी अविस्मरणीय सेवायें, उनके कृतित्व और 'समाजसेवा' के नये आयामों ने, उन्हें अमरत्व प्रदान कर दिया, सोसाइटी में उनका कार्यकाल चिर स्मरणीय रहेगा।

विभिन्न संगठनों ने उनके निधन पर शोक सभायें आयोजित कर उन्हें भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की। उनकी बहु-आयामी सेवाओं का उल्लेख करते हुए यह प्रस्ताव पारित किया गया—``With the exit of Mr. S.R. Venkatraman, President of the Servants of India Society the last link with Gokhale-Shastri tradition in public life and social work in Madras is snapped". मद्रास के 'हिन्दू' दैनिक समाचार पत्र ने उनके निधन पर यह टिप्पणी प्रकाशित की—``Informed patriotism and unostentatious service with a sense of duty, were the hall mark of the life and career of Mr. Venkatraman, who had the rare opportunity of being an understudy of the Rt. Hon. V.S. Srinivas Shastri and later of Pandit H.N. Kunjru".

भारत के उपराष्ट्रपति श्री आर० वेंकटरमन ने श्रद्धांजलि सभा में अपने उद्गार व्यक्त करते हुए कहा—``It is with great sorrow that I hve learnt of the sad demise of Shri S.R. Venkat Raman. I had the good fortune of knowing him for five decades. His self abnegation, sincerity and total dedication in the best traditions of the Servants of India Society will for ever be model of selfless service".

Gokhale : Blaze that Pioneered the Indian Freedom Movement

GANGADHAR SAHOO
Member,
Servants of India Society
Choudwar, Cuttack, Orrisa

"Gokhale seemed to me all, I wanted, a political worker, pure as crystal, gentle as a lamb, brave as a lion and chivalrous to a fault; "Gandhiji said of Gokhale, these memorable words, whom he chosen as his political guru. Lokamanya Tilak wrote, on Gokhale, in "Kesari" on 23rd Febraury, 1915 "better born out in a short lived blaze than be smouldering for ever so long". These words are singularly appropriate to Gokhale's life and career. Really that was a brillant, short-lived blaze, which was lighted on the Wednesday evening of 9th May, 1866 in a poor family of katluk village in Ratnagiri district of Maharashtra, the state which has given birth to many glories like Lokmanya Tilak, Chhatrapati Shivaji, Justice M.G. Ranade, Agarkar, Chiplunkar, NM Joshi etc. Gokhale's father Krishna Rao and mother Satyabhama had made the childhood of their son, strong both physically and mentally, which helped him, in glorifying his name on the earth.

Gopalkrishna Gokhale received his Primary education at Kaga, did Matriculation in Rajaram High School in 1881. He had his first B.A. from Deccan College and Final B.A. from Elphinston College Bombay in 1884. He however dazzled his teachers and fellow students by his tentative memory, which many of them legitimately envied. He had a great ambition of becoming a lawyer, which led him to join the law course in Deccan College. He got offer for teachership in New English School, Poona in 1885. The main aim of the school was to impart rational, patriotic and dynamic knowledge to the youth, conducive to India's regeneration, which affected Gokhale's thought much and he, readily accepted to join it. In the year 1884 the Deccan Education Society was formed. The establishment of Deccan Education Society opened a new chapter in Gokhale's life. He was admitted as the life member of Deccan Education Society in June, 1886. The members of Deccan Education Society established Forgussion College in the year 1885 and as a devoted founder life member he rendered his services by teaching Mathematics, English, Political Economics in the College. For this varietibility he was often addressed as professor to order and considered as a teacher of exceptional merit and real caliber.

At the early age of 20, Gokhale came in close contact with that master mind of the late 19th Century, Mahadeo Govind Ranade. He brought Gokhale in to **Sarvojanik Sava** and in 1888 Gokhale became the honourary Secretary of the **Sava**. With able guidance of Ranade he established the **Deccan Sava** at Poona in keeping with their primary maxims-political social and economic. Gokhale served as the secretary of **Deccan Sava** for five years. Justice Ranade made Gokhale, as we know him. He joined the Indian National Congress in the year 1889. His speeches, in the Congress Councils were so nice plain and stern that those were unanimously hailed and many political prophets were calling him as future Prime Minister. He was, also, chosen as the president of 1905 Banaras Cognress Session. That was, indeed, the highest that a non-official Indian could attain.

Gokhale was elected to the senate of the University of Bombay in 1895 and continued as a member till his death. In 1907, in his budget speech, he pleaded for free primary education and constitutional reforms. His

visit to England in 1908, was mainly in connection with the question of the introduction of constitutional reforms in India.

He had, in the course of his public life, repeatedly expressed the opinion that the people of India had reached a stage in the political progress of the country, which required more methodological and continuous work for its further advance. Taking into the consideration of the work for the public in order to strengthen the people both literally and morally he started The Servants of India Society on 12th June, 1905. The preamble of the Society's constitution clearly stated that through this society a sufficient number of Indians must come forward to devote themselves to the cause in which religious work is undertaken. Public work must be spiritualized. The object of the society was to train national missionaries for the service of India. The main duties of the members were to percept intense love for country among the people and promote goodwill and co-operation between different communities. Leading personalities of the society were Srinivas Sastri, Thakkar Bapa, N.M. Joshi, G.K. Deodhar, H.N. Kunzru, Kodand Rao, S.G. Vaze, K.G. Limaye and Bakhale, of whom, our country is proud.

In the year 1896, Gandhiji met Gokhale. On the first meeting, Gandhiji became his admirer and accepted him as his "Political Guru". His intellectual political thgouht and ideal political action drew Gandhiji to be his admirer. He became the shining exemplar of the ethical and moral traditions of his master. Recalling his meeting with Gokhale Gandhiji wrote in the "Young India" on July 13, 1921. he was and remains for me the most perfect man on the political field. Every word of Gokhale glowed with tender feeling, truthfulness and patriotism. I believe he had the capacity cheerfully, to mount the gallows for the country's sake if necessary". Gandhiji said of him that Gokhale taught me that the dream of every Indian who claims to love his country should be not to glorify the country in language but to spritualize its political life and institutions. He inspired my life and still inspiring in that I wish to purify myself and spiritualize myself.

Gokhale joined the congress movement right from the beginning. He attended almost all the congress sessions held in Bombay in the year 1904. He was among the pioneers of the Independence Movement. As early as 1907, he declared. I want our people to be in their own country what other people are in their's" "If more and more people modeled themselves on Gokhale, the future of the country would indeed, be very bright; Said Shri Jaya Chamaraja Wadiyar Maharaja of Mysore, highlighting Gokhale on a special occasion.

Gokhale loved his country so profoundly and passionately that once he had arrived after deep thought, at any conclusion he could not be turned away from it by consideration of popularity. His main aims were India should be governed in the interest of Indians, themselves and that, in course of time, a form of Govt. should be setup in this country, similarly to what exists in the self governing colonies of British Empire. He wanted, India, to take her proper place among the great nations of world, politically, industrially, in religion, in literature, in science and in arts. To achieve freedom of India, Gokhale strongly felt that the method to be employed should be that of constitutional agitation. His idea of constitutional agitation was much broader than that of other Indian leaders.

Thus working throughout the life under various hardships and sacrificing every minutes for the common mass, the great servant of India, having remained the members of the society, of the vow of ceaseless and selfless service, passed away on 19th of February, 1915. He had not a touch of selfish interest in him. He saw everywhere his country and his people whom he served. Nothing could move him away from his sense of deep devotion to these sacred objects. He gave a lot to India in an age when public life was offered no reward. He kept the torch burning, that is for us to add to its splendour. We, his followers must try to outstrip, even him, the great master.

उत्तर प्रदेश एवं उत्तरांचल की जनजातियाँ एवं उनका विकास

(संक्षिप्त परिचय)

कु०ममता
शोध छात्रा (भूगोल)
इलाहाबाद विश्वविद्यालय

उत्तर प्रदेश :

उत्तर प्रदेश में कुल 12 जनजातियाँ भारत सरकार द्वारा अनुसूचित घोषित की गयी हैं, जिसमें से 2 जनजातियाँ क्रमश: थारू एवं बुक्सा उत्तर प्रदेश के तराई क्षेत्र के जनपद लखीमपुर-खीरी, बलरामपुर, बहराइच, श्रावस्ती एवं महराजगंज तथा विजनौर जनपदों में बिखरी हुई हैं। वर्ष 1991 की जनगणना के अनुसार इनकी (बुक्सा एवं थारू की) कुल जनसंख्या 78,030 है। ये जनजातियाँ वर्ष 1967 में अनुसूचित जनजाति घोषित की गयीं, जिसके उपरान्त राज्य सरकार एवं भारत सरकार द्वारा इनके सर्वांगीण विकास हेतु विभिन्न कार्यक्रम विगत वर्षों में संचालित किये गये हैं। इन कार्यक्रमों से इनके आर्थिक एवं सामाजिक स्तर में सुधार हुआ है। समाज की मुख्य धारा में लाने हेतु अभी भी इनके लिए पूर्व से संचालित किये जा रहे कार्यक्रमों में इनकी वर्तमान आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति को दृष्टिगत रखते हुए बदलाव की आवश्यकता है। बदले हुए परिप्रेक्ष्य में इनके लिए संचालित एकीकृत जनजाति विकास परियोजना, थारू विकास परियोजना तथा बिखरी आवाद वाली जनजाति परियोजनाओं को नये सिरे से लागू करने की आवश्यकता है। इसके साथ-साथ जनजातियों में जागरूकता लाने हेतु सरकारी तंत्र के साथ स्वैच्छिक संगठनों को भी इनके विकास में सहभागी बनाने हेतु विचार की आवश्यकता है। जनजातियों का विभिन्न रूपों में वर्तमान में जो शोषण आदि किया जाता है, इस पर नये सिरे से विचार करने की आवश्यकता है।

2. ज्ञातव्य है कि थारू, बुक्सा के अतिरिक्त दस अन्य जातियाँ जो कि प्रदेश के मैदानी एवं दक्षिण पूर्व के पठारी क्षेत्रों में निवास करती हैं, को भारत सरकार द्वारा वर्ष 2002 में अनुसूचित जनजाति घोषित किया गया। ये जनजातियाँ इसके पूर्व उत्तर प्रदेश में अनुसूचित जाति के रूप में मान्यता प्राप्त थीं। वर्ष 1991 की जनगणना के अनुसार इनकी कुल जनसंख्या 302785 है। जनपदवार इन जनजातियों की जनसंख्या का विवरण निम्नवत है—

क्रम सं०	जनजाति का नाम	जनपद का नाम	जनसंख्या
1.	गोंड, धूरिया, नायक, ओझा, पठारी, राजगोंड	1. महराजगंज	1,787
		2. सिद्धार्थनगर	920
		3. बस्ती	2,668
		4. गोरखपुर	7,191
		5. देवरिया	7,308
		6. मऊ	3,275
		7. आजमगढ़	4,079
		8. जौनपुर	807
		9. बलिया	4,133
		10. गाजीपुर	3,129
		11. वाराणसी (चन्दौली)	12,615
		12. मीरजापुर	6,373
		13. सोनभद्र	93,744
2.	खरवार, खैरवार	1. देवरिया	2,620
		2. बलिया	2,060
		3. गाजीपुर	3,540
		4. वाराणसी (चंदौली)	7,387
		5. सोनभद्र	46,085
3.	सहरिया	1. ललितपुर	18,267
4.	परहिया	1. सोनभद्र	460
5.	पंखा, पनिका	1. मीरजापुर	589
		2. सोनभद्र	14,470
6.	वैगा	1. सोनभद्र	9,553
7.	अगेरिया	1. सोनभद्र	13,800
8.	पठारी	1. सोनभद्र	577
9.	चेरो	1. वाराणसी (चन्दौली)	1,956
		2. सोनभद्र	22,450
10.	भूइया, भूइयाँ	1. सोनभद्र	7,067
तराई क्षेत्र			
1.	थारू	1. लखीमपुर खीरी	28,856

	2.	बलरामपुर	15,227
	3.	बहराइच	6,153
	4.	श्रावस्ती	3,334
	5.	महराजगंज	2,691
	6.	अन्य जिलों में बिखरे हुए	21,769
2. बुक्सा	1.	बिजनौर	1,875
		कुल योग	3,80,815

उत्तर प्रदेश के मैदानी क्षेत्रों में निवास करने वाली उपरोक्त अनुसूचित जातियों में से अधिकांश जनजातियाँ सोनभद्र, ललितपुर, मीरजापुर एवं चन्दौली जनपदों में बसी हुई हैं। इनकी आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति अत्यन्त ही दयनीय है। अनुसचित जाति की श्रेणी में रहने के कारण जनजातियों के समान इन्हें संगठित रूप से विगत वर्षों में वांछित सहायता उपलब्ध नहीं करायी जा सकी, जिससे ये आज भी आर्थिक, सामाजिक एवं शैक्षिक दृष्टि से अत्यन्त ही पिछड़े हुए हैं। पठारी क्षेत्र में निवास करने के कारण इनके सीमित जोत के लिए सिंचाई की कोई समुचित व्यवस्था नहीं है। इस क्षेत्र में पीने के लिए पानी भी उपलब्ध नहीं हो पाता है। रोजगार के साधन अत्यन्त ही सीमित हैं। पत्थर की कटार एवं वन सम्पदा में इनको सीमित रोजगार मिलता है, जहाँ इनके श्रम का शोषण भी अवैध रूप से आज भी चल रहा है। गरीबी के कारण इनके बच्चे स्कूलों में भी नहीं जा पाते हैं, जो लड़के स्कूल जाते हैं गरीबी के कारण बीच में ही छोड़ देते हैं। अभी भी ये लोग लड़कियों को गृहकार्य में ही रखते हैं तथा स्कूलों में नहीं भेजते हैं। स्पेशल कम्पोनेन्ट प्लान के अन्तर्गत विगत वर्षों में इनके लिए योजनायें संचालित की गयी हैं, पर इसका प्रभाव इनके आर्थिक एवं सामाजिक जीवन पर नहीं के बराबर रहा है। आज भी इनकी अधिकांश जनसंख्या टूटे-फूटे, घास-फूस के झोपड़ों एवं खपरैल से बने चन्द छोटे से कमरों में निवास कर रही हैं। उक्त के अतिरिक्त गोंड एवं खरवार आदि जातियाँ जो कि प्रदेश के मैदानी क्षेत्र के जनपद महाराजगंज, सिद्धार्थनगर, बस्ती, गोरखपुर, देवरिया, मऊ, आजमगढ़, जौनपुर, बलिया, गाजीपुर, वाराणसी जनपदों में बिखरी हुई हैं, इनकी भी दशा अत्यन्त दयनीय है। इनके लिए भी इनकी स्थानीय आवश्यकता के अनुरूप योजनाएँ संचालित करने की आवश्यकता है।

बदले हुए परिप्रेक्ष्य में अनुसूचित जनजाति के रूप में अभिज्ञापित होने के उपरांत इनके लिए 'ट्राइवल सब प्लान' के अन्तर्गत योजनाएँ किस रूप में संचालित की जाय, इस पर सम्यक रूप से विचार करने की आवश्यकता है। इसके लिए इस क्षेत्र में कार्य करने वाले समर्पित सामाजिक कार्यकर्ताओं, स्वैच्छिक संगठनों, शिक्षाविदों, शोधकर्ताओं एवं जनजातियों के प्रतिनिधियों से विचार-विमर्श कर स्थानीय आवश्यकता के अनुरूप परिवारोन्मुखी एवं अवस्थापना विकास सम्वन्धी योजनायें तैयार कर यथा शीघ्र लागू की जायँ जिससे इन्हें समाज की मुख्य धारा में लाया जा सके।

विशेष—उत्तर प्रदेश के दक्षिणी-पूर्वी पठारी क्षेत्र में "कोल" जनजाति जो अनुसूचित जाति की सूची में शामिल है, सघन रूप से निवास करती है। इनकी आबादी विशेष तौर से सोनभद्र, मिर्जापुर, चन्दौली, इलाहाबाद तथा बांदा जनपदों में बिखरी हुई है। कोल जनजाति की जनसंख्या लगभग दो लाख के आस-पास है। आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टि से ये अत्यन्त ही पिछड़े हुए हैं। इस क्षेत्र की 10 अन्य जनजातियाँ जो अनुसूचित जाति की सूची में थीं, अनुसूचित जनजाति घोषित हो गयीं पर दुर्भाग्य से इनको छोड़ दिया गया है। कोल जनजाति की दयनीय स्थिति को देखते हुए यथाशीघ्र इन्हें अनुसूचित जनजाति घोषित करते हुए उनके सर्वांगीण विकास के कार्यक्रमों को क्रियान्वित किया जाना चाहिए। जब तक यह प्रक्रिया पूर्ण नहीं होती है कोल जनजाति के विकास हेतु जनजातियों के समान विशेष कार्यक्रम चलाये जाने की आवश्यकता है। इस पर राज्य एवं केन्द्र सरकार तथा स्वैच्छिक संगठनों को कार्यवाही सुनिश्चित करनी चाहिए।

उत्तरांचल

उत्तरांचल में थारू, बुक्सा, भोटिया, जौनसारी, राजी जनजातियाँ निवास करती हैं। वर्ष 1991 के जनगणना के अनुसार इनकी जनसंख्या निम्नवत है—

क्र०सं०	जनजातियाँ	कुल जनसंख्या
1.	थारू	1,18,518
2.	बुक्सा	42,027
3.	भोटिया	23,410
4.	जौनसारी	64,948
5.	राजी	494
	योग	2,49,397

राजी एवं बुक्सा जनजातियाँ भारत सरकार द्वारा आदिम जनजाति के रूप में अभिज्ञापित की गयी हैं। इन जनजातियों के विकास हेतु भारत सरकार द्वारा विगत वर्षों में शत प्रतिशत आधार पर विशेष केन्द्रीय सहायता उपलब्ध करायी गयी है। इस योजनान्तर्गत पिथौरागढ़ के राजी जनजाति एवं देहरादून, हरिद्वार में बुक्सा जनजातियों को लाभान्वित किया जा रहा है। राजी जनजातियाँ पिथौरागढ़ एवं चम्पावत जनपदों में छोटे-छोटे पुरवों (हेमलेट्स) में बिखरी हुई हैं। वर्तमान में इनकी जनसंख्या लगभग 600 है। इनकी आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति आज भी दयनीय है। बुक्सा जनजाति उधमसिंह नगर, देहरादून एवं हरिद्वार जनपद के तराई क्षेत्र में निवास करती है। ये लोग आर्थिक एवं सामाजिक दृष्टि से पिछड़े हुए हैं। ऊधम सिंह नगर के बाजपुर, गदरपुर, काशीपुर एवं रामनगर विकास खण्डों में सघन रूप से निवास करने वाली बुक्सा जनजाति के लिए राज्य सरकार के माध्यम से एकीकृत जनजाति विकास परियोजनायें संचालित की गयीं जो वर्तमान में समाप्त कर दी गयी हैं। इस योजना के अन्तर्गत

विगत वर्षों में जनजातियों के उत्थान हेतु परिवारोन्मुखी कार्यक्रमों के अतिरिक्त अवस्थापना विकास सम्बन्धी कार्यक्रम भी संचालित किये गये। इसी प्रकार पिथौरागढ़ की भोटिया जनजाति तथा देहरादून जनपद की जौनसारी जनजाति एवं चमोली जनपदों हेतु एकीकृत जनजाति विकास परियोजनायें संचालित की गयी, जो वर्तमान में समाप्त कर दी गयी है। वर्तमान में अन्य योजनाओं के द्वारा गरीबी एवं पिछड़ेपन के आधार पर इन्हें लाभान्वित किया जा रहा है।

विगत वर्षों में संचालित की गयी एकीकृत जनजाति विकास परियोजनाओं एवं अन्य विकास विभागों द्वारा संचालित कार्यक्रमों/योजनाओं से इन जनजातियों को लाभान्वित किया गया है। जनजातियों के विकास में सरकारी एवं गैर सरकारी स्वैच्छिक संगठनों द्वारा जो कार्य किया गया है, उसको नए परिप्रेक्ष्य में अर्थात् प्रान्त के गठन के उपरान्त देखा जाना आवश्यक है। आज भी राजी, बुक्सा जनजातियों के साथ ही साथ जौनसारी जनजाति के कोल्टा एवं बाजगी एवं सुदूर सीमान्त क्षेत्र में भोटिया जनजाति के साथ निवास करने वाले कर्मकार (लोहार, बढ़ई, दर्जी, डफाली आदि) जिन्हें 'भोटिया डोम' कहा जाता है, स्थिति अत्यन्त दयनीय बनी हुई है। बुक्सा, राजी एवं जौनसारी तथा थारू जनजातियों में नारी समाज की स्थिति अपेक्षाकृत अन्य वर्गों के दयनीय है। इनके लिए विशेष कार्यक्रम संचालित करने की आवश्यकता है। उत्तरांचल में जनजातियों के योजनाओं के सफल संचालन तथा वर्तमान परिप्रेक्ष्य में पूर्व से चल रही योजनाओं/कार्यक्रमों की प्रासंगिकता पर विचार किया जाना आवश्यक प्रतीत होता है।

अनिल कुमार सिंघल आटा-चक्की
पुरानी बाजार, पालियाकला (लखीरपुर खीरी)
विक्रेता साफ सुथरा गेहूँ, मक्का, चना वेसन के आटा एवं
चावल (विभिन्न प्रकार) के थोक एवं फुटकर विक्रेता
शुभकामना सन्देश सहित

अग्रवाल बीज भण्डार
मेलारोड, पालियाकला (लखीमपुर खीरी)
विक्रेता उच्चा कोटी के बीज, सब्जी एवं चारा सीड्स
शुभकामना सन्देश सहित
विनोद कुमार अग्रवाल

The Man with a Vision and Mission-Gopal Krishna Gokhale

Damodar Sahoo
Senior Member
Servants of India Society

According to the "Grand Old Man of India" – Dadabhai Naoroji : "Gokhale was one of the noblest and the best workers and his patriotism was of the highest and the noblest type." Once a bitter critic of Gokhale, Bal Gangadhar Tilak commented : "He was a diamond of India, the jewel of Maharashtra and the prince of workers."

Gokhale was born on 9th May in 1866 at Katluk in Chiplun Taluk, Ratnagiri District of Maharashtra in a poverty stricken Brahmin family who lost his father and mother in his childhood, can very well be compared with Shri Iswar Chandra Bidyasagar of Bengal and Sri Gopalbandhu Dash of Orissa for whom poverty was no bar to give expression to their hidden talents. I need not elaborate how these dignitaries had to use the street lamps as a substitute for their mid-night oil which they could not provide for their studies. A quality gifted by God never gets lost.

After completing his higher study Mr. Gokhale started his carrier as a teacher first in a school and then in a prestigious college like the Fergusson College where he found for himself a true teacher in Justice Ranade. He joined in Deccan Education Society in 1886 and put the foundation stone of his carrier in public life and associated with many associations like Sarvajanik Seva Trust and Servants of India Society. Through these and other Societies Mr. Gokhale strived to create true Karma Yogi and selfless social workers having love for the people. He was not emotional but devotional, devotion to Country's upliftment, devotion to the welfare of his Countrymen. He always used constitutional means to achieve his aims in defence of people of India. When the British ruler brought the Toll Tax, Gokhale was the first man to raise his voice against it, because it effected the poor people adversely. As a result due to his untiring effort the Toll Tax was reduced to a nominal. He was elected General Secretary of the Indian National Congress in 1897. Earlier Gokhale had served as the Joint Secretary of National Congress in 1895.

He also took part in the deliberation of the Congress of Bombay in 1889, in Calcutta 1890 and in Allahabad in 1892. He was leading the moderate section of the Congress. He was cool and many of his ideologies were reflected in the freedom movement f Mahatma Gandhi. According to him political work was not to be entrusted to the arm-chair Politicians. It has to be carried on effectively by dedicated and selfless men who were to be trained and with this view he founded the Servants of India Society in 1905. His policy of peaceful means, sincerity, dedication to the nation, patriotism and commitment to the cause of the people and above all his concept of Ahimsa really inspired Gandhiji. He was fearless in expressing when he thought to be proper for the Indian people. His performance as a member of the Bombay Legislative Council and then Imperial Legislative Council should be a guide on a present day ones. He was responsible for many legislations involving social and economic reform. Mahatma Gandhi, our father of the nation regarded him as his political Guru and acknowledged as among the earliest pioneers of the Independence Movement. In a tribute to Gokhale after his demise Gandhiji said "I have declared myself his dis-

ciple in the political field and I have him as my Raj-Guru and this I claim on behalf of the Indian people. It was in 1896 that I made this declaration and I do not regret having made the choice."

In his presidential address to the Congress held in Banaras in 1905, Mr. Gokhale observed : "The goal of Congress is that India should be governed in the interest of Indians themselves. In an oft-quoted speech delivered in Allahabad in 1907. Mr. Gokhale said : I want India to take her proper place among the great nations of the World, politically, Industrially, in religion, in literature, in Science and in arts." It is for all of us to visualize the prevailing situation mainly in the field of degeneration of Social life. Gokhale belief in laying down and following codes of conduct in every sphere of life and Society. It is however left to our colleagues and the persons engaged in the field of social welfare to read and understand the guide line laid down by the founder and predecessors of the Servants of India Society.

The sooner our present day leaders and social activists accord to Mr. Gokhale his pre-eminent place in the making of free India and honour this first proponent of moral values in public life,, the sooner shall we redeem our pledge to our country and our people.

Symasundar Misra,

Late President,

Servants of India Society

Shri S.S. Misra, the then President of the Servants of India Society was born on 1909 in the district of Ganjam of Orissa state. Completed higher education M.A. under Patna University both in Economics and Political Science, joined the Servants of India Society as a life member in 1936. He had succeeded late S.R. Venkataraman as President in the year 1986. He was a colleague of such eminent stalwarts like Pandit H.N. Kunzru, Thakkar Bapa, Right Hon'ble Srinivasa Sastri, Mr. N.M. Joshi, Mr. Dinkar Desai, Mr. A.D. Mani, L.N. Sahu, R.S. Misra and top leaders of Orissa. He had also played a leading part in public life of Orissa mostly regarded as a great intellectual of the state. In 1952 he availed a fellowship from United Nations to study on the women and Child welfare activities in U.S.A. He was a scholar and a public spokesman with daring nature. As a whole the entire life of Mishraji was devoted and dedicated to the service of suffering millions of the Society. H passed away in the year 1993.

Padmashree Laxminarayan Sahu

3.10.1890 – 18.1.9163

Late Lemented L.N. Sahu was born on Thursday, October 3, 1890 in the District of Balasore of Orissa state. He completed M.A. in 5 subjects, started his carrier as a teacher in the Mission School of Cuttack in the year 1912. Joined Servants of India Society as the life member in June 1917 as the first member from Orissa. He worked with Right Honourable Sriniwas Sastri, Pandit Hrudaynath Kunzru, Pandit Madanmohan Malviya, Pandit Motilal Nehru, C.Y. Chintamani, N.M. Joshi, Deodhar & Thakkar Bapa. A tireless renowned social worker Laximinarayan was a fearless soul. He was founder of first oriya Co-operative Society in 1918, Choudwar Rural reconstruction Centre in 1927, Rayagada Centre in 1938 of the Servants of India Society. His life was crowded with achievements. He edited 3 journals, written hundreds of books in Hindi, Bengali, English & Oriya. He died at Deulasahi, Cuttack on January, 18, 1963.

वर्तमान शिक्षा कितनी सार्थक है

डॉ० विजेन्द्र सिंह
प्रधानाचार्य
आदिवासी इं० का०, सिलथम, सोनभद्र

वर्तमान शिक्षा वर्तमान युग में कितनी सार्थक है यह एक विचारणीय विषय है। समय और काल के अनुसार शिक्षा भी परिवर्तनशील होनी चाहिए। यदि समय के अनुसार शिक्षा के उद्देश्य, पाठ्यक्रम और परीक्षा प्रणाली में परिवर्तन नहीं लाया गया तो शिक्षा बेकार सिद्ध होगी। शिक्षा में आमूल-चूल परिवर्तन करने की बात बहुत पहले से उठायी जा रही है किन्तु आज तक इस बिन्दु पर कोई सार्थक कदम नहीं उठाया गया।

प्राचीन काल में शिक्षा का उद्देश्य मात्र ज्ञान प्राप्त करना और गुरुओं की सेवा मात्र था। शिष्य गुरु के आश्रम में जाता था और उसकी सेवा कर ज्ञानार्जन करता था। विद्या में पारंगत होने के बाद घर आता था और अपना गृहस्थ जीवन व्यतीत करता था किन्तु आज की शिक्षा का उद्देश्य न केवल ज्ञानार्जन है अपितु अर्थ या धन प्राप्त करना भी है या यह कहा जाय कि वर्तमान शिक्षा का उद्देश्य मात्र नौकरी या व्यवसाय है।

आज की शिक्षा से बेरोजगारी अधिक उत्पन्न हो रही है। शिक्षित बेरोजगार नौकरी के लिए दर-दर की ठोकरें खाते हैं और नौकरी की तलाश में इधर-उधर घूमते हैं।

विद्यालयों, कालेजों में शिक्षा का पाठ्यक्रम इस प्रकार का होना चाहिए कि छात्र पढ़ने लिखने के बाद वह स्वतः कोई कुटीर उद्योग खोलकर अपना जीविकोपार्जन कर सके। साबुन बनाना, मोमबत्ती बनाना, टाट पट्टी निर्माण या अन्य छोटे उद्योग आदि की शिक्षा की व्यवस्था विद्यालयों में की जा सकती है। वर्तमान समय में व्यावसायिक शिक्षा कुछ कालेजों में प्रारम्भ की गयी है किन्तु उसका भी सार्थक उपयोग नहीं हो पा रहा है। सरकार को चाहिए कि व्यावसायिक शिक्षा प्रत्येक कालेज में खोलने के लिए सहयोग करे और इस पर विशेष बल दे।

वर्तमान शिक्षा पूर्णरूपेण सार्थक नहीं है। वर्तमान शिक्षा को सार्थक बनाने के लिए व्यावसायिक शिक्षा को शुरू करने के साथ-साथ इसमें आमूल-चूल परिवर्तन करना होगा। महात्मा गाँधी की बुनियादी शिक्षा पर विशेष ध्यान देना होगा।

स्वाधीन भारत के इन 50 वर्षों में संचयात्मक दृष्टि से शिक्षा की भारी प्रगति हुई है। विद्यार्थी, अध्यापक, विद्यालय भवन, उपकरण आदि दस गुने से भी अधिक बढ़े हैं, परन्तु इस वृद्धि के बावजूद एक लाख से अधिक छोटे गाँव (आबादी 300) पाठशाला विहीन हैं। लगभग आधी पाठशालाओं में न तो पर्याप्त स्थान है, न शिक्षक। शौचालय, खेल का मैदान, पुस्तकालय आदि उससे भी कम है, परन्तु जिस चीज का सर्वत्र अभाव है, वह है सीखने-सिखाने का उत्साह, स्नेह और संस्कारमय वातावरण।

स्कूली पाठ्यक्रम जड़ और गतिहीन है।.........स्कूली बस्ते का बढ़ता बोझ चिन्ता का विषय बन रहा है। हम अपनी शिक्षा प्रणाली में सैकड़ों वर्षों के अनुभवों से प्राप्त पारम्परिक ज्ञान और समझदारी के समृद्ध खजाने को अनदेखा कर रहे हैं। ऐसा पारम्परिक ज्ञान या समझदारी हमें खेती, भूप्रबन्धन, जल संसाधनों का नियोजन, वन विज्ञान, पारिस्थितिकी संतुलन, भवन निर्माण, चिकित्सा, कुटीर उद्योग आदि विविध क्षेत्रों में उपलब्ध है।

पठन-पाठन के सिद्धान्तों की समृद्धि करने वाले अपने देश के शैक्षिक प्रयोगों से हमने कुछ सीखा ही नहीं है। शिक्षा को ग्रामीण विकास जोड़ने वाले रवीन्द्र नाथ ठाकुर के शान्ति निकेतन और शिक्षक प्रशिक्षण के सम्बन्ध में गीजू भाई के अनुभव इसके उदाहरण हैं।

उच्च एवं तकनीकी शिक्षा के सुधार के नीति परक वक्तव्यों के बावजूद अधिकांश संस्थायें अपेक्षाओं को पूरा नहीं कर सकी हैं। बहुत से निम्न स्तरीय कालेज कुकुरमुत्तों की तरह उग आये हैं, जिनका शैक्षिक या सामाजिक, आर्थिक कोई खास अर्थ नहीं है।

महात्मा गाँधी ने लगभग 75 वर्ष पूर्व कहा था कि मेरा यह निश्चय मत है कि आज की अंग्रेजी शिक्षा में शिक्षित भारतवासियों को निर्बल, नपुंसक और नकलची बना दिया है। आज इस कथन का प्रमाण राष्ट्रजीवन में पग-पग पर दिखाई पड़ रहा है। राजनीतिक निर्बलता के कारण पहले हमने हिन्दुस्तान के टुकड़े-टुकड़े करना स्वीकार कर लिया, फिर हजारों वर्ग मील का अपना भू-भाग पाकिस्तान और चीन के हाथ गँवा बैठे, अब आतंकवाद और अपराध के साथ समझौते किये जा रहे हैं।

भारत में "बच्चे देश का भविष्य हैं" का नारा तो बहुत लगाया जाता है किन्तु तीन से लेकर दस वर्ष तक की उम्र वाले नौनिहालों को मुँह अन्धेरे से स्कूल जाने के लिए क्यों मजबूर किया जा रहा है। पूरे देश के शहरी, अर्धशहरी क्षेत्रों और कस्बों तक में शिशु मन्दिर, के० जी० स्कूल, पूर्व प्राथमिक और प्राथमिक शाखाएँ सवेरे सात आठ बजे प्रारम्भ हो रही हैं। पाठशालाओं में समय पर पहुँचने के लिए इन छोटे-छोटे बच्चों को कम से कम एक और डेढ़ घंटे पहले जागना पड़ता है। जागना क्या, जबरदस्ती जगाना पड़ता है। जब वे बालक कृष्ण की मुद्रा में निश्चिन्त भाव से गहरी नींद में होते हैं। उनके बाल सुलभ कुनमुनाने, विरोध स्वरूप

रोने के बावजूद उन चुनींदे शिशुओं को जबरन हाथ-मुँह धुलाकर पाठशाला के लिए तैयार किया जाता है। इसी भगदड़ में उसे कुछ जबरदस्ती खिलाने की कोशिश की जाती है और फिर तीन साढ़े तीन किलो वजन का बस्ता उसकी पीठ पर बाँधकर पानी की बोतल लटका दी जाती है। फिर शुरू होती है—पाठशाला समय पर पहुँचने के लिए बैलगाड़ी, ताँगा, रिक्शा, ऑटो, जीप या बस पकड़ने की दौड़, जिनमें बच्चे ठूँसकर भर जाते हैं और राजधानी दिल्ली सरीखे शहर में हादसे होते हैं।

विचित्र स्थिति यह है कि इन छोटे बच्चों का प्रतिदिन दस-बारह घण्टे का समय स्कूल और होमवर्क में ही बीत जाता है। पिता अपनी नौकरी से लौटने के बाद शाम को या रात को ही होमवर्क करा सकते हैं। इतनी छोटी वय में इतना मानसिक एवं शारीरिक श्रम तथा दण्ड का भय बच्चों को बुरी तरह से लस्त-पस्त और थका देता है। इतना लम्बा समय पढ़ाई-लिखाई में भेजा खपाने के बाद उसके पास खेलने-कूदने के लिए समय, सुविधा और शक्ति बचती ही कहाँ है।

राष्ट्रीय शिक्षा अनुसन्धान परिषद तथा अन्य शिक्षाशास्त्रियों ने इस दिशा में काफी शोध कार्य किया है। सभी एकमत हैं कि पूर्व प्राथमिक एवं प्राथमिक पाठशालाएँ सवेरे से नहीं लगायी जानी चाहिए। प्रातः नौ बजे से पहले तो किसी भी हालत में बच्चों की पाठशालाएँ नहीं लगायी जानी चाहिए। उन्हें सोकर उठने और प्रातःकालीन शौच आदि कार्यों से निवृत्त होने का पूरा सहज— स्वाभाविक समय मिलना चाहिए। इसी प्रकार पूर्व प्राथमिक पाठशालाओं अर्थात् शिशु मन्दिर एवं के० जी० कक्षाओं में पाँच वर्ष की वय होने तक किसी भी प्रकार का पढ़ने-लिखने का कार्य नहीं कराया जाना चाहिए। जो कुछ भी सिखाया है वह केवल खेलकूद-- खिलौने, सामूहिक गायन, चित्रों आदि के माध्यम से सिखाया जाना चाहिए। होमवर्क तो किसी भी हालत में नहीं दिया जाना चाहिए।

प्राथमिक पाठशालाओं में भी विषयों की संख्या और फिर उनसे सम्बन्धित पुस्तकों एवं लेखन कार्य की कापियों की संख्या बहुत अधिक हो चुकी है। पाठशाला में इतने अधिक कार्य के बाद फिर हर विषय में ढेर सारा होमवर्क देने से उनकी क्षमता तथा मानसिक और बौद्धिक विकास पर विपरीत असर हो रहा है। जिन पाठशालाओं में भातृभाषा के सिवाय अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा प्रदान की जा रही है, वहाँ यह समस्या और भी अधिक गम्भीर हो गयी है।

अनावश्यक नियन्त्रण हटाने और उदारीकरण के नाम पर शिक्षा और स्वास्थ्य की सार्वजनिक सुविधाओं पर सर्वाधिक और अहितकारी प्रभाव पड़ा है। हर तरह के शासकीय नियन्त्रण, निरीक्षण एवं अन्य शैक्षणिक मानदण्डों की शिथिलता ने लगभग अराजकता का वातावरण निर्मित कर दिया है। शिक्षण शुल्क से लेकर, पाठशाला का समय, पाठ्यक्रम का निर्धारण, पाठ्य-पुस्तकों का चयन, परीक्षा प्रणाली, कक्षा में विद्यार्थियों की संख्या, शिक्षकों की योग्यता, प्रशिक्षण और वेतन आदि में मनमानी चल रही है जिसका भावी पीढ़ी के विकास पर बहुत ही प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है।

प्रतीक किराना स्टोर

मलेरिया रोड पानी की टंकी के सामने बाजपुर

उधम सिंह नगर

फोन नं0 : 283214 पिनकोड : 262401

भारतीय जनजातियाँ : परिवर्तन के नये आयाम

(सोनभद्र जनपद 'उत्तर प्रदेश' की जनजातियों के सांस्कृतिक परिवर्तन पर आधारित)

-डॉ० शम्भू नाथ पाण्डेय
प्रवक्ता, समाजशास्त्र
सुधाकर म०महाविद्यालय, वराणसी

भारतीय जनजातियों का सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन उनके स्वयं के वातावरण में पुष्पित एवं पल्लवित होता रहा है। फिर भी उनके निकटस्थ पड़ोसियों एवं आसपास की सामाजिक आर्थिक प्रघटनाओं एवं प्रक्रियाओं से वे अछूती भी नहीं रह सकी हैं। पड़ोसी हिन्दुओं एवं इसाईयों की प्रभाविता ने उनमें धार्मिक एवं सामाजिक परिवर्तन के लिए आकर्षित किया। स्वतन्त्रता के बाद से अनेक सरकारी प्रयास उनके प्रयास उनके विकास एवं परिवर्तन के लिए रामवाण सिद्ध हुए। औद्योगीकरण, नगरीगरण, शिक्षा व्यवस्था, संचार एवं यातायात के साधनों ने तो जनजातिय सांस्कृतिक परिवर्तन में क्रान्ति ला दिया है। अतएव परिवर्तन तो सार्वभौमिक प्रघटना है और एक काल की अवधि में परिवर्तन की प्रक्रिया संस्कृति का गतिशास्त्र माना जा सकता है। सांस्कृतिक परिवर्तन का एक पृथक घटना के रूप में अध्ययन नहीं किया जा सकता, क्योंकि परिवर्तन को जव तक एक निर्दिष्ट काल और प्रकृति में मानव व्यवहार की आधार रेखा के प्रसंग में न देखा जाय तो परिवर्तन अपने आप निरर्थक है। अत: जनजातियों के सांस्कृतिक परिवर्तन पर प्रकाश डालने का प्रयास किया है। वैसे तो परिवर्तन विषयक आयाम अनेक हैं, यथा—परिवर्तन के सामाजिक आयाम, आर्थिक आयाम, राजनीतिक आयाम, सांस्कृतिक आयाम एवं भाषा, प्रजाति, नृ-जातीय आयाम आदि। प्रस्तुत लेख के अन्तर्गत मैंने जनजातियों के सांस्कृतिक आयामों में परिवर्तन को अवलोकित करने का प्रयास किया है। सांस्कृतिक आयाम के अन्तर्गत जनजातियों की भौतिक संस्कृति एवं अभौतिक संस्कृति दोनों में हो रहे परिवर्तनों पर प्रकाश डाला गया है। जहाँ एक ओर जनजातियों के भौतिक संस्कृति के अन्तर्गत उनके रहन-सहन की स्थिति एवं तकनीकी उपकरणों, आखेट एवं कृषि के हथियारों, भोजनादि में प्रयुक्त पात्रों, विविध परिधानों, आभूषणों, श्रव्य-दृश्य मनोरंजन के साधनों, यातायात एवं संचार के साधनों में परिवर्तन को देखा गया है। वहीं दूसरी तरफ उनके अभौतिक संस्कृति में होने वाले परिवर्तनों पर भी प्रकाश डाला गया है, जिसके अन्तर्गत उनकी धार्मिक विश्वास व्यवस्था, जादू-टोना, टोटम-टैबू, गोत्र संस्तरणात्मक प्रवृत्तियों गोत्र-समूह, वंशावली विवाह की अधिमान्यताएँ, रीति-रिवाज, त्योहार एवं मेले तथा वाजार एवं हाटों में परम्पराएँ एवं प्रथाएं तथा तद्जनित परिवर्तन पर विचार किया गया है। भारतीय जनजातीय सांस्कृतिक परिवर्तन के सन्दर्भ में अनेकानेक अध्ययन किये गये हैं, जिसमें श्रीवास्तव (1958) हिमालय के थारू तथा मजूमदार के खासा (1963) एवं सक्सेना (1962) के अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि ये अपनी संस्कृति के तत्व कायम रखते हुए जातीय व्यवस्था में सुधार करके क्षेत्रीय मान्यता को प्राप्त कर लिये हैं। ये स्थानीय ठाकुरों एवं व्राह्मणों की जीवनशैली एवं पद्वियाँ ग्रहण करके समाज के सिरमौर भी वन गये हैं। मध्य भारत की भूमिज, मुण्डा तथा गोंड जैसी जनजातियाँ अपने-अपने क्षेत्रों में अपना राज्य स्थापित कर रखा था। छोटा नागपुर का मुण्डाराज, वीरभूमि का भूमिज राज, गोंडवाना का राजगोंड राज आदि। ये समस्त राज जनजातीय आधार पर ही आन्तरिक विकास से क्रमश: विकसित हुए हैं, सिन्हा (1967), धुर्ये (1958)ने उत्तर-पश्चिम एवं मध्य भारत की जनजातियों को पिछड़े हिन्दु की संज्ञा दिया है। मुखर्जी (1960) की मुख्य रुचि संथालों और हिन्दू जातियों में सम्वन्धों का पता लगाना रहा है।

छोटा नागपुर के उराँव गावों में व्राह्मण पुजारियों के कारण हिन्दू देवी-देवताओं को लगातार महत्व दिया जाने लगा है। ये गाय की हत्या को वर्जित मानते हैं एवं रामायण, हनुमान चालीसा से परिचित हैं, सहाय (1962)। 'कोल' जनजातियों में भी 'हिन्दूकरण' पाया गया है, ग्रियर्सन (1938) हिन्दू कोलों की गणना वहिर्जाति के रूप में करते हैं। विद्यार्थी (1966) ने मुण्डा क्षेत्र में माँझी लोगों को एक जाति के रूप में वर्णित किया और कहा है कि ये हिन्दू शैली को अपनाये हैं तथा पड़ोसी मुण्डाओं से भिन्न प्रतीत होते हैं। कालिया (1959) ने जौनसार-वावर एवं मध्य प्रदेश के वस्तर जिले की जनजातियों में हिन्दू संस्कारों को व्यवहार में लाते हुए पाया है। मजूमदार (1950) ने 'हो' जनजाति में पर संस्कृतिकरण की वात हिन्दुओं के सन्दर्भ में ही किया है। 'हो' जनजातियों के बीच 'हो' ग्राम में रहने वाले हिन्दुओं पर विशेषकर 'हो' जनों के धार्मिक रीति-रिवाजों के प्रभाव की चर्चा राय ने भी किया है। श्रीनिवास (1956) ने भी इसी

प्रक्रिया का समर्थन किया और कहा कि 'महान्' परम्परा 'लघु परम्परा' के सामने घुटनें टेक सकती है। हट्टन (1931) ने विचार व्यक्ति किया कि हिन्दू धर्म एवं जनजातीय धर्म दोनों में कुछ उभयात्मक तत्व है। कुछ हिन्दू मन्दिरों में जनजातियों के पवित्र वस्तुओं का स्वरूप देखा जा सकता है। बोस (1978) ने उड़ीसा के जुआंगो में विवाह, नातेदारी एवं युवा संगठनों पर हिन्दुओं की प्रभाविता का उल्लेख किया है।

भारतीय जनजातियों में ईसाइयत की प्रभाविता एवं तद्जनित परिवर्तन को नकारा नहीं जा सकता। सच्चिदानन्द (1964) के अध्ययन से स्पष्ट है कि मुण्डा एवं उराँव के सांस्कृतिक परिवर्तन में इसाई मिशन ही उत्तरदायी है। ज्योतिसेन (1968) ने छोटा नागपुर में सामुदायिक विकास के अध्ययन के दौरान ईसाइकरण की व्याख्या प्रस्तुत किया है। सहाय (1962) ने जनजातीयों पर इसाईयत के प्रभाव के बारे में कुछ सांस्कृतिक प्रक्रियाओं की व्याख्या की है, जैसे आसिलेशन (दोलन) स्कूटिनाइजेशन (संवीक्षण), कम्बिनेशन (संयोग), इडिजिनेशन (देशीयकरण) और रिट्रोवर्शन (पश्चनति) आदि।

जनजातीय सांस्कृतिक परिवर्तन में प्रशासन एवं समाजसेवी संस्थाओं का योगदान महत्वपूर्ण रहा है। संविधान का अनुच्छेद (46), इनके शैक्षिक एवं आर्थिक विकास को प्रोन्नत करते हुए सामाजिक अन्याय एवं शोषण से उसकी रक्षा की बात करते है। अनुच्छेद (164) विशेष मन्त्री, अनुच्छेद (268)विशेष अधिकारी की नियुक्ति तथा अनुच्छेद (149) उन क्षेत्रों के लिये विशेष प्रशासन एवं अनुच्छेद (339) केन्द्रीय नियन्त्रण की व्यवस्था करता है। कुछ राज्यों तथा क्षेत्रों को विशेष अनुदान अनुच्छेद (275), लोकसभा और विधान सभा में सुरक्षित स्थान, अनुच्छेद (332), स्थान सुरक्षित एवं विशेष प्रतिनिधित्व अनुच्छेद (334), सेवाओं एवं पदों पर विशेषाधिकार, अनुच्छेद (335), नागालैण्ड को विशेष जनजाति क्षेत्र का प्रबन्ध, अनुच्छेद (371) एवं अनुच्छेद, (336, 342) किन समुदायों को जनजाति माना जाय की व्याख्या करता है। इसके अतिरिक्त संविधान में यह व्यवस्था है कि (अनुच्छेद—15) धर्म, जाति, प्रजाति, लिंग एवं जन्म स्थान के आधार पर कोई विभेद नहीं होगा। अनुच्छेद 16 के अनुसार सभी को जन नियोजन में समान अवसर प्रदान किया जायेगा। अस्पृश्यता का उन्मूलन अनुच्छेद 17, मानव के व्यापार एवं वेगार पर प्रतिबन्ध अनुच्छेद 23, अल्पसंख्यकों के हितों की रक्षा अनुच्छेद 29 एवं जनकल्याण के विकास हेतु सामाजिक सुव्यवस्था अनुच्छेद 38 के द्वारा प्रदान की गयी है।

समाजसेवी संस्थाओं में वनवासी सेवा मण्डल, आदिम सेवा मण्डल, संथाल, पहड़िया सेवा मण्डल, ग्राम उद्योग संघ, उड़ीसा आदिवासी कांग्रेस, भील सेवा मण्डल, भारतीय रेडक्रास सोसाइटी, भारतीय दलित वर्ग लीग, सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी, भारतीय कल्याण परिषद, आदिम जाति सेवा संस्थान एवं अखिल भारतीय पिछड़ा वर्ग फेडरेशन इत्यादि भारतीय जनजातियों के कल्याण हेतु प्रयासरत है और इनके शिक्षा, स्वास्थ्य तथा नवीन रोजगार के क्षेत्र में जागरूक करने लगे हुए हैं। जनजातियों को बाह्य दुनियाँ से सम्पर्क में लाने हेतु इन संस्थाओं ने एड़ी से चोटी तक प्रयास किया है, जिसके परिणाम उनके सांस्कृतिक परिवर्तन के रूप में सामने आते हैं। करोड़ों रुपये इन पर व्यय किये जा चुके हैं किन्तु जनजातीय क्षेत्रों में आर्थिक, शैक्षिक, स्वास्थ्य, सफाई, आवास, संचार एवं सांस्कृतिक गतिविधि तथा राजनैतिक क्षेत्रों में ही उनमें विकास एवं परिवर्तन झलकते हैं। जबकि कतिपय क्षेत्रों में ये आज भी अभावग्रस्त हैं। दुर्योग से इन योजनाओं के परिणामों का आकलन रूपये के आधार पर कर दिया जाता है। मानवीय दशाओं एवं जीवन स्तर की प्रकृति में होने वाले गुणवत्तामूलक सुधार की मात्रा के आधार पर नहीं। ऐसा प्रशासनिक आख्यायें उत्तरोत्तर यथार्थता से परे भ्रामकता को ही बढ़ावा दी है। सुझाव प्रस्तुत किया कि जनजातियों के विकास का मूल्याँकन जीवन की गुणवत्ता में उत्थान, सांस्कृतिक विकास, सामाजिक न्याय, राजनीतिक जागरूकता और सशक्तीकरण के माध्यम से प्रमाणित होनी चाहिए।

जनजातियों के सांस्कृतिक परिवर्तन में नवीनीकरण की भूमिका भी कम नहीं रही है। नगरों में रोजगार के अवसरों के कारण जनजातियाँ आकर्षित हुईं, जहाँ बाहरी लोगों से सम्पर्क का उन पर प्रभाव पड़ा। उनकी परम्परागत वस्तु विनिमय का स्थान मुद्रा ने ले लिया। नगरीय आवश्यकतानुसार उत्पादन की ओर भी इनका ध्यान गया और कुछ जनजातियाँ परम्परानुसार, धान, गेहूँ, मँडुवा, ज्वार, कोदौ जैसी फसलों के साथ-साथ नकदी फसलों—आलू, अदरख, गन्ना सब्जी एवं फलों आदि को उत्पादित करने लगीं। दूसरी ओर शहरों के तैयार माल जैसे सिले-सिलाये कपड़े, दर्पण, कंघी प्लास्टिक एवं अल्युमिनियम के पात्र, प्रसाधन सामग्री, रोलगोल्ड के आभूषणों आदि ने जनजातियों के घरों में स्थान पा लिया है। उनमें परम्परागत वस्त्रों के साथ नये वस्त्र यथा—पैण्ट, शर्ट, कुर्ता-धोती, पायजामा धारण करना आम बात हो गयी है। पर्व एवं त्योहारों पर अपने नाच गानों के साथ-साथ झण्डी, तोरण, चोंगा आदि का भी प्रयोग दिखायी देने लगा है। पूजा एवं त्योहार मनाने हेतु उनमें भी चन्दा लेने की प्रथा नगरों के सम्पर्क के कारण पैदा होने लगी है। आनुभविक विश्लेषण प्रमुख हैं। विद्यार्थी ने हटिया (विहार) के निकट 8 जनजातिय गाँवों में औद्योगीकरण की प्रभाविता का आकलन किया कि इनकी परम्परागत कृषि जन्य अर्थव्यवस्था यथावत् है। उनके नई पीढ़ी के सदस्य कारखानों में काम करने लगे हैं। वे खेतिहरों की अपेक्षा उपभोक्ता सामग्रियों— नये वस्त्रों, टार्च, चश्मा, साईकिल एवं रेडियो, टी०वी० इत्यादि पर अधिक व्यय करने लगे हैं। पारिवारिक स्तर पर बूढ़े व्यक्ति का प्रभाव पड़ा है। जहाँ तक यौन सम्बन्धों में ढील का प्रश्न है, अपने स्वजातियों के मध्य ढील परम्परागत सीमा तक ही है, पर गैर जनजातियों से भी सम्बन्ध स्थापित होने की छिट-पुट घटनायें दृष्टिगत हुई हैं।

पतरातू (बिहार)औद्योगिक क्षेत्र से प्राप्त जानकारियों में राजेन्द्र सिंह (1967) के अध्ययन के आधार पर कहा जा सकता है कि वहाँ की

जनजातियों की आर्थिक संरचना में अन्तर आया है। राजनीतिक क्षेत्रों में 'पाहन' या 'महतो' जैसे परम्परागत नेताओं का प्रभाव घटा है और नये पढ़े लिखे लोगों को नेतृत्व प्राप्त हो रहा है। श्रमिक नेताओं का प्रभाव भी इन लोगों पर पड़ रहा है।

बोकारों इस्पात कारखाने के क्षेत्र में भी जनजातियों पर कुछ इसी प्रकार के प्रभाव देखे गये हैं, सरकार (1970)। विस्थापितों में अधिकांश ने कृषि कार्य के स्थान पर औद्योगिक मजदूरी अपनायी है किन्तु अनुभव के अभाव में काम नहीं मिलने से इनमें असंतोष व्याप्त है। निर्माण के प्रथम के चरण में इनमें भी बिखराव आया है। परम्परागत सामाजिक व्यवस्था भी छिन्न-भिन्न हुई है।

जनजातीय सांस्कृतिक परिवर्तन का एक महत्वपूर्ण कारक शिक्षा रहा है। किन्तु शिक्षा का जो वर्तमान स्वरूप है वह उनके सांस्कृतिक मूल्यों के अनुकूल नहीं है। व्यक्ति अपने सांस्कृतिक पर्यावरण से निर्देशित होता है और शिक्षा संस्कृति पर निर्भर है। यदि सांस्कृतिक मूल्यों के अनुसार जनजातीय क्षेत्रों में शिक्षा मुहैया करायी गयी होती तो प्राथमिक विद्यालयों में नामांकित 40 प्रतिशत बच्चे बीच में ही शिक्षा छोड़कर पलायित न होते पन्त, (2002)। अतः शिक्षा का पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिए जो मानव और पर्यावरण के क्रियात्मक सम्बन्धों को समझाने में सहायक सिद्ध हो।

जनजातीय सांस्कृतिक परिवर्तन में जनसंचार एवं यातायात के साधनों की भूमिका अत्यन्त सराहनीय है। इनके परम्परागत सूचना के स्रोत ढोल, नगाड़ा, तासा पीटने जैसे साधनों की जगह लाउडस्पीकर, रेडियो, टी०वी० एवं डाकतार विभाग ने ले लिया है। यातायात के साधनों में बस, टेम्पो, ट्रक, ट्रैक्टर, रेल आदि के द्वारा ये एक स्थान से दूसरे स्थान को जाने लगे हैं, और बैलगाड़ी, ताँगा एवं अन्य पशुचालित साधनों का इनके यहाँ से विलोपीकरण होता जा रहा है। इनके क्षेत्रों में भौतिक संस्कृति के अन्य प्रतिमान भी परिवर्तन के दौर में देखे जा सकते हैं।

सोनभद्र (उत्तर प्रदेश) की जनजातीय सांस्कृतिक परिवर्तन पर यदि हम दृष्टिपात करें तो यहाँ की निवासी जनजातियाँ मुख्यतः गोंड, अगरिया, खरवार, बैंगा, कोरवा, घसिया एवं कोल हैं। अध्ययन का समग्र दुद्धी तहसील का म्योरपुर है। वर्तमान समय में समग्र के अन्तर्गत छः जनजातीय समूह हैं जो 120 गाँवों में विस्तारित है। तथ्य संकलन हेतु 500 उत्तरदाताओं का चयन स्तरित यादृच्छिक प्रतिदर्श प्रविधि एवं व्यवस्थि यादृच्छिक प्रतिदर्श प्रविधि के आधार पर किया गया है। उत्तर दाताओं से उनके सांस्कृतिक परिवर्तन के सन्दर्भ में जो तथ्य प्राप्त हुए हैं उनके बारे में आनुभविक विश्लेषण के निष्कर्ष निम्नलिखित हैं।

जैसा कि पूर्वोल्लेख है कि समग्र की जनजातियों के संस्कृति के भौतिक एवं अभौतिक पक्षों में परिवर्तन को देखने का प्रयास किया गया है। उन भौतिक एवं अभौतिक पक्षों में परिवर्तन से सम्बन्धित आनुभविक तथ्यों के निष्कर्ष इस प्रकार है—

जहाँ तक जनजातीय समुदाय की आवासीय व्यवस्था में परिवर्तन का प्रश्न है संकलित दत्त सामग्री के परिणाम से स्पष्ट है कि सर्वाधिक अर्थात् तीन चौथाई से भी अधिक उत्तरदाताओं के मकान के स्वरूप कच्चे हैं जबकि पूर्व में ये झोपड़ी में ही रहती थीं। अतः आवासीय व्यवस्था में परिवर्तन दृष्टिगत हो रहा है।

इसी प्रकार उनके वस्त्रविन्यास में भी परिवर्तन अवलोकित होता है। प्रतिदर्श 88.8 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने अपने परिधानों में परिवर्तन के प्रति स्वीकारोक्ति जाहिर किया है।

समग्र से चयनिक जनजातीय परिवारों के भोजन के पात्रों एवं भोजन सम्बन्धी आदतों प्रतिमानों में परिवर्तन स्पष्ट दिखायी देता है। प्रायः इनके भोजन बनाने एवं खाने के पात्र एल्युमिनियम एवं गिलास, कटोरी स्टील के होते हैं।

अध्ययन की उपलब्धियों से यह भी स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र की जनजातियों के आखेटक हथियारों में परिवर्तन देखा गया। गुलेल एवं बरछा, भाला, तीर-धनुष के साथ-साथ ये बन्दूकों का भी प्रयोग करने लगे हैं। कुछ लोगों ने तो बन्दूक के लाइसेन्स भी कराये हैं। मछली पकड़ने के स्वरूपों में परम्परागत कटिया एवं जाल ही दिखायी दिया।

जहाँ तक जनजातीय समुदाय में उपयोग किये जाने वाले विविध अलंकरणों में परिवर्तन का प्रश्न है, अधिकांश अर्थात् 92.4 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने सहमति प्रकट किया कि ये आभूषण का प्रयोग करते हैं। पहले तो ये जनजातियाँ शीप, मनकों, लकड़ी, शंख, पुष्प एवं मूँगे आदि के आभूषण धारण करती थीं। किन्तु वर्तमान में इनके आभूषण सोने, चाँदी, रोल-गोल्ड, स्टील एवं एल्युमिनियम तथा अन्य आधुनिक मिश्रित धातुओं के बने होते हैं। अधिकांश (81.6) प्रतिशत जनजातियाँ चाँदी से निर्मित आभूषणों का प्रयोग करती है।

अध्ययन क्षेत्र की जनजातियों के मनोरंजन के साधनों में परिवर्तन स्पष्टतः दिखायी देने लगा है। इनके परम्परागत नृत्य 'करमा' का स्थान आधुनिक फिल्मी गीतों एवं धुनों ने ले लिया है। ढोलक, मादर, झांझ, करताल, हारमोनियम के स्थान पर घर-घर रेडियो एवं टेपरिकार्डर का प्रयोग मनोरंजन के लिए होने लगा है। कतिपय गोंड एवं पनिका लोगों के यहाँ टी०वी० का प्रयोग भी देखा गया। कथ्य है कि इन परिवारों में लोग औद्योगिक केन्द्र एवं प्रशासनिक कार्यालयों में नौकरी करने वाले थे और अपना सम्पर्क गाँवों से कायम रखे हैं।

गवेषक को समग्र के यातायात के साधनों में भी परिवर्तन अवलोकित हुआ। जहाँ पहले ये पैदल एवं बैलगाड़ी, ताँगा के द्वारा यात्रा करते थे वहीं आज ये बस, रेल एवं ट्रक, टैम्पो, आदि के द्वारा यात्रा करने लगे हैं।

सामान्य दूरी की यात्रा के लिये ये साइकिल का प्रयोग करते हैं। गाँवों में मार्ग तो कच्चे ही हैं किन्तु उन मार्गों का सम्पर्क शहरों को जाने वाले मुख्य मार्गों से है। वहाँ से ये यातायात के साधनों का उपयोग करते हैं।

जहाँ तक जनसंचार साधनों की उपयोगिता का प्रश्न है, अध्ययन क्षेत्र के अन्तर्गत डाकघर एवं सार्वजनिक ग्रामीण टेलीफोन तो उपलब्ध है किन्तु उनका उपयोग जनजातियाँ नाम मात्र की ही करती हैं क्योंकि इनके यहाँ के लोग वाहर शहरों में और अन्य स्थानों पर विखरे नहीं हैं। कुछ परिवार के सदस्य शिक्षा एवं नौकरी के लिए यदि शहरों में गये हैं, तो तीज-त्योहारों एवं उत्सवों के समय अपने गाँव लौट आते हैं। शिक्षा का स्तर भी निम्न होने के कारण पत्र लिखना असम्भव हो जाता है। अत: डाकघरों में बाहर से तो पत्र, मनिआर्डर एवं बीमा रजिस्टर्ड पत्र आते हैं लेकिन यहाँ से पत्र नाम मात्र के भेजे जाते हैं। दैनिक समाचार पत्र इनके वाजारों एवं हाटों में आते रहते हैं। जागरूक एवं पढ़े लिखे जनजातियों के परिवार के सदस्य समाचार पत्रों का अध्ययन करते हुये तथा वर्तमान राजनीतिक परिदृश्य के बारे में चर्चा करते हुए अवलोकित हुए।

ग्रामीण स्तर पर सूचना तो ढिंढोरा पीटकर अथवा मौखिक आधार पर दिये जाते हैं किन्तु प्रशासनिक सूचनाएँ लाउडस्पीकर द्वारा दी जाती है। उत्सवों-त्योहारों एवं मेलों में लाउडस्पीकरों का प्रयोग देखा गया, साथ ही नाटक, रामलीला एवं नृत्य संगीत एवं विवाहोत्सवों में भी लाउडस्पीकरों एवं टेपरिकार्डर के कैसेट बजते पाये गये। अधिकाँश उत्तरदाताओं के यहाँ स्वास्थ्य एवं प्रसाधन सामग्री का उपयोग किया जाने लगा है।

अध्ययन के क्षेत्र की जजनजातियो के यहाँ यदि कोई बीमार पड़ता है तो पहले वे वैगा अथवा गुनिया ही वुलाते हैं, वाद में डाक्टरों की सहायता लेते हैं।

अध्ययन के क्षेत्र की जनजातियों में धार्मिक विश्वास के अन्तर्गत पूर्वजोंकी पूजा का विशेष स्थान है, ये अपने घरों में पूर्वजों की पूजा के लिए (चौरी) की स्थापना करती हैं। पूर्वज पूजा में पशुबलि एवं शराब की प्रथा पायी गयी है। ये ज्वालामुखी, दूल्हा देव, बैरम एवं बड़े देव जैसे देवी-देवताओं की पूजा करते हैं, साथ ही हिन्दु देवी-देवताओं की पूजा भी करते हैं।

जहाँ तक तीज-त्योहार का प्रश्न है, अध्ययन क्षेत्र की अधिकांश जनजातियाँ प्राय: हिन्दू त्योहारों जैसे-दीपावली, दशहरा, नागपंचमी, जन्माष्टमी आदि को मनाती हैं।

जादू की प्रभाविता धर्म के साथ भी (बैगा) जनजातियों में मुख्यत: अवलोकित होती है। सामान्य कष्टों को दूर करने के लिए ये जादू के मन्त्रों का सहारा लेते हैं। जादू-टोना से छुटकारा दिलाने वाले इनके परम्परागत ओझा एवं बैगा होते हैं। समग्र से प्रतिदर्श अधिकांश जनजातियों ने स्वीकारोक्ति जाहिर किया कि वे भूत-प्रेत, चुड़ैल आदि को मानती हैं।

टोटम एवं टैबू के बारे में अधिकाँश उत्तरदाताओं ने सहमति प्रकट किया है। दिशाशूल एवं रास्ते को बिल्ली द्वारा काटने जैसी अशुभ घटनाओं के प्रति विश्वास तथा छुआछूत के प्रतिमान सर्वाधिक उत्तरदाताओं में पाये गये। अध्ययन क्षेत्र की जनजातियों में शवों को जलाने की प्रथा पायी जाती है किन्तु कालरा, माता (चेचक) प्लेग जैसी महामारी एवं आठ वर्ष के नीचे की आयु वर्ग के बच्चों के शवों को ये जंगलों में गाड़ देते हैं या नदियों में प्रवाहित कर देते हैं।

जहाँ तक मृतक व्यक्ति के संस्कार एवं प्रीतिभोज का प्रश्न है, हिन्दुओं की प्रभाविता के कारण स्वजातियों के प्रीतिभोज भी देने लगे हैं।

अध्ययन के क्षेत्र शत-प्रतिशत उत्तरदाताओं ने यह मत व्यक्त किया कि उनके यहाँ युवागृह (गोतुल) अब विद्यमान नहीं है। विवाह माता-पिता तय करते हैं। लड़कियों की आयु 15 तथा लड़कों की विवाह की आयु 20 वर्ष के आस पास पायी गयी। विवाह में स्वजाति को प्रश्रय दिया जाता है किन्तु कुल देवता (गोत्र समूह) में विवाह वर्जित है। विधवा पुनर्विवाह एवं विवाह-विच्छेद की प्रथा इनमें पायी जाती है। समग्र की जनजातियों में परिहास एवं परिहार दोनो प्रकार के सम्बन्धो का प्रचलन है। देवर-भाभी, जीजा-साली के बीच परिहास तथा जेठ एवं ससुर के बीच बहू का सम्बन्ध परिहार का होता है। दामाद एवं सास से भी परिहार के सम्बन्ध पाये जाते हैं।

उपर्युक्त शोध उपलब्धियों के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि अध्ययन क्षेत्र की जनजातियों के सांस्कृतिक परिवर्तन के अन्तर्गत अभौतिक संस्कृति में परिवर्तन की प्रक्रिया सामाजिकता एवं धार्मिकता के धरातल पर मंद गति चुनिन्दा, पारस्परिक, समायोजित संगठित एवं समाविष्टकारी रही है। जबकि भौतिक संस्कृति में परिवर्तन की प्रक्रिया तीव्रगति वाली उथल-पुथलकारी एवं सांस्कृतिक संघर्ष के परिवेश में अवलोकित होती है। औद्योगीकरण, नगरीकरण प्रशासकीय, प्रजातन्त्रीय एवं कल्याणकारी योजनाओं की प्रभाविता एवं शिक्षा जनसंचार यातायात के साधनों ने तो जनजातियों में उत्परिवर्तन पैदा कर दिया है और ये सांस्कृतिक संक्रमण के दौर से निकलकर परिवर्तन के दौर में आ गयी हैं। अत: परिवर्तन के इस दौर में समाजसेवियों एवं प्रशासकीय कर्मचारियों से यह अपेक्षा की जाती है कि उनका सामान्य जीवन अस्त-व्यस्त न हो और वे संस्कृति के नयी धारा में सुसमंजित रूप से प्रवाहित हों, इस पर ध्यान देने की आवश्यकता है। यह तभी सम्भव है जब समाजसेवी अधिकारी तन्त्र एवं जनजातियो के बीच सहज अन्त:क्रिया स्थापित किया जाय।

AMRIT LAL THAKKAR

By Late Shri H. N. KUNZRU

When Shri Amritlal Thakkar or Thakkar Bapa as he is now known throughout the country joined the Servants of India Society in 1914, some of the members including myself doubted Mr. Gokhale's wisdom in admitting him into the Society at the age of 45. We were afraid that he might not be found physically fit for the active life that members of the Society were expected to lead. But experience soon set our fears at rest. We found that his capacity for hard outdoor work exceeded that of the younger members. His simplicity, devotion to duty and his absorption in his work won our whole-hearted admiration and made us regard him as an acquisition to the Society. Mr. Gokhale writing in 1914 to Mr. Srinivasa Sastri, who was not sure that the admission of Thakkar Bapa would be in the interest of the Servants of India Society, expressed his confidence that `both (Dr. Deva and Thakkar) will live in the work of the Society'. Thakkar Bapa has fully justified Mr. Gokhale's confidence. He truly lives in the work of the Society.

His capacity for sustained work has been one of his distinguishing characterstics all his life. Hard work never tires him. He may spend a whole day in the study of uninspiring details and yet feel fresh and cheerful in the evening. It has been a source of wonder to me ever since I came to know him, that he needs no recreation'. As Mahatma Gandhi once said,'his work is his sole satisfaction recreation.' A life of ceaseless activity is not merely a sacred duty but also a joy to him. Even now when his health has greatly deteriorated owing to his refusal to take rest, even after a prolonged illness, he works the whole day and undertakes pretty strenuous tours. Nothing makes him so uneasy as rest. He regards rest almost as a kind of self-indulgence. The monitor in him is an exceptionally stern taskmaster.

The secret of cheerfulness and energy seems to me to lie in his unwavering faith in the direction of the world by a Divine power. Though he never talks of his innermost beliefs he has a quiet but firm belief that we are all guided by a beneficent power. He has often said to his friends when they have reminded him that he is neither young nor strong and impressed on him the need for being more merciful to himself, that if God considered his work of any value He would give him the strength to continue it. He has often said this jocularly, but I think that this is what he really believes and what makes him unmindful of the need for husbanding his strength.

Thakkar Bapa is a great optimist. He always looks at the bright side of things. He feels that honest work is bound to be rewarded with success. Though things may look dark for a while, he had no doubt that unless we lose faith in ourselves, victory is bound to attend our efforts. His God is a good God who will not allow honesty of purpose and persevrance to end in failure.

Thakkar Bapa has worked in many fields but generally speaking it can be said of him that the main object of his activities was to serve the humblest classes of our population. He has earned for himself a name as a great social worker throughout the country, but he is specially known for the part that he has played in connection with the movements for the removal of untouchability and the development and welfare of the aborigines. Few people have studied the problems relating to the Harijans and other backward classes, the tribal people and the criminal tribes as carefully and acquired such intimate practical knowledge of their needs as Thakkar Bapa. This enables him, perhaps, to take a wider view than others of the problems concerning the amelioration of the lot of the suppressed classess who have been suffering for centuries from injustice, ne-

glect or ignorance. As General Secretary of the Harijan Sevak Sangh he has rendered an inestimable service to the Harijan cause all over India during the last seventeen years. I doubt whether there is any part of India that he has not visited over and over again in connection with the discharge of his heavy responsibilities. His extensive tours lasting for weeks and sometimes for months during which he invariably travelled in the third class till he was nearly 76 years old, would have taxed the energy of much younger men, but his moral enthusiasm for the cause that he had taken up enabled him to bear the strain for a long time without any injury to his health. His aim has been not merely to promote the educational and material welfare of the depressed classes but also to make the higher castes conscious of the duty that they owe to those whom their callousness has reduced to a condition that is a standing disgrace to the country. Progress in such a task cannot be very rapid but he has done more than what one man can to rouse their conscience and make them realize how great an obstacle their attitude is to national unity.

Till the discussions in the London Round Table Conference revealed the importance of the Tribal problem and its bearing on our demand for national freedom, few people even among the educated Indians were aware of it. Perhaps even ten years ago not many educated persons knew either the nature or the extent of the problem. For years there have existed in the country associations established with the object of promoting the well-being of the Harijans, but till recently except for the foreign Christian mission there was no association working for the moral and material welfare of the aborigines. The welcome change that has come over the country in this respect is mainly due to the work done during the last few years under Thakkar Bapa's leadership. He started the Bhil Seva Mandal at Dahod (Gujrat) as far back as 1923. He lived among them for ten years and showed by his magnificent work how their confidence could be gained and what methods should be followed to spread education among their youths and to build up their character. Till the other day the view propagated by the missionary workers and accepted by the Provincial Governments was that their separate existence should be maintained almost for ever. It was thought that it would be a great injustice to them to make an active effort to change their customs and manners and that their evolution should not lead to a destruction of the distinctive features of Tribal Society. This view was vigorously combated by Thakkar Bapa who held that the aim of our Tribal policy should be to bring about their integration with the rest of the population. He did not want to force the pace of Tribal people and create a feeling of fear and despair among them. He was entirely in favour of bringing about changes gradually so that new ideas might become part of their inner lives. But he had no doubt that our ultimate object should be their complete assimilation to the more advanced people among whom they are living. That his view has come to prevail, is an achievement of which he might well be proud.

In every work undertaken by him Thakkar Bapa has shown an unusual ability to make use of the available resources. His zeal for his work and intense sympathy with those whom he tried to serve enabled him to discover local talent and utilise it to the fullest extent possible. Whether working for the depressed classes or the aborigines, it has been his policy to find men among them who would act as leaders among their own people. He has patiently trained his colleagues and by his genuine simplicity of heart and faith in his own work won their affection and inspired them with zeal for the service of the humble and the downtrodden bretheren.

He is to-day a beacon light to social workers all over the country. He completed the Bibilical span of life ten years ago but we rejoice that he is still young in spirit and an ardent 'servant of India'. He has earned the right to take rest but rest he never thinks of. He is as ready to shoulder new burdens and as eager to find new ways of serving those who are unable to look after themselves as he was thirty-five years ago. His colleagues and millions all over the country pray that he may be spared for many years to come to serve the great causes that he has made his own.

Human Rights and Social Solidarity With Special reference to Women

Dr. Sudhanshu Tripathi
Sr. Lecturer Pol. Science
M.D.P.G. College, Pratapgarh (U.P.).

Human rights are the indispensable primary requirements of all human beings. But they have been most vulnerable through the ages in all parts of the world because the greatest enemy of a man is no other else but a man. His primordial instincts-selfishness and benevolence-as the great philosopher Rousseau told us and so did the great poet Tulsidas in Sunderkand of Ram Charita Manas, have governed him all through the past centuries but it is the former i.e. selfishness which has caused untold agony and sorrow to the later i.e. benevolence. Infact violations of human rights is as old as the coming into existence of social groups of human beings is, because it is a human group wherein one violates the rights of another man. As requirements of all human beings are almost same and resources are gradually declining, the resultant clash of interests among them is inevitable. Hence arises the question of rights for human beings in order to secure and protect his or her basic needs from the onslaughts of the other human beings. Naturally the notion of rights got attached, as civilizations advanced, with human beings to define those fundamental needs-like, food, water, air, shelter-as integral needs of a human personality. They are held by all human beings and cannot be renounced or forfeited under any circumstances. This realization among all human beings is the sine-qua-non for their social groups to survive. Since a man by nature is not a complete whole and depends on other human beings for his needs, his interaction with others and resultant social formations are bound to take place.

Thus a man is an individual as well as a social being. He needs the company of fellow human beings because he cannot be his own natural self in solitude. His natural self primary demands economic and racial needs which get fulfilled only in a social group. So at one stage or the other of the evolutionary process of human species, man started living in groups. In all areas of the world and in all eras, they must have, implicitly or explicitly, in legal terms or social terms, defining the rights and obligations of the individuals, particularly the nature of socially acceptable claims and the restrictions imposed by the need of maintaining the social order. Here the question of solidarity arises because it is the pivot on which the entire gamut of harmonious social relations rests and revolves. No human group can survive in the absence of mutual understanding, harmony, spirit of sharing and caring etc. all defining brother hood and social solidarity. One must not forget that force, fear or terror can only be a temporary device for binding and maintaining a human organization. the basic and everlasting device is love, sympathy, piety-all at the root of unity and solidarity. Nature has exclusively bestowed these qualities to women, though men are not an exception, as she has the capacity to procreate a child where upon she showers her all selfless, passion-less love and affection, thereby lays the foundation of affection and solidarity in a family which is the real basis of any state society as Aristotle had opined. That is why the role of women with regard to social solidarity becomes very important because a mother plays the founding role in human personality. As childhood traits, mostly given by mother, go lifelong in any human being the future shape of social solidarity will be determined accordingly.

The origin of modern concept of human rights can be traced from the dawn of civilization when human beings started living in groups. The term human rights it self indicates its very nature and source. This term point out to those fundamental requirements of human personality with out which he or she can not fully develop and realize his/her innate characteristics which Nature has bestowed him/her with as a human being. These requirements are to be made available by society to all human beings irrespective of ones place, race, colour, sex, caste or religion or any other such factor. They are also very necessary to ensure the dignity of everyone as a human person. The great liberal philosopher John Locke had called them Natural Rights as an integral and inalienable part of human personality and had categorized them as right to life, liberty and estate. As a human being, we all want to live and enjoy, we want freedom to hold and propagate our views and we also want free movement and also genuine amount of private property for our livelihood. All these require a just and secure social environment where our lives are safe and our humanness may find fullest and maximum and free expression and our mundane desires are fulfilled. But there has always been and so is still today a threat to such humanness either due to human folly, knavery or wickedness or due to gradually increasing struggle among human beings for day to day needs. It was also natural that in many circumstances might prevailed over what was right; those who held power dominated the week. Nonetheless, history has it, that from time immemorial, the "rights" of man and concept of "social justice" derived from religion, from human experiences, observations and reflections have been a refuge against human might, a rallying cry for resistance to tyranny or oppression and against arbitrary rule. With the passage of time, these 'rights' or established customs or understanding' including the relationship between the ruler and ruled, were brought together in different forms in various parts of the world.

In modern times, since the term gained wide currency, we have become so accustomed to conceptualizing human relations in terms of rights that we do not appreciate that until 17th Century all societies, Western or non-Western have lived without invoking the term right. In all societies some form of monarchial system of government developed. Not all of rulers were despotic and if they became too cruel or oppressive, there were instances when they were over thrown and replaced by another ruler. People enjoyed many of these liberties, characteristic of free society, such as security of life and possessions and freedom of movement. They did not kill each other, at will, not did their rulers deprive them of their lives except according to established procedures and for commonly agreed purposes, they also had possessions, both movable and immovable, which they used as they pleased and bequeathed to their children. Yet they did not regard these as their rights or claims. They took these freedoms for granted, enjoyed and exercised them in any way feeling as self conscious about them. In India from ancient times, freedom of movement, freedom of expression, or religion, and of assembly, right to dissent were part of life. (K.P. Saxena; World).

All sages, seers, religious and social reformers in India have always preached for essential equality of all human beings irrespective of caste, creed, faith, race or religion etc. which had laid the solid foundation of unity and solitarily, which is the hall mark of our Indian culture. These teachings were not only confined to spiritual matters but also offered guidelines in the sphere of practical affairs-concepts of humanitarian conduct, human dignity environmental protection & dignity, intergenerational rights, a code of human duties and international equity. Also, an attitude of tolerance and respect for different religions and to other ways of life and the motto : Live and let live and the spirit of 'sharing and caring' and the unique features of our Indian culture and traditions. What has contributed most to the evolution of social solidarity in India is the emphasis on duties, and not on rights, with the belief that if everyone perform's one's duties, every body's right and social welfare will automatically be taken care of. This attitude of tolerance and sense of silent discharge of duty with out clamouring for rights is present definitely in

higher degree and in superior form in women which promotes the sprit of solidarity not only in a family but in a society as well. As regards Western notion of the evolution of human rights, beginning from Greece & Rome and then since renaissance, the Western thinking have been more systematic and also rational in conceptualising the relationship between individual and the society, individual rights and liberties, rule of law and several other terms now prevalent in human rights terminology. Though they propounded that all human beings are equal having equal rights irrespective of any form of discrimination, their emphasis was in favour of the previledged upper class of royal families, nobles and feudal lords which excluded lower working classes and also women. Even Aristotle, who stood for good and virtuous life for all in this citystate, discriminated between citizens & slaves (being in huge number) and did not grant them fundamental rights & freedom. This bias towards upper classes of society was visible in Magna carta (1215) or American Declaration of Independence 1776 or French Declaration on the Rights is of Man 1789 or philosophies of John Locke or J.S. Mill all regarded as milestones in the evolution of fundamental rights. This became more pronounced in modern era in the form of racial prejudices and superiority during course of Imperialism & Colonialism in the name of white man's burden, Karl Marx's industrial society of 18th cent. Europe also witnesses the division between have's and havenot's where have's were all powerful due to economic monopoly and havenot's had no rights and who had even lost the essence of humanity and became **proletariat**.

These are present even today where power full nations trample and destroy a small nation and human rights of people living there in the name of protecting human rights and democracy all over the world. The latest example is that of Iraq. There have been several instances of blatant violation of human rights by dictator like Hitler, Mussoline, Stalin, Augusto Pinochet, Dock Duvalier, Idi Amin etc. in the 20th Century. All these are still happening at national and international level either by police or para military forces or even military forces who are supposed to check the violation of human rights and protect such victims.

Realising the serious challenges of violation of human rights, the international community made a historic effort to define human rights and fundamental freedoms of people living in any part of the world which were incorporated in a resolution adopted by United Nations General Assembly on 10th Dec. 1948 (Paris) as Universal Declaration of Human Rights. This was an unequivocal recognition that human rights have to be as central to life as the basic needs of a man or woman like food, air, water or shelter. No one could be denied the right to life, liberty, security and to freedom of thought, conscience and religion. As the UN Secretary General Mr. Kofi Annan observed on the Occasion of the commemoration of the 50th anniversary of the adoption of the Universal Declaration of Human Rights in 1998, human rights have been the touchstone for all the UN seek to achieve in its global mission of peace and sustainable development. Since its inception, this Declaration was hailed as the "common standard of achievement for all people and all nations" and the UN has been a primary catalyst for the world wide promotion and protection of human rights and fundamental freedoms. (A. Balu; World Focus; Jan. 2001 P.7.). Now even after 55 years, there is an earnest demand for respect of human rights all over the world as a precondition for achieving the agreed principles of democracy, peace, progress and social solidarity. Its is indeed noteworthy that human rights have always had a choice link with mans' civilisation wherever that concept had flourished, and even today their existence or otherwise is symbolic of the standard of civilsation attained.

These features and values are also enshrined in Part III and IV of our Indian Constitution which deals with the chapters of Fundamental Rights and the Directive Principles of State Policy. Both these chapters have contributed immensely towards further evolution and development of areas of human rights (Arts 17:18; 23:24; 26:27; 29:30 and 32 to 35 etc.) and establishment and maintenance of peace and social harmony. (Arts. 38,40,42,44,45,47,48A, 50 & 51 etc) We have Human Rights Commission both at the Centre and in

sates to check the cases of violation of human in our country.

Thus human rights constitute the 'common language of humanity'. By adopting this language we get an opportunity to understand each other and also to create a just, free, and human social order where peace and harmony thrives. Here, the role of women assumes a particular significance as they are, by nature, the best manifestations of this common language of humanity. If we look back to our history, we find glorious episodes of their selfless sacrifice for social causes. Rani Ahilya Bai Holker of Indore got her indisciplined and wayward young son trampled under feets of elephants for sake of justice and rule of law in her state. Rani Laxmi Bai fought valiantly for independence, freedom and honour of her state and its people. Durga Bhabhi and many more women took active part in our freedom struggle in our country and also paid supreme sacrifice. Meera Bai proved to be a great social reformer. Similarly Rani Chelemma and Rani Gaindilu are well known for there heroic deeds done for sake of humanity. Madam Annie Beasent, Bhikaji Cama, Harvilas Sharda, Sarojini Dutt, Lakshmi Sehagal, Maha Sweta Devi, Kiran Bedi, Medha Patkar, Arundhati Roy, Vandana Shiva, Aung San Suo Kui and many more have contributed and are still contributing in their respective way towards expanding and consolidating this common language of humanity paving the way for harmony, unity, brotherhood and social solidarity.

विनोद किराना स्टोर

मेलारोड, पालियाकला (लखीमपुर खीरी)

विक्रेता साफ सुथरे मेक किराना एवं कन्फेक्शनर्स

Narendra K Sharma Mob.09837089888

Manager

MODERN TARAI SEEDS PVT. LTD.

Near Ekta Srower, Behind Roadways Bus Stand. PILIBHIT-262001 (U.P.)

Phone : (05882) 251992, Mob. 9837606088

OM GANGA KAVERI SEEDS

Bisalpur Road, PILIBHIT-262 001 Phone : (05882) 257678

पिथौरागढ़ (उत्तरांचल) की राजी आदिम जाति : (एक अध्ययन)

डॉ० गिरिजा प्रसाद दुबे
रीडर, समाजशास्त्र
म०गां० काशी विद्यापीठ, वाराणसी।

'राजी' आदिम जाति पिथौरागढ़ उत्तरांचल के कठोर प्रस्तर क्षेत्र में निवास करती हैं। इस आदिम जनजाति की न तो कोई आर्थिक संरचना है और न ही सामाजिक विकास। अर्थात् ये विकास के दौर में दम दिखाने वाले योजनाकारों एवं अर्थशास्त्रियों के समक्ष चुनौती के रूप में जीता-जागता मिसाल प्रस्तुत कर रही हैं। इन्हें कुमायूँ तथा हिमालयी क्षेत्र में लोग 'बनरावत', बनराजी, वनखनियाँ, रावत, या वन मानुस के नाम से पुकारते हैं।

राजियों का सामान्य जीवन :

राजी लोग वहुत ही शर्मीले स्वभाव के होते हैं। बाहरी लोगों से सम्पर्क करना ये पसन्द नहीं करते। इनके आवास ऊँची एकान्त पहाड़ियों पर होते हैं। पूर्व में ये गुफाओं में रहते थे। गुफा के सामने फूस के छप्पर डाल लेते थे। आग के सहारे ठन्डक का सामना करते थे। इनके खाने में जंगली फल एवं मूल ही होते थे। कभी-कभी जंगली जानवरों का शिकार भी कर लेते थे। जाड़े के दिनों में जब जंगल में फल एवं मूल जिन्हें इनकी भाषा में 'तरूण' एवं 'गेठी' कहा जाता है नहीं मिलता तो समीप के गाँव वाले किसानों का सहारा लेते थे। ये लकड़ी के गृहस्थी में काम में आने वाले सामानों यथा—हल, जुआठा, पाटा, लकड़ी के वर्तन एवं मकान के लिए काम में आने वाले पटरा, बल्ली आदि बनाने की कला में दक्ष थे। पूर्व में राजी लोग अपने पड़ोस के किसान परिवारों से वस्तु विनिमय द्वारा एक गुप्त व्यापार (Silent Trade) करते थे। ये आपस में पड़ोसी गाँव के किसान परिवारों को बाँट लेते थे। प्रथम दिन रात्रि में किसान परिवार के सो जाने के उपरान्त रात्रि के अंधेरे में चुपके से उसके दरवाजे के सामने कृषि कार्य में काम लाने वाले सामान (हल, जुआठा, पाटा आदि) रख देते थे। सुबह जब किसान जागता और अपने घर के सामने रखे कृषि औजारों को देखता तो समझ लेता कि राजी (वनरावत) परिवार को खाद्य सामग्री की आवश्यकता है। रात्रि में सोने के पूर्व उसी स्थान पर खाद्य सामग्री के रूप में मडुआ (एक मोटा अनाज) आटा या चावल आदि में से जो भी उपलब्ध होता रख देता। रात्रि में राजी आता और अनाज (खाद्य सामग्री) उठा ले जाता। यदि उसे कपड़े की आवश्यकता होती तो दूसरी रात्रि में घर के अन्दर काम आने वाली लकड़ी के वर्तन रख जाता। किसान पूर्व की भाँति रात्रि में सोने के पूर्व घर के पुराने कपड़े (पहनने एवं ओढ़ने वाले) रख देता, जिसे राजी रात में उठा ले जाता। इस प्रकार वस्तु विनिमय का यह गुप्त व्यापार इनकी आवश्यकतानुसार चलता रहता।

आवागमन के साधनों के विकास तथा वनों के कटान एवं वन विभाग का नियंत्रण वढ़ जाने के कारण अन्य लोगों (पड़ोसियों आदि) से इनका मिलना जुलना वढ़ा। एक स्थान पर इन्हें रहने पर भी विवश होना पड़ा। ये वनों में लकड़ी की कटान चिरान के साथ-साथ वनों में रास्ते आदि वनाने का कार्य करके मजदूरी प्राप्त करने लगे। इसके अतिरिक्त सिंचाई विभाग द्वारा निर्मित कराये जाने वाली गूल (Tunnels) को बनाने का कार्य राजी लोग ही करते थे। इस कार्य में ये वड़े ही प्रवीण माने जाते रहे हैं। वर्तमान में सार्वजनिक निर्माण विभाग तथा ग्रामीण अभियंत्रण सेवा विभाग द्वारा निर्मित कराये जाने वाले मार्गों के निर्माण से मजदूरों के रूप में कार्य कर अपना जीवन-यापन करते हैं। पहाड़ों से स्लेट, मकान के लिए पत्थर को काटकर वनाना तथा मकान में काम आने वाली बल्ली व पटरे का कार्य भी ये करके अपना जीवन यापन करते हैं। वर्षा के वाद पहाड़ की ऊँची ढलानों पर जो अन्य लोगों के लिए दुरूह होता है, पर उगी लम्बी घास को काटकर, उसे सुखाकर व्यापारियों को वेंच देते हैं जिससे इन्हें कुछ आय हो जाती है और जाड़े के लिए कपड़े आदि की व्यवस्था हो जाती है।

आवास के समीप, ये अपने सीढ़ीनुमा खेतों में खरीफ के मौसम में मडुआ, मक्का तथा फाफर एवं रामदाने की खेती भी करते हैं। कतिपय गाँवों में जहाँ सिंचाई की व्यवस्था हो गयी है रबी की फसल के रूप में गेहूँ तथा आलू भी वोने लगे हैं। खेती से किसी किसी परिवार को खाने के लिए वर्ष के एक-दो माह की व्यवस्था हो जाती है। इनके जीवन-यापन का मुख्य स्रोत जंगल से सूखी लकड़ी को काटकर समीप के वाजार में वेंचकर आय प्राप्त करना है। कुछ परिवारों को भैंस-गाय पालन हेतु अनुदान भी दिया गया, पर इनके लिए यह लाभकारी नहीं हुआ क्योंकि ये

पशुओं को भली प्रकार चारा आदि की व्यवस्था नहीं करते हैं। इसके लिए इन्हें जागरूक करने की आवश्यकता है।

अध्ययन का समग्र एवं प्रतिदर्श :

प्रस्तुत अनुभव जन्य शोध अध्ययन उत्तरांचल प्रदेश के जनपद पिथौरागढ़, कुमायूँ मण्डल में अवस्थित राजी जनजाति के 8 गाँवों एवं तीन विकास खण्डों (धारचुला, चम्पावत एवं डीडीहाट) में विभाजित है। अध्ययन में जिन 8 गाँवों को सम्मिलित किया गया है, वे हैं किमखोला, गनागाँव, चिपलतड़ा, चौरानी, मदनपुरी, कस्थूला, जमतड़ी एवं औलतड़ी। समग्र के अन्तर्गत सम्मिलित कुल राजी परिवारों में सदस्यों की संख्या 528 पायी गयी जिसमें महिलाओं की संख्या 245 तथा पुरुषों की संख्या 283 है। समग्र की सजातीयता के आधार पर एक संक्रमणीय गणना प्रणाली द्वारा वैयक्तिक अध्ययन प्रविधि का अनुसरण करते हुए 120 राजी परिवारों का अध्ययन किया गया है।

राजी की सामाजिक-आर्थिक समस्याओं के अध्ययन हेतु 120 परिवारों का चयन प्रतिदर्श के रूप में किया गया है। प्रतिदर्शित परिवारों के मुखिया से सम्पर्क स्थापित करके साक्षात्कार अनुसूची भरवायी गयी तथा कुछ समस्याओं का प्रत्यक्ष अवलोकन किया गया है।

वैसे तो प्रायः जनजातियाँ समस्याग्रस्त हैं लेकिन राजी जनजाति की समस्या अन्य जनजातियों से पृथक् और व्यापक है। यह जनजाति आज भी खाने-पीने एवं वस्त्र के लिए मोहताज है। संविधान द्वारा दिया गया संरक्षण और शासन द्वारा प्रदत्त उनके विकास तथा कल्याण की सुविधायें उनकी समस्याओं के समक्ष बौने साबित होते हैं। जनप्रिय सरकार इन समस्याओं के निराकरण के लिए कटिबद्ध हैं, इसीलिए इन्हें आदिम समूह (Primitive Groap) के अन्तर्गत वर्गीकृत किया है। राजी समाज की समस्या एक नहीं अनेक हैं जिनका अभी तक समाधान करने में वे असमर्थ हैं।

इनकी कतिपय समस्यायें जो गवेषणा के दौरान आलोकित हुई हैं, वे निम्नलिखित हैं—

(1) राजी के पास रोजगार एवं व्यवसाय के साधन नहीं हैं। 120 परिवारों में से 102 परिवार निर्धनता की रेखा के नीचे जीवन यापन करने को मजबूर हैं। मात्र 4 राजी लोगों को विभिन्न सरकारी कार्यालयों में रोजगार प्राप्त हुआ है जिसमें 2 स्थायी कार्मिक हैं।

(2) स्वास्थ्य एवं चिकित्सा की सुविधाएँ इनके क्षेत्र में नगण्य हैं।

(3) राजियों में शिक्षा की व्यावहारिकता नगण्य रही है और वे अपने बच्चों को स्कूली शिक्षा से दूर रखते हैं। इसका मुख्य कारण गरीबी तथा शिक्षा के प्रति उनकी नीरसता रही है। राजी की औसत शिक्षा का स्तर देखने से स्पष्ट होता है कि ये आज भी शिक्षा से कोसों दूर हैं। यद्यपि कि इनके क्षेत्र में आश्रम पद्धति के विद्यालय कार्यरत हैं फिर भी इनमें उत्साहजनक परिवर्तन नहीं अवलोकित होते।

विगत पाँच वर्षों में आश्रम पद्धति के विद्यालयों में अध्ययनरत छात्रों का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है जिससे उनकी शिक्षा के प्रति जागरूकता का सहजता से अनुमान लगाया जा सकता है।

सारणी—1

राजकीय उ०मा० आश्रम पद्धति विद्यालय बलुआकोट में अध्ययनरत राजी छात्रों की स्थिति

वर्ष	कक्षा-1	कक्षा-2	कक्षा-3	कक्षा-4	कक्षा-5	कक्षा-6	कक्षा-7	कक्षा-8	कक्षा-9	योग
1997—98	06	02	02	01	02	01	—	—	—	14
1998—99	10	01	02	01	—	01	—	—	—	15
1999—2000	08	—	—	—	—	—	01	—	—	09
2000—01	03	06	—	—	—	02	—	01	—	12
2001—02	05	04	05	—	—	02	01	—	—	17
योग	32	13	09	02	02	06	02	00	01	67

सारणी संख्या—1 स्पष्ट करती है कि 1997-98 में कुल 14 छात्र विद्यालयीय शिक्षा ग्रहण कर रहे थे जिसमें सर्वाधिक छात्र कक्षा—1 में अध्ययनरत थे। इसी प्रकार 1998-99 में कुल 15 छात्र अध्ययन कर रहे थे जिसमें सर्वाधिक छात्र कक्षा—1 में पंजीकृत थे। सन् 1999-2000 में पंजीकृत छात्रों की संख्या में कमी आयी और मात्र 09 छात्र विद्यालय में अध्ययन कर रहे थे जिसमें 08 छात्र कक्षा—1 में पंजीकृत हुए तथा 1 छात्र कक्षा—7 में पढ़ रहा था। 2000-2001 में पंजीकृत कुल छात्रों की संख्या 12 थी जिसमें कक्षा 1 में तीन छात्र अध्ययन कर रहे थे, 06 छात्र कक्षा—2 में अध्ययन कर रहे थे तथा 02 छात्र कक्षा—6 में तथा 1 छात्र कक्षा—8 में अध्ययन कर रहा था। सन् 2001-2002 में कुल 17 छात्र अध्ययन के लिए नामांकित थे जिनके विवरण से स्पष्ट होता है कि कक्षा 1 एवं 3 में 05 छात्र पढ़ रहे थे जबकि कक्षा 2 एवं 4 में अध्ययन करने वाले पाये गये, शेष 02 छात्र कक्षा 6 तथा 1 छात्र कक्षा 7 में अध्ययन करने वाला था। कक्षा 4, 5, 8 एवं 9 में छात्रों की संख्या नगण्य पायी

गयी। अतः सार रूप में यह कहा जा सकता है कि राजी द्वारा आश्रम पद्धति के विद्यालयों में कक्षा 1 में तो छात्रों का नाम लिखा दिया जाता है किन्तु आगे की कक्षाओं में वे छात्र असफलता के कारण अध्ययन के प्रति अजागरूक अवलोकित होते हैं।

सन् 2001-2002 में राजियों के बच्चों की शिक्षा के विकास हेतु भारत सरकार के जनजाति कार्य मंत्रालय द्वारा लौलजीवी में एक आवासीय विद्यालय संचालित किये जाने हेतु, स्वैच्छिक संस्था "सीमान्त अनुसूचित जाति एवं जनजाति सेवा संस्थान, पिथौरागढ़" को 4,65,000 रुपये अवमुक्त किये गये थे जिसके द्वारा शिक्षा का संचालन प्रारम्भ किया गया है। इसमें 55 छात्रों को क्रमशः किमखोला, गनागाँव, औलतड़ी, जमतड़ी तथा चिपलतड़ा गाँवों से सप्रयास लाया गया है। इनकी शिक्षा की दिशा में यह आवासीय विद्यालय कितनी सार्थक भूमिका निभाएगा यह भविष्य पर निर्भर करेगा।

अध्ययन के समग्र से चयनित उत्तरदाताओं द्वारा उनके बच्चों को स्कूल भेजने के बारे में जानकारी प्राप्त की गयी। प्राप्त तथ्यों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि आधे से कम (40.00 प्रतिशत) उत्तरदाताओं ने स्वीकारोक्ति प्रकट किया कि वे अपने बच्चों को स्कूल भेजते हैं। जबकि 25.0 प्रतिशत उत्तरदाता बच्चों को स्कूल नहीं भेजते हैं। शेष 35.0 प्रतिशत उत्तरदाता इस सम्बन्ध में निरुत्तरित पाये गये। अर्थात् अध्ययन के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि राजी अपने बच्चों की शिक्षा के प्रति जागरूक नहीं हैं। इस सन्दर्भ में सारणी—2 सांगोपांग विवरण प्रस्तुत करती है।

सारणी—2

बच्चों को स्कूल भेजने के बारे में राजियों के उद्‌गार

बच्चे स्कूल जाते हैं	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	48	40.00
नहीं	30	25.00
निरूत्तर	42	35.00
योग	120	100.00

बच्चों को स्कूल न जाने का कारण जब उत्तरदाताओं से पूछा गया तो 91.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने यह बताया कि वे धनाभाव के कारण बच्चों को स्कूल नहीं भेजते जबकि 8.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं में शिक्षा के प्रति जागरूकता का अभाव देखा गया। इस सन्दर्भ में सारणी—3 द्रष्टव्य है—

सारणी—3

बच्चों को विद्यालय न जाने के कारणात्मक प्रतिमान

विद्यालय न जाने का कारण	आवृत्ति	प्रतिशत
जागरूकता का अभाव	10	8.3
गृह कार्य	—	—
धनाभाव	110	91.7
विद्यालय का न होना	—	—
शिक्षा के प्रति अरूचि	—	—
योग	120	100.0

यदि उत्तरदाताओं के स्वयं की शिक्षा के स्तर का अवलोकन किया जाय तो वह भी सन्तोषजनक परिणाम नहीं प्रदर्शित करता। अर्थात् समग्र से प्रतिदर्शित 73.4 प्रतिशत उत्तरदाता निरक्षर पाये गये जबकि 15.0 प्रतिशत उत्तरदाता साक्षर अर्थात् हस्ताक्षर करने वाले पाये गये। प्राथमिक स्तर तक शिक्षा ग्रहण करने वाले उत्तरदाताओं की संख्या 10.8 प्रतिशत प्राप्त हुई जो कक्षा—1-2 तक पढ़े थे। पूर्व माध्यमिक स्तर तक शिक्षा ग्रहण करने वाले उत्तरदाताओं की संख्या 0.8 प्रतिशत रही। इसके विपरीत माध्यमिक एवं इण्टरमीडिएटड स्तर तक या इससे अधिक शिक्षा प्राप्त करने वाले उत्तरदाताओं की संख्या शून्य रही।

अतः निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि अधिकांश उत्तरदाता निरक्षर रहे हैं। प्राप्त दत्तों के सन्दर्भ में निम्नलिखित सारणी सम्यक् विवेचन प्रस्तुत करती है।

सारणी—4

राजी जनजाति की शैक्षणिक उपलब्धियाँ

उत्तरदाताओं का शैक्षिक स्तर	आवृत्ति	प्रतिशत
निरक्षर88	88	73.4
साक्षर 18	18	15.0
प्राथमिक	13	10.8
पूर्व माध्यमिक	01	0.8
माध्यमिक	—	—
इण्टरमीडिएट या इससे अधिक	—	—
योग	120	100.00

जादू टोना एवं राजी की चिकित्सीय पद्धति :

मानव अपनी श्रद्धा कर्म एवं तपस्या के आधार पर अतिमानवीय, अदृश्य शक्ति को वशीभूत कर नियंत्रित करने का प्रयास करता है। इस प्रयास द्वारा अपनी इच्छानुसार भले-बुरे, शुभ-अशुभ कार्यों में, वशीभूत शक्तियों का प्रयोग करना जादू कहलाता है। मैलिनोवस्की (1948) जादू को व्यावहारिक क्रियाओं का योग मानते हैं जो लक्ष्य पूर्ति हेतु साधन के रूप में प्रयोग किया जाता है। समाज के सदस्यों की गतिविधियों को नियंत्रित करने के लिए धार्मिक विश्वासों तथा जादू के भय का सहारा लिया जाता है। इन्हीं विश्वासों को धार्मिक क्रियाओं द्वारा वचन अथवा कर्म से अभिव्यक्ति प्राप्त होती है। जहाँ तक 'राजी' समुदाय में जादू-टोना के प्रति विश्वास की बात है 98.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने स्वीकृति जाहिर किया कि वे जादू-टोना में विश्वास करते हैं, मात्र 1.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने जादू-टोना के प्रति अनभिज्ञता प्रकट किया। अतः सार रूप में यह कहा जा सकता है कि सर्वाधिक राजी परिवार जादू-टोना के प्रति विश्वास रखती है। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित सारणी सारगर्भित प्रकाश डालती है।

सारणी—5

जादू टोना की मान्यता के बारे में राजी के दृष्टिकोण

जादू-टोना मानते हैं	आवृत्ति	प्रतिशत
हाँ	118	98.3
नहीं	—	—
नहीं जानते	02	1.7
योग	120	100.0

जादू टोना के प्रति विश्वास व्यक्त करने वाले उत्तरदाताओं से यह भी ज्ञात किया गया कि वे किसी बीमार व्यक्ति को रोग से मुक्त होने के लिए डाक्टर को बुलाते हैं या अन्य किसी ओझा-सोखा (बैगा) को बुलाते हैं। इस सन्दर्भ में प्राप्त तथ्यों के विवेचन से स्पष्ट होता है कि अधिसंख्यक अर्थात् 98.3 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने यह अभिव्यक्ति जाहिर किया कि रोगों से त्राण दिलाने के लिए वे ओझा-सोखा (डंगरिया), बैगा को बुलाते हैं। जबकि 1.7 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने उद्‌गार व्यक्त किया कि वे विशिष्ट (बाकी) से मदद प्राप्त करते हैं। अतः निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि राजी बीमार लोगों के इलाज हेतु गुनिया ओझा-सोखा की मदद लेते हैं। अतः उक्त प्राक्कल्पना सत्य सिद्ध होती है। इस सम्बन्ध में सारणी—6 विस्तृत विवरण प्रस्तुत करती है—

सारणी—6

रोगों से ऋण दिलाने वाले व्यक्ति के बारे में राजी की अभिव्यक्ति

रोगों से छुटकारा दिलाने वाले लोग	आवृत्ति	प्रतिशत
डाक्टर एवं नर्स	—	—
ओझा-सोखा (डंगरिया)	118	98.3
विशिष्ट व्यक्ति (बाकी)	02	1.7
वैद्य एवं तांत्रिक	00	00
योग	120	100.00

राजी जनजाति एवं उनकी आवासीय समस्या :

राजी जनजाति की एक मूलभूत समस्या आवास की भी है। अर्थात् इनके रहने के लिए घर उनकी आवश्यकता के अनुरूप नहीं है। इन्दिरा आवास योजनान्तर्गत एवं समाज कल्याण विभाग के माध्यम से सरकार ने राजियों के लिए छोटे-छोटे आवास एक कमरे के बनवाये हैं जो ठीक से न बनने के कारण या अधिकारियों की धांधली के कारण वर्षा में चूते रहते हैं। अतः आज भी वे पत्थरों को काटकर गुफानुमा घर बनाकर रहते हैं। उनकी आवासीय स्थिति के बारे में प्राप्त तथ्यों के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि 73.4 प्रतिशत उत्तरदाताओं के आवास सरकार द्वारा निर्मित कराये गये एक कमरों के रूप में पाया गया जबकि 25.8 प्रतिशत उत्तरदाताओं के आवास गुफा या झोपड़ी में पाये गये। शेष 0.8 प्रतिशत अर्थात् एक उत्तरदाता का मकान कच्चा मिट्टी एवं लकड़ी का बना हुआ था। अतः सार रूप में यह कहा जा सकता है कि अधिकांश राजियों के आवास सरकार द्वारा बनाये गये पक्के कमरों के हैं। तथ्य संकलन के समय यह ज्ञात हुआ कि पहले अधिकतर राजी गुफानुमा आवास में ही रहते थे ब वे झोपड़ी या पक्के सरकारी एक कमरे वाले मकानों में रहने लगे हैं। उनके आवासीय व्यवस्था का स्पष्टतम् परिदृश्य अग्रलिखित सारणी 9 में अन्तर्विष्ट है।

सारणी—9

राजी जनजाति की आवासीय स्थिति

आवास के स्वरूप	आवृत्ति	प्रतिशत
गुफा या झोपड़ी	31	25.8
कच्चा	01	0.8
पक्का	88	73.4
योग	120	100.0

इसी प्रकार राजी के क्षेत्र में सुरक्षित जल की भी समस्या का अवलोकन किया गया। उनके गाँवों में स्वच्छ पेयजल हेतु नल का अभाव देखा गया अर्थात् उनकी आवश्यकतानुसार पेयजल के साधन का अभाव है। ये नदी-नाले एवं झरनों के जल से अपनी प्यास बुझाने को मजबूर हैं।

संचार एवं यातायात के साधनों का सर्वथा अभाव पाया गया। इनके गाँवों में जाने के लिए न तो कोई सड़क, न साधन, न टेलीफोन, और न डाक, तार आदि की व्यवस्था समुचित पायी गयी। खड़ज मार्ग जो बने भी हैं उनमें घपले देखे गये।

इन समस्याओं के अतिरिक्त सांस्कृतिक सम्पर्क की समस्या ने इनके दिनचर्या में उथल-पुथल पैदा कर दिया है और ये परसांस्कृतिक सम्पर्क के कारण मद्यसेवी हो गये हैं तथा बाजारू शराब (कच्ची शराब) पीने लगे हैं। जबकि कुछ वर्ष पूर्व तक वे शराब का नाम तक नहीं जानते थे। आज वे अपनी पत्नियों से जो लकड़ी या घास काटकर जौलजीवि बाजार में बेंचकर अपनी जीविका के लिए नमक-चावल आदि खरीदती हैं उसे भी छीनकर शराब पी जाते हैं। इसके परिणाम स्वरूप स्वयं पति-पत्नी एवं उनके बच्चे आधे पेट खाकर सोने को विवश होते हैं।

स्वातन्त्र्योत्तर भारतीय जनतंत्र के एक स्थायी तथा महत्वपूर्ण स्तम्भ के रूप में जनजातियों को महत्व दिया जाने लगा है। शासकीय दृष्टि से भी अब उनकी समस्याओं पर विशेष ध्यान दिया जाता है। विगत वर्षों में इनके विकास पर राज्य एवं केन्द्र सरकार द्वारा अनेकों योजनायें संचालित की गयी हैं परन्तु उनकी समस्याओं में जहाँ एक ओर शासन द्वारा राहत प्रदान की गयी है वहीं दूसरी ओर उनकी परसंस्कृतिकरण की समस्याएँ जटिल होती जा रही हैं। कुल मिलाकर देखा जाय तो अब उन्हें अनेक चुनौतियों का सामना अधिक करना पड़ रहा है। गत समय की तुलना में उनकी वर्तमान समस्यायें अनेक सन्दर्भों में अधिक जटिलतर अवलोकित होती हैं। अनागत के प्रति उनकी चिन्ता ने उन्हें एक ऐसे चौराहे पर लाकर खड़ा कर दिया है जहाँ से वे सही मार्ग की तलाश कर रही हैं। किन्तु सही

मार्गदर्शन के अभाव में वे संकटग्रस्त तथा अंधकार ग्रस्त होती जा रही हैं। वैसे स्थानीय परिस्थितियों के कारण किमखोला गाँव के एक राजी उत्तरांचल विधान सभा में विधायक हो गये हैं पर इससे इस समाज में कोई परिवर्तन परिलक्षित नहीं हुआ है।

अत: आज राजी के जीवन में अनेक सुधार अपेक्षित हैं—

सर्वप्रथम आवश्यकता है कि इनके क्षेत्र में रोजगार के अधिकाधिक अवसर उपलब्ध कराये जायें ताकि इनकी भुखमरी एवं गरीबी दूर हो सके। शिक्षा के क्षेत्र में ये शून्य हैं। अत: शिक्षा के व्यापक प्रचार-प्रसार से इनको जागरूक बनाया जा सकता है। जागरूकता के अभाव में उनकी समस्या का समाधान असम्भव है। राजी जनजाति गुलों एवं काष्ठोपकरण के निर्माण में सिद्धहस्त हैं। अत: इन्हें प्राविधिक प्रशिक्षण प्रदान करने तथा आर्थिक सहायता देकर निर्मित सामानों के विपणन की समुचित व्यवस्था कर इनके व्यवसायों में वृद्धि लाकर जीवन-यापन के स्तर को बढ़ाया जा सकता है।

इनकी समस्याओं के समाधान में स्वयंसेवी संस्थायें, योजनाकार मानवशास्त्री, प्रशासनिक अधिकारी तथा प्रतिबद्ध कार्यकर्ताओं द्वारा सम्मिलित प्रयास सार्थक भूमिका निभा सकता है। इसके लिए वैज्ञानिक आधार पर निष्ठापूर्वक योजनाबद्ध तरीके से और बिना पूर्वाग्रह के प्रयास होने चाहिए। इनके विकास के लिए परिवारवार योजना बनाकर उसका कड़ाई से अनुपालन सुनिश्चित करना आवश्यक है। जिसका नियमित रूप से अनुश्रवण उच्च स्तर पर किया जाय।

With Best Compliments From:

The Simbhaoli Sugar Mills Limited

The Largest Integrated Sugar Refinery
(DRPIE-Technology)

Manufacturers of Double Refined Sugar using Sulphur-free Process

❖ Refined Sugar ❋ Trust Sugar ❋ Pharma Sugar ❋
❖ Breakfast Sugar ❋ Lcing Sugar ❋ Sugar Cubes & Sachets

Sugar Complex & Regd. Office : P.O. Simbhaoli, Distt. Ghaziabad (U.P.)-245207
Telefax : (05731) 223010, 223117, 226410

Delhi Office : Tel (011)-51510421-3, 23733069. **Fax :** (011)-23733088
email : ssmidel@ndf.vsnl.net.in

रथ विहीन एक महारथी की तलवार

गंगा प्रसाद मिश्र
उपाध्यक्ष
आल इण्डिया सेवा समिति, इलाहाबाद

उत्तर प्रदेश में, आगरा के समद्ध जमींदार एवं इलाहावाद उच्च न्यायालय के सुविख्यात अधिवक्ता स्व० पं० अयोध्यानाथ कुँजरू के ज्येष्ठ पुत्र का घर का नाम 'हरी जी' और स्कूल में वे हृदयनाथ कुँजरू के नाम से जाने जाते थे। ऐश्वर्य और वैभव सम्पन्न वचपन व्यतीत करने के साथ ही साथ देश की आजादी की उमंग उनकों पैतृक उत्तराधिकार के रूप में मिली थी। अंग्रेज उनके नाम से घवराते थे। युवक हृदयनाथ को देशभक्ति और निर्भीकता खानदानी विरासत के रूप में मिली और इलाहाबाद के क्रान्तिकारी माहौल ने उन पर लोहे का पानी चढ़ा दिया था।

सन् 1905 ई० में युगद्रष्टा पं० गोपाल कृष्ण गोखले सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी की स्थापना कर चुके थे, उनका लक्ष्य था–देश के सुशिक्षित नवजवानों को संगठित कर, उन्हें उचित प्रशिक्षण देकर देश को स्वाधीन कराना तथा आजादी हासिल करने के वाद देश की बागडोर सम्हालने योग्य होनहार नागरिक तैयार करना, जो सदियों से गुलामी में जकड़े अपने देश को कुशल नेतृत्व प्रदान कर सकें। विविध विद्या के धनी युवक हृदयनाथ कुँजरू ने अपना राजसी वैभव छोड़कर एक फकीरी जीवन अपना लिया और अपना सम्पूर्ण जीवन देश और दीन-दुखियों की सेवा के लिए समर्पित कर दिया और सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी की आजीवन सदस्यता स्वीकार कर ली।

आज हम सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी की शताब्दी मना रहे हैं। जो केवल एक संस्था ही नहीं है अपितु एक ऐसा मंदिर है जिसमें बैठकर देश की अनेक महान विभूतियो ने देशहित में अपना सर्वस्व समार्पित कर देने की दीक्षा ली, और अपने जीवन का एक-एक पल दूसरों के लिए जिया है। इसकी ऊँचाई हिमालय से अधिक और गहराई समुद्र से भी ज्यादा है। इसकी नींव पत्थरों से नहीं, अत्यन्त मूल्यवान रत्नों से भरी गयी है। इसका इतिहास तरह-तरह के फूल और कांटों से भरा है–विखरा है। उसे एकत्रित कर पाना बहुत दुष्कर है। आकाश में फैले सितारों को इकट्ठा करने का काम किया भी जाये तो उन्हें रखने का इतना बड़ा घर कहाँ से लाया जायेगा। इसलिए मैं आज सोसाइटी के केवल एक ही ऐसे उज्जवल नक्षत्र (डॉ० हृदयनाथ कुँजरू) की चर्चा करने जा रहा हूँ जिनसे मुझे ढ़ेर सारी प्रेरणा और बहुत-बहुत प्यार मिला है।

सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी के अध्यक्ष डॉ० हृदयनाथ कुँजरू को, आज से 55 वर्ष पूर्व, सेवा समिति और भारत स्काउट एवं गाइड द्वारा संयुक्त रूप से लगाये गये माघमेला शिविर में मैंने पहली बार देखा था। स्व० श्रीराम वाजपेयी, पद्मश्री श्रीराम भारतीय के साथ किले के अन्दर हमारी ड्यूटी चेक करने आये थे। बड़े प्यार से हर वालण्टियर से मिलते, पीठ थपथपाते और धीरे-धीरे आगे बढ़ते जाते। बीच-बीच में रूक-रूककर वाजपेयी जी को व्यवस्था में अगली वार और कुछ सुधार करने हेतु नोट कराते जाते थे। हम सभी प्रसन्न थे कि हमारे टीम की सराहना हुई है।

डॉ० हृदयनाथ कुँजरू ने सम्पूर्ण भारत का दौरा किया। देश के कोने-कोने में विखरी सांस्कृतिक विरासत को गम्भीरता से देख-परखा। ठक्कर बापा के साथ-साथ वनवासियों, आदिवासियों तथा गिरिवासियों के दुर्गम क्षेत्रों में भी गये। जव हिमालय की घाटियों में पहुँचे तो वहाँ की मानवता का चीत्कार सुना। अपनी आँखों से भोले-भाले आदिवासियों का शोषण होते देखा। बहुत द्रवित हो उठे, और सबसे पहले उन्होंने उन निर्धन

जातियों को शिक्षित करने का काम उठाया। कटारमल के ठंड से ठिठुरते क्षेत्र में उन्होंने एक विद्यालय खोला। तब तक शिक्षा विभाग की वहाँ कोई पाठशाला नहीं थी। लोग जानते ही नहीं थे कि स्कूल होता क्या है? आपस में विवाह करने की प्रथा भी नहीं थी। डॉ० साहब ने एक बार बताया कि जब वहाँ पहली बार रात्रि पाठशाला में लालटेन भेजी गयी तो वहाँ चर्चा का विषय बन गयी। उसके पहले लोग लालटेन देखे ही नहीं थे। धीरे-धीरे विद्यालय खुलने लगे-शासन पर दबाव भी बढ़ता गया और विलुप्त होती 'नायक' जाति का अस्तित्व बरकरार रह गया। वहाँ के लोग डॉ० कुँजरू को एक देवता के रूप में पूजते थे।

इलाहाबाद में, पब्लिक लाइब्रेरी की शताब्दी मनाई जा रही थी। डॉ० एस०सी० देव ने जो लाइब्रेरी के अवैतनिक मंत्री थे, बहुत प्रयास करके डॉ० साहब को उत्सव की अध्यक्षता हेतु राजी कर लिया था। स्व० लाल बहादुर शास्त्री डॉ० कुँजरू को बहुत मानते थे। उनको भी समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में बुलाया था, ताकि सरकार से लाइब्रेरी के लिए कुछ अनुदान प्राप्त किया जा सके। डॉ० कुँजरू के संकेत मात्र से शास्त्री जी ने धन देने की घोषणा कर दी और खूब तालियाँ बजाई गयी। लोगों ने धन्यवाद दिया। तब डॉ० कुँजरू ने विनोद के क्षणें में कहा-देखो, हमारा ही पैसा हमको देकर उल्टा हमसे ही धन्यवाद भी ले रहे हैं। शास्त्री जी ने कहा कि आपने मुझे यह आदेश देकर बहुत बड़ा सम्मान दिया है।

सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी, इलाहाबाद से जब भारत स्काउट-गाइड का नेशनल हेड क्वार्टर नई दिल्ली चला गया तो यहाँ स्काउटिंग की गतिविधि धीरे-धीरे ढीली होने लगी। प्रान्तीय कार्यालय बलरामपुर हाउस में, एक किराये के मकान में स्थित था। उसे भी खाली कराने का प्रयास मकान मालिक की ओर से चल रहा था। डॉ० कुँजरू सेवा समिति की बैठक में भाग लेने पं० गोपाल स्वरूप पाठक के साथ यहाँ आये थे। मीटिंग के बाद जब वे स्व० पं० रमाशंकर मिश्र की जीप पर वापस लौटे तो कुछ लोगों का एक प्रतिनिधि मण्डल उनसे मिलने के लिए प्रतीक्षा कर रहा था। वे सभी डॉ० साहब से कुछ निवेदन करना चाहते थे। डॉ० कुँजरू ने बड़े आदर से उनकी बात सुनी। वे लोग भारत स्काउट गाइड उत्तर प्रदेश के लिए भवन बनाना चाहते थे। एक कालेज भी यहाँ चलाना चाहते थे। डॉ० साहब ने पूछा-"तो दिक्कत क्या है?" लोगों ने बताया कि भूमि उपलब्ध नहीं हो पा रही है। कैण्ट एरिया की बहुत सी जमीन खाली पड़ी है पर उसका मिलना सम्भव नहीं है। उन्होंने कहा-"क्यों सम्भव नहीं है? अगर खाली है तो जरूर मिलना चाहिए"। अपने प्रसास से वह भूमि उन्होंने शीघ्र ही दिलवा दी जहाँ आज भारत स्काउट एवं गाइड स्कूल अवस्थित है।

प्रयाग विश्वविद्यालय एक बार बड़ी आर्थिक कठिनाई में आ गया था। श्री हेमवती नन्दन बहुगुणा के नेतृत्व में विश्वविद्यालय के कुछ भूतपूर्व छात्र दिल्ली में डॉ० कुँजरू से मिले। एक पुरातन छात्र संघ गठित हुआ और धन संग्रह कर विश्वविद्यालय को आर्थिक सहायता दी गयी। शासन पर भी दबाव डाला गया। किन्तु डॉ० कुँजरू का कहना था कि प्रयाग विश्वविद्यालय की अपनी अलग पहचान बनी रहनी चाहिए। उनकी राय में, यह देश का सिर्फ एक विश्वविद्यालय ही नहीं है, यह देश में रत्न उत्पन्न करने वाली एक अद्‌भुत खान है। यहाँ के विद्वद्‌जनों में उनका बड़ा सम्मान था। जब डॉ० बाबू राम सक्सेना यहाँ अवैतनिक कुलपति थे, तो उन्होंने मुझसे कहा कि तुम तो डॉ० कुँजरू से बहुत अच्छी तरह परिचित हो। यहाँ किसी उत्सव में उन्हें क्यों नहीं बुलाते? 'केन्द्रीय श्रमिक शिक्षा योजना' के अन्तर्गत आयोजित समारोह में वे विश्वविद्यालय में आये। आजकल जहाँ भारतीय स्टेट बैंक है, के सामने वाले हाल में एक बहुत सादा समारोह आयोजित हुआ। केवल एक-एक कप चाय की व्यवस्था की गयी-क्योंकि उन्हें संस्थाओं में भोज देने की प्रथा से चिढ़ थी। उस दिन डॉ० कुँजरू द्वारा दिया गया ओजस्वी और सारगार्भित भाषण प्रयाग के बुद्धिजीवियों को वर्षों कुरेदता रहा।

डॉ० कुँजरू को फोटो खिंचावाने से बड़ी अरूचि थी। मुश्किल से राजी होते थे। कहते व्यर्थ समय खराब क्यों करते हो? किन्तु एक बार यहाँ के उनके शुभचिन्तकों ने मुझसे कहा कि फोटो के लिए आप उनसे कहें तो अच्छा रहेगा। ज्यादा से ज्यादा नाराज होंगे और क्या होगा। हम लोगों को उनके साथ फोटो हो जाये तो क्या हर्ज है? मैंने अनुरोध किया तो डॉ० साहब मान गये। जब सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी के लॉन में सलामी मंच के पास उन्हें खड़ाकर बगल में फूले गुलाब की एक कली उनकी शेरवानी में लगाने लगा तो बोले- 'अरे भाई यह तो जवाहर लाल लगाते हैं, मेरे क्यों लगा रहे हो'? डर के मारे मैं कुछ बोल नहीं पाया। फोटो खिंची। पीछे पं० रमाशंकर मिश्र भी खड़े हुए थे। फोटो खींचते समय अपनी नम आँखों से, डॉ० साहब ध्वज मंच पर सीमेंट से बनी 'स्वस्तिका' और 'त्रिदल कमल' को एकटक निहारते रहे। मुझे लगा उनकी जिन्दगी के एक-एक क्षण इस ध्वज मंच से पल भर में गुजर जाना चाहते हैं। फिर बहुत भारी मन से धीरे-धीरे अपने विश्राम कक्ष में चले गये। मैं नहीं जानता था कि इतिहास बनाने वाला यह महामानव भी कभी खुद इतिहास बन जायेगा और अब वह प्रयाग की धरती पर कभी वापस नहीं लौटेगा।

जब डॉ० साहब इंग्लैण्ड गये थे तो वहाँ की महारानी के अतिथि बने थे। उन्हें एक तलवार भेंट की गयी थी जो अभी भी सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी में रखी है। आज उसका एक मौन प्रश्न है कि डॉ० साहब ने तो कुछ भी नहीं लिया। मंत्री नहीं बने, "भारत रत्न" भी स्वीकार नहीं किया। तो फिर मुझे अकेले यहाँ क्यो छोड़ गये। जहाँ गये हैं वहा से क्या वे लौट नहीं सकते?

वर्षों बाद, उनके भतीजे 'चाँद भाई' उनका अस्थि कलश लेकर लौटे-संगम में विसर्जन हेतु।

साहिल करेगा याद उसी नामुराद को।
कश्ती खुशी से जिसने भँवर में उतार दी।।

सूर्य

तुम्हारी स्वार्णिम किरणें
हैं निश्छल मुस्कानों सी
किन्तु बिखर जाती हैं वो
दुनियाँ के पैमानों से
तुम अनुभवी,
समय तुमसे है
जब जैसा तुमने समझा
तब वैसा ही रूप बनाया
जब झम-झम बारिश होती
तब सब तकते थे तुमको
कब आओगे कब सूखेगी
मेरी लकड़ी और कपड़े
छनकर आती थीं उष्मा
सेवन करते थे सब उसका
आज विवश हो बैठे हो।
कलुषित मानव के हाथों से
सब बचा रहे अब अपने को
उन्हीं सूर्य की किरणों से
जिससे रुकती थी बीमारी
अब वो कारण बन बैठी है
हो गया छिद्र अब ऊपर भी
कोमलता को रौंद दिया
कर दिया प्रचण्ड सचमुच तुमको सूर्य...

डॉ० अलका शुक्ला

सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसायटी
महिला - शिशु कल्याण हेतु

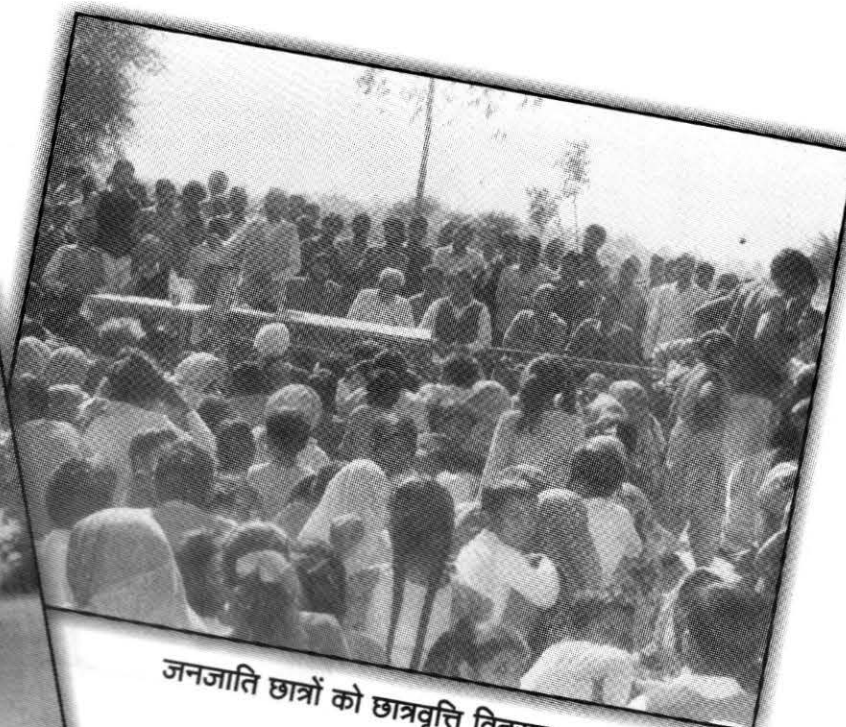

जनजाति छात्रों को छात्रवृत्ति वितरण

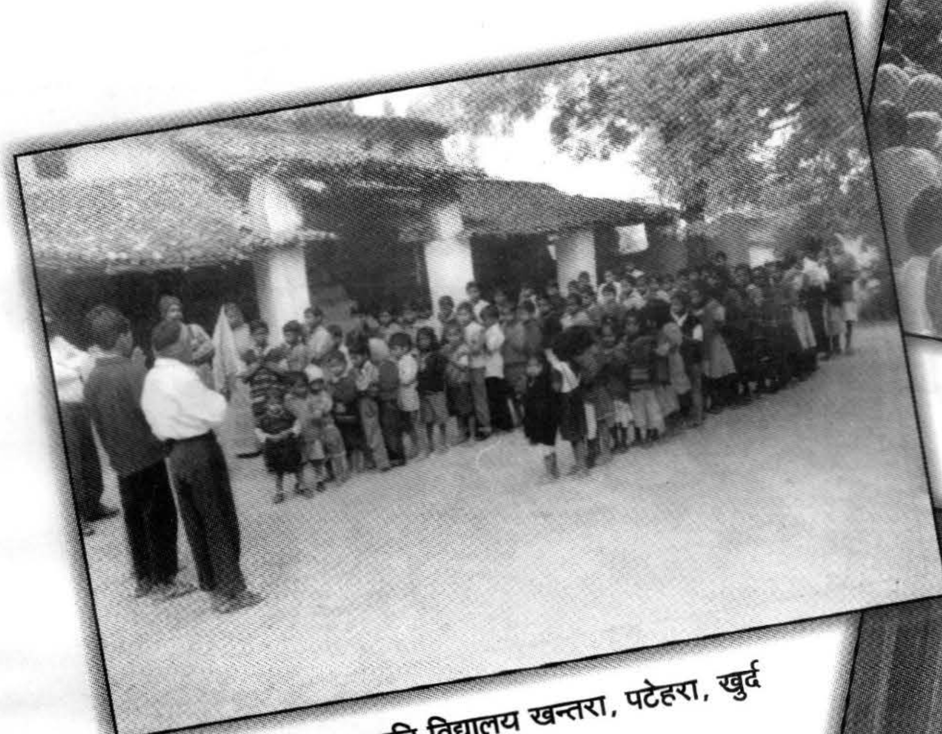

आश्रम पद्धति विद्यालय खन्तरा, पटेहरा, खुर्द
मिर्जापुर

शिशु पालन केन्द्र पिपलिया, उधसिंह नगर, उत्तरांचल

शिशु पालन केन्द्र मोहनपुर, उधमसिंह नगर, उत्तरांचल

सर्वेण्ट्स ऑफ इण्डिया सोसायटी
महिला जागरण

(सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी)

शताब्दी समारोह (एक विवरण)

विपन्नता में सम्पन्नता का संकल्प रहा 'शताब्दी समारोह' इलाहाबाद। सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी के इलाहाबाद कार्यालय परिसर में, 21, 22 और 23 फरवरी 2005 को राष्ट्र गौरव पं0 गोपाल कृष्ण गोखले के चिन्तन को जन-जन में बांटते हुये सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी ने अपनी स्थापना के 100 वर्ष पूर्ण कर लिये और तीन दिवसीय समारोह का आयोजन 1, पी0 टी0 टण्डन मार्ग इलाहाबाद सोसाइटी प्रांगण में किया गया, जिसमें शिरकत हेतु देश के विभिन्न हिस्सों से आकर वरिष्ठ समाज सेवियों ने सहभागिता करते हुये, आर्थिक विपन्नता को वैचारिक सम्पन्नता तथा अपनी दृढ़ इच्छा शक्ति से पूर्ण रूपेण बौना सिद्ध कर दिया।

माघ माह में प्रयाग की महत्ता अज्ञात नहीं है। अपना सर्वस्व समाज को समर्पित करने वाले समाज सेवियों, बुद्धिजीवियों के संगम ने प्रयाग को और भी महिमा मण्डित कर दिया है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि अदृष्य सरस्वती का पूर्ण अस्तित्व इन दिनों सोसाइटी परिसर में मूर्त रूप से मुखर रहा। सोसाइटी ने समाज के दलित, गरीब, शोषित और आदिवासी-बनवासी समाज के सर्वांगीण विकास हेतु पाँच सत्रों में गहन चिन्तन, गम्भीर मन्थन और उज्जवल परिणाम परिलक्षित किया, जिसमें छोटे भाई 'भारतीय आदिम जाति सेवक संघ' ने सहोदर धर्म का पूर्ण परिपालन किया।

प्रथम दिवस

सोमवार 21 फरवरी 2005 की भारी-भारी सुबह थी, आसमान में बादल छाये हुये थे, मौसम कभी ठंडा और कभी उमस भरा हो जाता था। सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी इलाहाबाद शाखा कार्यालय का कैम्पस, सभी कार्यकर्ता और वहाँ का पूरा वातावरण आज बेहद उमंग, जोश और उल्लासमय था। आज से 'सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी' के शताब्दी वर्ष समारोह का प्रथम आयोजन प्रारम्भ हो रहा था। मुख्य आयोजन स्थल के रूप में निर्मित विशाल हाल के ठीक पार्श्व में, यज्ञशाला निर्मित की गई थी, जहां 'महारूद्राभिषेक' के साथ 'शान्ति-हवन' द्वारा समारोह प्रारम्भ किया जाना था। पीपल के पवित्र वृक्ष के नीचे निर्मित शिव स्थान व बजरंग बली मन्दिर के पास विशाल हवन-कुण्ड बनाया गया था, जिसके चारों ओर फर्शी बिछाकर बैठने की व्यवस्थाकी गयी थी। सजी-धजी विशाल आयोजन स्थल में लगे झाड़-फानूस, सोफे कुर्सियों विशाल मंच और बड़े-बड़े लट्टू बल्बों के कारण पूरा परिदृश्य ही परी-कथाओं के भव्य महल की तरह लग रहा था। कैम्पस में लगे बहुमूल्य एवं दुर्लभ, लघु पादप, कुंज एवं पुष्प-झाड़ के साथ ही सैकड़ों की संख्या में गमलों में सजे-धजे सुरभित, सुवासित और सुदर्शित सुमन पंक्तियाँ अपनी अलग शोभा बिखेर रही थीं।

ठीक दसबजे यज्ञ-मण्डप में मुख्य यजमान सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी के उपाध्यक्ष श्री प्रेम कृष्ण द्विवेदी ने सपत्नीक प्रवेश किया, शंख व श्रृंगी की मांगलिक ध्वनि के साथ 'स्वस्ति-वाचन' करते हुये प्रमुख यज्ञाचार्य पं0 श्री राममिलन मिश्र ने अपने सहयोगी आचार्यों के साथ विधि पूर्वक यज्ञ कार्य आरम्भ किया। समारोह संचालक श्री ब्रज बिहारी मिश्र 'विराज' जी ने मुख्य यजमान श्री द्विवदी के आग्रह पर 'पति-पत्नी' का 'गठ-बन्धन' कर उन्हें 'यज्ञ-वेदी' पर बैठाया, वेद मंत्रोच्चार के मध्य 'महारूद्राभिषेक' प्रारम्भ हुआ।

तीन बजे अपरान्ह अभिषेक पूर्ण होने के उपरान्त विशाल यज्ञ कुण्ड में 'शान्ति हवन' प्रारम्भ हुआ, सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी, भारतीय आदिम जाति सेवक संघ एवं अन्य आगत मान्य सदस्य, कार्यकर्ता तथा अतिथियों यथा श्री दामोदर साहू, अमरेश तिवारी, दिनेश मिश्र, हरिशंकर शुक्ल, डा0 रामजीत शुक्ल, श्रीमती शान्ती देवी, सीमा देवी, वर्किंग वूमन हास्टल की संवासिनियों तथा अन्य ने 'हवन कुण्ड' में आहुतियाँ डाल कर निर्विघ्न समारोह पूर्ति हेतु सम्पन्न 'शान्ति हवन' में अपनी सहभागिता प्रदान की। हवनोपरान्त भव्य 'रूद्र आरती' मांगलिक वाद्य धुन के सथ समवेत 'आरती गायन', पुष्पार्चन एवं 'स्वस्ति घोष के उपरान्त किये गये 'प्रसाद वितरण' ने सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी के चार एकड़ में विस्तारित भव्य कैम्पस को एक ऐसाी दिव्यता प्रदान की, जिसे अन्तरिक्ष से निहारती गोखले, देवधर कुंजरू व अन्य देवोपम दिव्य आत्माओं ने निश्चित रूप से पूर्ण संतुष्टि के साथ आशीष प्रदान किया होगा।

इस प्रकार समारोह के प्रथम दिवस 'महारूद्राभिषेक' व 'शान्ति-हवन' का पवित्र कार्यक्रम 21-2-05 सोमवार को सायं पांच बजे सम्पूर्ण हुआ, आश्चर्य यह रहा कि सम्पूर्ण होते ही चिर-प्रतीक्षित 'जल-वृष्टि' ने सोसाइटी कैम्पस ही नहीं अपितु 'संगम स्नान' हेतु भारत के कोने-कोने से आये तीर्थ यात्रियों सहित 'प्रयाग की पावन-भूमि' को 'दिव्यात्माओं' का प्रत्यक्ष स्नेहाशीष भी प्रदान किया।

8 बजे रात्रि में श्री कृष्ण मुरारी सेठ सदस्य समारोह समिति की व्यवस्था में सामूहिक भोजन बड़े ही हर्षोल्लास से सम्पन्न हुआ। भोजनोपरान्त आमोद-प्रमोद एवं परस्पर वार्ता करते हुये, आगत लोगों ने विश्राम-शयन किया।

द्वितीय दिवस

मंगलवार 22 फरवरी 2005, सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी

के प्रयाग कार्यालय का 4 एकड़ में फैला पूरा परिक्षेत्र एक दिव्य वातवरण की अनुभूति कर रहा था, कार्यालय के सामने विशाल लान, जिसमें जगह-जगह गमलों में लगे हुये सुगन्धित और आकर्षक पुष्प पादप, चारदिवारी के किनारे सुनियोजित ढंग से लगाई गई पुष्प गुंफित बेल-लतायें, कुंज, वीथिकायें, गलियारे, भव्य व विशाल महिला छात्रावास **'सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी के सौ वर्ष'** प्रदर्शनी हेतु सुरुचि एवं कलापूर्ण ढंग से सजाया गसया 'प्रदर्शनी-मण्डप' एवं समारोह का मुख्य स्थल 'गोखले-हाल' जिसके मुख्य द्वार पर श्री गोपाल कृष्ण गोखले, श्री अमृत लाल ठक्कर बापा, श्री हृदय नाथ कुंजरू एवं पं0 रमा शंकर मिश्र के विशाल पट-चित्र अपनी भव्यता से आगन्तुकों को बरबस अपनी ओर आकर्षित कर वहाँ ठहरने के लिये विवश कर रहे थे। सम्पूर्ण हाल अपनी पूर्ण गरिमा, भव्यता और विशाल मंच के सामने लगे सुरुचिपूर्ण कलात्मक सोफे, कुर्सियों और दरी-कालीनों के माध्यम से शोभायमान हो रहा था। जगह-जगह लगे 'प्रकाश-स्तम्भ' रंगबिरंगी 'विद्युत लतरें', आकर्षक आदर्श-वाक्य एवं 'स्लोगन' अंकित 'वस्त्र-पट्टिकाओं' ने मानों सम्पूर्ण परिसर को उसके गौरवपूर्ण शताब्दी समारोह हेतु पूर्ण उत्साह एवं भव्यगरिमा प्रदान कर दी हो।

वैसे तो रात से ही भारत के दूरस्थ क्षेत्रों यथा पूने, उड़ीसा, नागपुर, पांडेचेरी, उत्तरांचल , गुजरात, महाराष्ट्र, हिमांचल, झारखंड, असम, आन्ध्र और मध्य प्रदेश इत्यादि से सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी और भारतीय आदिम जाति सेवक संघ के नर-नारी, कार्यकर्ताओं का इलाहाबाद समारोह स्थल पर पहुँचना प्रारम्भ हो चुका था किन्तु प्रातः दिन निकलते-निकलते पूरा परिसर भर चुका था।

प्रातः 8.00 बजे 'चाय-जलपान' की उद्घोषणा होने पर अपने अपने निर्धारित आवास कक्षों से जब सभी कार्यकर्ता एवं कार्यकत्रियाँ लान में इकट्ठे हुये, ऐसा लगने लगा जैसे सम्पूर्ण हिन्दुस्तान आज 'सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी के इलाहाबाद कार्यालय परिसर में एकत्रित हो उठा है। चाय पीते, जलपान करते सभी कार्यकर्ता नर-नारी एक दूसरे से परिचय प्राप्त करते, पूर्व परिचय को प्रगाढ़ता देते, झुण्डों में इधर उधार यत्र-तत्र बिखरे, बतियाते, हंसते-गाते, ऐसे लगरहे थे जैसे प्रयाग की त्रिवेणी गंगा-यमुना-सरस्वती' अपना निश्चित पूर्व स्थान छोड़कर कार्यालय परिसर में ही आ गई हो, संगम हेतु, हिन्दुस्तान के संगम हेतु कितना अनुपम्, अपूर्व और भव्य था वह दृष्य।

अपने पूर्व निश्चित समय, ठीक 10 बजे पूर्वान्ह, माननीय श्री पी0पी0 श्रीवास्तव आई.ए.एस. (अवकाश प्राप्त) एवं माननीय श्रीमती रेणुका अप्पादुराई (पांडिचेरी) के सम्मिलित कर कमलों से **'सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी के सौ वर्ष'** प्रदर्शनी का 'फीता' काटकर उद्घाटन किया गया। शंख की मंगल ध्वनि, पुष्पवृष्टि एवं हर्षोल्लास से, शताब्दी समारोह के द्वितीय दिवस का प्रथम कार्यारम्भ हुआ। प्रदर्शनी में आदि से लेकर वर्तमान तक 'सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी' के उद्भव, उसके जनक, उसके सहयोगी, उसकी शाखाओं, शाखाओं के कार्य, नारी जागरण, शिशु-कल्याण, आदिवासी जन जाति के मध्य, शिक्षा, चिकित्सा, विकास यात्राओं सहित, अन्यान्य अछूते और सामान्य रूप से सर्वथा अदृश्य उन पहलुओं को भी ऐतिहासिक व दुर्लभ छायाचित्रों के माध्यम से उजागर किया गया जो **'सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी'** के लिये ही नहीं, अपितु भारतीय विकास यात्रा को जीवन्तता प्रदान करने वाले रहे।

प्रदर्शनी अवलोकन का सिलसिला बढ़ता गया, ताँता लगा हुआ था दर्शकों का, छाया चित्रों के अवलोकन और उससे प्राप्त पूर्व से तुष्टि स्पष्ट रूप से दर्शकों के मुख पटल पर अंकित नजर आ रही थी। प्रदर्शनी में सोसाइटी के उपाध्यक्ष श्री प्रेम कृष्ण द्विवेदी की प्रेरणा, श्री ओम प्रकाश जी के निदेशन एवं श्री व्रजबिहारी मिश्र 'विराज जी', श्री ओम दत्त सिंह जी,श्री अमरेश तिवारी जी के अथक प्रयास का प्रत्यक्ष परिणाम, दर्शकों की पूर्ण संतुष्टि एवं सराहना के रूप में प्रकट हुआ।

समारोह के संयोजक श्री श्याम मनोहर जी ने माननीय श्री पी0 पी0 श्रीवास्तव, श्रीमती रेणुका अप्पा दुराई, श्रीमती धनेश्वरी घिल्डियाल एवं महामान्य श्री वी0 एल गौड़ (अध्यक्ष), श्री पी0 सी0 किसकू, श्री नीलू चौधरी, श्री दामोदर साहू, श्री आर0 सी0 रोझे, श्री डी0 डी0 मार्को, श्री ए0 के0 चौबे, श्री त्रिवेणी प्रसाद द्विवेदी सहित अन्यान्य गणमान्य अतिथियों का स्वागत करते हुये समारोह की सफलता में उनके योगदान हेतु धन्यवाद ज्ञापित किया।

भोजनोपरान्त श्री कृष्ण मुरारी सेठ के सहयोग से निर्मित 'गोखले हाल' के भव्य सभागार में दि0 22.2.05 के शताब्दी समारोह का दूसरा चरण प्रारम्भ किया गया।

शताब्दी समारोह के संचालक **'श्री बिराज जी'** ने समारोह के चेयरमैन श्री प्रेमकृष्ण द्विवेदी एवं संयोजक श्री श्याम मनोहर जी की अनुमति से समारोह के द्वितीय चरण का कार्यारम्भ सर्वश्री वी0 एल0 गौड़ (अध्यक्ष, भा0आ0जा0संघ) को समारोह की अध्यक्षता हेतु मन्चासीन होने के आग्रह से किया, समारोह संयोजक श्री श्याम मनोहर जी ने ससम्मान उन्हें अध्यक्ष पीठ पर बैठाया। तत्पश्चात श्रीमती धनेश्वरी धिल्डियाल (चेयरमैन राज्य समाज कल्याण बोर्ड उत्तरांचल) को मुख्य अतिथि पीठ पर एवं क्रमशः सर्वश्री पी0 सी0 किसकू (पूर्व सांसद, बिहार), श्री पी0 पी0 श्रीवास्तसव (पूर्व आई0ए0एस0) दिल्ली, श्री नीलू चौधरी कोषाध्यक्ष, (नागपुर), श्रीमती रेणुका अप्पा दुराई (पाण्डीचेरी), श्री पी0 के0 द्विवेदी उपाध्यक्ष (एस0आई0एस0), श्री दामोदर साहू (वरिष्ठ सदस्य, एस0आई0एस0) को ससम्मान संयोजक महोदय द्वारा पीठासीन कराया गया।

सभा संचालक श्री 'बिराज जी' के आग्रह पर मुख्य अतिथि श्रीमती धनेश्वरी धिल्डियाल, अध्यक्ष श्री बनवारी लाल गौड़ एवं अन्य माननीय मंचासीन महानुभावों ने 'दीप प्रज्वलित' कर सभा प्रारम्भ की औपचारिकता पूर्ण की। माल्यार्पण, बैज अलंकरण, राष्ट्रगीत एवं स्वागत गीत के उपरान्त, 'शताब्दी समारोह' के अवसर पर प्रकाशित **'गोखले**

स्मृति ग्रन्थ' जिसका सम्पादन व कलेवर निर्माण ब्रज बिहारी मिश्र 'बिराज जी' द्वारा किया गया था, के विमोचन का शुभ अवसर आया। श्रीमती धनेश्वरी धिल्डियाल की अगुवाई में मंचासीन मान्य अतिथियों, संयोजक एवं सम्पादक महोदय ने सम्मिलित रूप से **'गोखले स्मृति-ग्रन्थ'** का विमोचन किया। सम्पूर्ण सभागार तालियों की गड़गड़ाहट, हर्ष निनाद एवं कैमरों की फ्लैशलाईट से चमचमा उठा। दर्शक दीर्घा में **'स्मृति-ग्रन्थ'** को दर्शक वृन्द को सौंपने के उपरान्त, सह सम्पादक श्री डा0 रामजीत शुक्ल (एसोसियेट सदस्य सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसायटी) व श्री डा0 सुरेश चन्द्र द्विवेदी (प्रोफेसर आंग्ल भाषा, प्रयाग वि0 वि0) ने **स्मृति ग्रन्थ** का जोरदार स्वागत करने हेतु सबको धन्यवाद व इसकी उपयोगिता के बारे में अपने विचार प्रस्तुत किये। सम्पादक श्री 'बिराज जी' ने **'स्मृति-ग्रन्थ'** का सम्पादकीय अंश पढ़ते हुये वर्तमान परिप्रेक्ष्य में समाज के जागरण हेतु, अपने अतीत गौरव का पुनः स्मरण करने की सलाह दी।

राज्य समाज कल्याण बोर्ड उत्तरांचल की अध्यक्ष व समारोह की मुख्य अतिथि श्रीमती धनेश्वरी धिल्डियाल ने मुख्य अतिथि पद से बोलते हुये कहा- ''समाज सेवा के लिये 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' संवेदना का होना आवश्यक है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में आवश्यक है कि देश की समाज सेवी संस्थाओं का ध्रुवीकरण हो, जिससे आपसी भाईचारा उत्पन्न होगा और संयुक्त प्रयास से ही समाज के अन्तिम व्यक्ति तक विकास को पहुँचाया जा सकता है।'' उन्होंने देश की सेवा में कार्यरत समाजसेवी संगठनों और सरकारी विभाग की तुलना करते हुये स्वैच्छिक संगठनों की भरपूर सराहना की। उन्होंने अपने संस्मरण सुनाते हुए कहा –''उत्तरांचल के जनपद उधमसिंह नगर में 'बुक्सा' जनजाति के मध्य जब गई थी तो एक महिला से मैंने पूछा, 'तुम्हारे कितने बच्चे हैं?' तो उसने बड़े गर्व से कहा, 'एक बेटी है जो पढ़ लिखकर तीन हजार रुपये कमा रही है।' उसके आत्म गौरव से जहाँ मुझे प्रसन्नता हुई वहीं जिज्ञासा भी जगी और पूछा कि 'बेटी को पढ़ाने की प्रेरणा कहां से मिली?' उसने तपाक से कहा- 'बुक्सा छात्रावास वाले श्री द्विवेदी जी से।' मैं श्री द्विवेदी को धन्यवाद देने के साथ ही आपसे बताना चाहती हूँ कि श्री द्विवेदी जी वर्तमान में 'सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी' के उपाध्यक्ष हैं, जो उत्तरांचल तथा उत्तर प्रदेश के क्रमशः उधमसिंह नगर, लखीमपुर, खीरी, बलरामपुर, बहराइच जनपदों में आवाह, बुक्सा, थारू, भोटिया, जैनसारी, राजी और गोंड़ आदि जनजातियों के शैक्षिक विकास में, विगत तीन दशकों से अथक प्रयास कर रहे हैं।' श्रीमती धिल्डियाल ने सोसाइटी के सेवा कार्य की भरपूर सराहना करते हुये हर सम्भव मदद देने का आश्वासन प्रदान किया। **स्मृति-ग्रन्थ** के कलेवर व उसकी उपयोगिता के सन्दर्भ में उन्होंने अत्यधिक प्रशंसा करते हुये कहा- 'निश्चित्र रूप से लेखन के माध्यम से समाज को संदेश व निवेदन का यह **'गोखले स्मृति-ग्रन्थ'** अद्भुत प्रयास है, मैं चाहूँगी यह परम्परा रूके नहीं चलती रहे, चलती रहे...। मैं इसके साथ हूँ...रहूँगी...।''

श्री दामोदर साहू, नीलू चौधरी जी, श्री किसकू जी, श्रीमती रेणुका अप्पा दुराई जी, श्री पी0 पी0 श्रीवास्तव जी और श्री श्याम मनोहर जी ने भी गद्‌गद् कण्ठ से अपने उद्‌गार व्यक्त करते हुये **'शताब्दी समारोह'** के आयोजन एवं उसमें सहभागिता हेतु आयोजक मण्डल की प्रशंसा, साधुवाद एवं धन्यवाद ज्ञापित किया।

समारोह के अध्यक्ष श्री बनवारी लाल गौड़ (अध्यक्ष, भारतीय आदिम जाति संघ) ने अपने अध्यक्षीय वक्तव्य में कहा- ''आदिवासी क्षेत्रों में कार्य करने को अभी बहुत कुछ शेष है। आदिवासियों के पलायन को रोकने तथा उनको समृद्ध बनाने हेतु, समाज सेवियों को पूर्ण निष्ठा से प्रयास करने की आवश्यकता है।'' समारोह की भव्यता एवं उपयोगिता पर उन्होंने अति प्रसन्नता व्यक्त करते हुये कहा- ''सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी'' ''भारतीय आदिम जाति सेवक संघ'' के बड़े भाई के रूप में है, हम एक हैं, हमारा उद्‌गम एक है, हमारा वर्तमान एक है और भविष्य भी एक रहेगा।''

अन्त में समारोह आयोजक श्री पी0 के0 द्विवेदी ने समारोह के सफल आयोजन में सब की भागीदारी, उनकी सेवाओं और सहयोग हेतु धन्यवाद ज्ञापित करते हुये समारोह संचालक श्री 'बिराज जी' से आग्रह किया कि समारोह के इस सत्र की समाप्ति घोषित करें।

संचालक महोदय ने समारोह के द्वितीय सत्र की समाप्ति घोषित करते हुये, सभी महानुभावों से जलपान एवं भोजनोपरान्त, तृतीय सत्र जो **'रंगा रंग सांस्कृतिक संध्या'** के रूप में, इसी सभागार में रात्रि 8 बजे से प्रारम्भ होगा, सहभागिता हेतु आमन्त्रित किया।

***

समारोह संचालक **'श्री बिराज जी'** ने ठीक 8 बजे रात्रि जब माइक से सभागृह में पहुँचने की अपील की, उस समय सोसाइटी के अनुपम लान में, हिन्दुस्तान के विभिन्न प्रान्तों, गिरि-बन-कन्दर गाँव व नगर से आये लोग भोजन करके इधर-उधर गप-शप कर रहे थे।

देखते ही देखते लाल-कार्पेट-लाल-सोफों और लाल-कुर्सियों से सजा, 'गोखले-सभागृह' अनुशासित नर-नारियों से भर गया, स्थान-स्थान पर बिजली के बड़े-बड़े 'हंडे', 'प्रकाश-लहरें', 'ध्वनि-विस्तारक' और 'विशाल-रंगमन्च' की भव्यता सम्पूर्ण-सभागृह को अनुपम छटा प्रदान कर रही थी, तभी... ध्वनि विस्तारक से आवाज गूँजी...'' स्वागत-स्वागत-स्वागत, सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी के शताब्दी समारोह में, शिरकत करने आये अपने प्यारे देशवासी नर नारियों का इस **' सांस्कृतिक रंगारंग-संध्या'** में हार्दिक अभिनन्दन, कृपया शान्त हो जायें।''

सम्पूर्ण सभागृह एकदम शान्त पिन ड्राप-साइलेन्ट' |वाह! क्या अनुशासन था। 'बिराज जी' की आवाज फिर गूंजी---'' अब मैं व्यवस्थापक एवं संयोजक महोदय से चाहूँगा कि वे सांस्कृतिक संध्या को गति देने की अनुमति प्रदान करें।'' संयोजक श्री श्याम मनोहर जी एवं व्यवस्थापक श्री प्रेमकृष्ण द्विवेदी जी ने हाथ उठाकर संचालन की

अनुमति प्रदान की।

श्रीमती धनेश्वरी धिल्डियाल जी द्वारा 'सांस्कृतिक संध्या' की सभा नेत्री का आसन स्वीकार करते ही सम्पूर्ण सभागृह करतल ध्वनि से गूँज उठा... और प्रारम्भ हो गई रंगा रंग सांस्कृतिक कार्यक्रम की प्रथम प्रस्तुति- 'कला-देवी', माँ सरस्वती की वन्दना इण्डियन गर्ल्स इण्टर कालेज इलाहाबाद की छात्राओं द्वारा, निदेशिका थी कु0 शोभा सरकार...। प्रथम प्रस्तुति ने ही सम्पूर्ण दर्शक दीर्घा को 'मन्त्र-मुग्ध' कर लिया और जब बन्दना सम्पूर्ण हुई तब से लेकर **'सांस्कृतिक-संध्या'** के अन्त तक 'करतल ध्वनि' की लयबद्ध ताल ने, सभा गृह ही नहीं, सोसाइटी परिसर ही नहीं! ध्वनि विस्तारक से जहाँ तक ध्वनि जाती रही वहाँ तक सम्पूर्ण नगर को आह्लादित कर दिया।

उत्तरांचल के 'थारू' और 'बुक्सा', सोनभद्र, मिर्जापुर से गिरि अंचलों के आदिवासी समूह, असम, झारखण्ड और छत्तीसगढ़ के एक से एक कलाकार, एक से बढ़कर एक प्रस्तुतियाँ, 'करमा-नृत्य', धांगड़ नृत्य, बनान्चलों की 'पारम्परिक वेष-भूषा में नर्तक एवं नर्तकियों द्वारा प्रस्तुत 'होली' 'विश्रान्ति' एवं 'देव-पूजा' जैसी अनेक मंत्र मुग्ध कर देने वाली प्रस्तुतियों ने ऐसा लुभावन दृश्य उपस्थित कर दिया कि सम्पूर्ण 'सभा-गृह' खुद ब खुद झूमने लगा और उस समय तो वक्त जैसे स्वत: ठहर गया, जब सभानेत्री श्रीमती धनेश्वरी धिल्डियाल जी स्वत: अपने आसन से उठी और नर्तकियों के समूह में घुसकर उनके साथ हाथ में हाथ दे, मृदंग, झांझर और डफ की ताल पर पैर थिरकाते हुये नृत्य करतने लगीं, दर्शक दीर्घा में किशोर, युवा, वृद्ध, नर और नारी सम्भवत: ऐसा कोई भी नहीं था जिसका दिल न नाच रहा हो जिसके पैर न ताल दे रहे हों, उमंग-उल्लास अद्भुद... अलौकिक... वाह!

और ऐसे ही साज बजते रहे, गीत होते रहे, पैर थिरकते रहे, सुगन्धि फैलती रही- तभी समारोह संचालक श्री बिराज जी की जादुई आवाज गूँजी- "बस-बस-बस बहुत हुआ... दिल पर काबू करिये... पैर की थिरकन रोकिये... रात बहुत बीत गई, बात बहुत हो गई... चलिए अब उठ जायें, नींद के आगोश में खो जायें..." लोगों ने अपनी कलाई घड़ी पर निगाह डाली रात के बारह बज रहे थे। आठ से बारह कब बीता किसी को पता ही नहीं। आवाज फिर गूंजी- "हां तो दोस्तो... आज की सांस्कृतिक संध्या को, यहीं विराम दीजिये, कल फिर मिलेंगे..., यहीं मिलेंगे..., ऐसे ही मिलेंगे..., धन्यवाद, शुभ रात्रि, अहो रात्रि।"

अन्तिम दिवस

सम्भवत: उत्तरांचल के किसी थारू गायक ने लम्बी तान में किसी पहाड़ी, लोकगीत की धुन छेड़ी थी, नींद खुल गई, देखा ऊषा की पहली किरन परिसर में पहुँच गई थी, उठकर बाहर आया। बहुतायत से खिले हुये। गुलाब के फूलो की बड़ी ही लुभावनी सुगन्ध थी, लान की ओर देखा, लोग बाग टहल रहे थे, नलों पर कुछ लोग नहा भी रहे थे, मतलब चहल-पहल हो गई थी, जागरण हो गया था, नित्य क्रिया, स्नान, ध्यान में लगे लोग शीघ्रता से अन्य के लिये स्थान खाली कर रहे थे। पोर्टिको की ओर निगाह गई देखा श्री श्याम मनोहर जी व श्री पी0 के0 द्विवेदी जी आपस में बातें कर रहे थे सबके चेहरे पर ताजगी थी, रतजगे का कोई नामोनिशान नहीं था। एकाएक अन्दर की ओर से बहुत जोर से सम्मिलित अट्टहास की ध्वनि सुनाई दी, मैं जल्दी से अन्दर आया तो देखा- रोज की तरह श्री अमरेश चन्द तिवारी जी ट्रे में चाय की प्याली लिये दशरथ से कुछ कह रहे थे। श्री दामोदर साहू श्री दिनेश मिश्र और श्री मिलिन्द देशमुख सम्मिलित रूप से हंस रहे थे, मैंने भी चाय की प्याली लिया, बगल निगाह डाला, देखा डा0 रामजीत शुक्ल जी पद्मासन में चौकी पर बैठे, सिर रजाई से ढके ध्यानस्थ थे, मैं भी जल्दी से चाय पीकर बाथरूम में घुस गया।

आठ बजे चाय-जल पान के लिये सभी लोग लान में एकत्रित हुये, थे। मैं भी उधर ही बढ़ा। साथ में श्री प्रेम कृष्ण जी, श्री श्याम मनोहर जी, श्री दामोदर साहू और डा0 रामजीत शुक्ल भी थे। देखता हूं श्रीमती धिल्डियाल, श्रीमती रेणुका जी और श्रीमती लक्ष्मी देवी द्विवेदी (पत्नी श्री पी0 के0 द्विवेदी) एक ओर खड़ी हंस-हंस कर बातें कर रही थीं। मैं उधर ही बढ़ गया, पूछा "आप लोगों ने चाय पी।" श्रीमती द्विवेदी ने हंसते हुये कहा "वाह साहब, वाह! अच्छी रही, क्या आपने पी ली है।" बड़े जोर का ठहाका लगा, मैंने कहा "अरे वाह, आप लोगों के बगैर अकेला कैसे पीता, आइये साथ पियेंगे।" इसी प्रकार पूरे लान में लोग हंसते-बतियाते जलयान कर रहे थे चाय पी रहे थे, समय बीतता चला जा रहा था और...।

9 बज गये, शताब्दी समारोह के अन्तिम दिन के प्रथम सत्रारम्भ की घड़ी-ध्वनि विस्तारक से संचालक की घोषणा "कृपया सभी प्रतिनिधि, कार्यकर्ता और अभ्यागत अतिथि महोदयान, सभागार में पहुँचने का कष्ट करें।" सभागार देखते ही देखते भर गया, मान्य अतिथियों ने व्यवस्था से पूर्ण सहयोग करते हुये, अपना अपना आसन ग्रहण किया।

आज के सभा की अध्यक्षता माननीया श्रीमती धनेश्वरी धिल्डियाल के द्वारा सम्पन्न हुई। श्री बनवारी लाल गौड़, श्री नीलू चौधरी, श्री प्रेम कृष्ण द्विवेदी, श्री किसक् जी, श्रीमती रेणुका जी, श्री पी0 पी0 श्रीवास्तव जी, श्री दामोदर साहू और श्री शम मनोहर जी ने तथा देश के सुदूर अंचलों से आये प्रतिनिधियों, कार्यकर्ताओं, कार्य कर्त्रियों और समाज सेवक-सेविकाओं ने भव्य सभागार को अपनी उपस्थिति से और भी गरिमा प्रदान की।

माल्यार्पण-राष्ट्र गीत (वन्दे मातरम्) और देशगान के उपरान्त संयोजक महोदय के निर्देशानुसार 'परिचय सत्र' के रूप में संचालक द्वारा मान्य अतिथियों और समाज सेवियों को साग्रह मंच पर बुलया जाता रहा- वक्ता अपना परिचय-कार्यक्षेत्र और योजनाओं की जानकारी देते, समारोह के आयोजन पर अपने विचार प्रस्तुत करते और यह क्रम लगभग मध्यान्ह 12 बजे तक चलता रहा। इसी क्रम में मंचस्थ मान्य अतिथियों ने **'सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी'** एवं **'भारतीय आदिम जाति सेवक संघ'** सहित स्वतंत्रता प्राप्ति पूर्व की सभी

स्वयंसेवी संस्थाओं को एक 'प्लेट फार्म' पर आंकर 21वीं शताब्दी की नूतन समस्याओं और नूतन कार्यक्रमों को नूतन परिवेश में नूतन विचारों के माध्यम से शक्तिशाली, सुखद, सर्वोत्तम और अभिनव भारत के निर्माण हेतु, संगठित होने का आह्वाहन किया, जिसे करतल ध्वनि के माध्यम से विपुल समर्थन प्राप्त हुआ।

भारतीय आदिम जाति सेवक संघ के अध्यक्ष श्री बनवारी लाल गौड़ ने कहा- "आदिवासी क्षेत्रों में काम करने के लिये अभी बहुत कुछ शेष है। आदिवासियों के पलायन को रोकने तथा उन्हें शिक्षित संभ्रान्त और समृद्ध बनाने हेतु समाज सेवियों को पूर्ण निष्ठा से प्रयास करने होंगे।"

श्री नीलू चौधरी जी ने और श्री रोझे जी ने अपने अनुभवों, समस्याओं और जिज्ञासाओं को श्रोताओं के साथ बांटते हुये कुछ कर गुजरने की प्रबल इच्छाशक्ति का प्रत्यक्ष दर्शन अपने उद्बोधन में कराया।

श्रीमती धिल्डियाल ने अपने उद्बोधन में कहा- "...मैंने यहाँ कुछ ऐसा देखा है, कुछ ऐसा पाया है और कुछ ऐसा लेकर जा रही हूँ जैसा न मैंने पहले देखा, न पाया और न लेकर गई, मैं धन्य हूँ... मैं गदगद हूँ... मैं आपके प्रत्येक संकल्प में आपके साथ हूँ... यह मेरा वादा है...।"

सत्र भावनात्मक होता जा रहा था, विचार मन्थन गम्भीर होता जा रहा था, तब तक संचालक ने घोषणा की "अब मैं इस **परिचय सत्र** के अवसान और **'भोजन सत्र'** के प्रारम्भ हेतु आप सभी को भोजनकक्ष में चलने के लिये आमन्त्रित करता हूँ।" – समय था डेढ़ बजे मध्यान... और...।

❋❋❋

अपरान्ह के तीन बज रहे थे, जब संचालक ने ध्वनि विस्तारक से, लोगों को सभागार में आमन्त्रित किया, 'सभागार' में, यह **'सम्मान-सत्र'** था।

पुन: वही औपचारिकता, वही सभागार, वही लोग, तब सम्पूर्ण सभागार तालियों की अनवरत गड़गड़ाहट से, जीवन्त हो उठा, जब समारोह संयोजक श्री श्याम मनोहर जी (महासचिव, भारतीय आदिम जाति सेवक संघ) ने **'शाल'** और **'स्मृतिचिन्ह'** प्रदान करते हुये मंचस्थ श्रीमती धनेश्वरी घिल्डियाल, श्रीमती रेणुका अप्पा दुराई, श्री बनवारी लाल गौड़, श्री प्रेम कृष्ण द्विवेदी, श्री नीलू चौधरी, श्री पी0 सी0 किसकू, श्री दामोदर साहू, श्री पी0 पी0 श्रीवास्तव, श्री बंसल जी और समारोह संचालक ब्रज बिहारी मिश्र **'बिराज जी'** को क्रमशः सम्मानित किया। तालियों की गड़गड़ाहट उस समय तो चरम पर पहुँच गई जब सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी उड़ीसा ब्रान्च के वरिष्ठ सदस्य श्री दामोदर साहू ने- समारोह संयोजक माननीय श्री श्याम मनोहर जी के सौम्य व्यक्तित्व को **'शाल-स्मृतिचिन्ह'** प्रदान कर सम्मानित किया।

पुनश्च **'अंगवस्त्रम्'** एवं **'स्मृति चिन्ह'** प्रदान करते हुये डा0 रामजीत शुक्ल, डा0 सुरेश चन्द्र द्विवेदी सहित- **'सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी'** के उन कार्यकर्ताओं और सोसाइटी की संस्थाओं से पढ़कर निकले उन विद्यार्थियों को जो आज विभिन्न उच्च पदस्थ अधिकारियों के रूप में देश सेवा कर रहे हैं, को क्रमशः **'सर्व इण्डिया गौरव'** तथा **'सर्व इण्डिया पुत्र'** के प्रमाण पत्रों से, मंचस्थ मान्य अतिथियों द्वारा एक-एक कर सम्मानित किया गया, जिनका परिचय संचालक द्वारा क्रमश: दिया जाता रहा और तब सम्पूर्ण सभागार अभिभूत हो गया, **'सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी'** का सम्पूर्ण परिसर झूम उठा, जब श्री नीलू चौधरी (राष्ट्रीय कोषाध्यक्ष, भारतीय आदिम जाति सेवक संघ) की अगुवाई में समवेत स्वर से सम्पूर्ण सभागार ने 'संकल्प-गीत' **"जय जगत, जय जगत, जय जगत पुकारता..."** उच्च स्वर में, पूर्ण मनोयोग एवं हृदय से गाया।

सांयकाल हो रहा था, समय था साढ़े पांच अपरान्ह **'सम्मान-सत्र'** को विराम दिया गया- इस घोषणा के साथ- **"अब आप लोग विश्राम करें, फ्रेश हों, गप-शप करें, भोजन करें... हम फिर मिलेंगे, यहीं इसी सभागार में, रात्रि को ठीक आठ बजे 'झूमने-झूमाने' के लिये 'नाचने-नचाने' के लिये... तैयार होकर मिलियेगा।"**

अन्तिम सत्र

आज हवा में कुछ सिहरन थी। आसमान में हल्के-हल्के बादलों का बनना-बिगड़ना चालू था। कुछ लान में, कुछ पोर्टिकों में, कुछ सभागार में दो-दो, चार-चार के झुण्डों में बैठे लोग, आपस में चहल कदमी, वार्ता या ठिठोली कर रहे थे। भोजन लगभग सभी कर चुके थे... तभी ध्वनि विस्तारक से चिर परिचित आवाज सुनाई दी "हां तो हम आ गये, आइये आप भी आ जाइये... घड़ी देख लीजिये आठ बजने में कुछ ही मिनट तो बाकी है... आप अपना स्थान सुरक्षित कर लें...।" लोगों का हुजूम सभागार की ओर खिसकने लगा...। माइक से फिर आवाज गूंजी... "देखिये रंगमंच के दायीं ओर की पूरी गैलरी आरक्षित है कलाकारों के लिये... कृपया वह स्थान सुरक्षित छोड़ दें... महिलायें हाँ! रंगमंच के बायीं ओर गैलरी में लगी कुर्सियों पर... और सभी पुरुष वर्ग रंगमंच के ठीक सामने वाली कतारों में बैठें... आगे के सोफों की दो कतारें विशिष्ट अतिथियों...।"

एक अनुशासित व्यवस्था की चुस्त-दुरुस्त बानगी, भर गया पूरा सभागार, "कुर्सियाँ कम पड़ रही हैं और कुर्सियाँ लगवा दीजिये- 'यहाँ इधर...उधर... सामने की मेज हटा दीजिये... मंच पर हाँ हाँ... भई दाहिनी ओर वाद्य कलाकारों को बैठाइये... बस-बस आगे नहीं...।"

सभी अतिथि अपने अपने स्थान पर बैठ गये। संयोजक श्री श्याम मनोहर जी आयोजन प्रमुख श्री द्विवेदी जी के साथ बातें करते हुये संचालक बिराज जी के पास पहुँचे, माइक बन्द कर 'बिराज जी' ने

इनसे कुछ बातें की। दोनों व्यक्ति वापस अपनी सीट पर आकर बैठ गये.... 'हाँ तो अब हम...' माइक से संचालक की आवाज फिर गूंजने लगी... 'फिर ले चलते हैं आपको सुरों की दुनियाँ में, जहाँ आप होंगे, हम होंगे, सिहरन होगी, थिरकन होगी... और होगी कच्ची माटी की मादक सुगन्ध... लेकिन सबसे पूर्व मैं गुजारिश करूँगा श्रीमती धनेश्वरी घिल्डियाल जी से की आज की **'सांस्कृतिक संध्या'** को सौम्य अनुशासन देने हेतु प्रमुख आसन्दी ग्रहण करें।'' सम्मिलित रूप से श्री प्रेमकृष्ण द्विवेदी और श्री श्याम मनोहर जी ने श्रीमती घिल्डियाल को प्रमुख आसन्दी पर बैठाया, माल्यार्पण किया और सरस्वती वन्दना के साथ प्रारम्भ हो गई। रंगा-रंग सांस्कृतिक संध्या की बानगी दर बानगी, रंग पर रंग, गीत पर गीत, झांझर, मृदंग, डफ, घुंघरु, हारमोनियम, तालियाँ, वाह, वाह...। **'सर्वेन्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी'** के शताब्दी समारोह के अन्तिम सभा की **सांस्कृतिक संध्या**, आदिम जन-जातियों के, **थारू-नृत्य**, **होली नृत्य**, **करमानृत्य**, **धांगरी नृत्य** और **धासिया नृत्य** की विभिन्न प्रस्तुतियों ने जहाँ सम्पूर्ण सभागार को मादक प्रफुल्लता दी वहीं वह अपनी पहचान की अकुलाहट भी नहीं छिपा सकी-यह परम्परागत थिरकन, ये सदियों से चले आ रहे सुर और अलाप कहीं अपने आपको खो तो नहीं रहे हैं...? क्या ये सुरक्षित रह पायेंगे...? यह प्रश्नचिन्ह ही तो विचारणीय हैं।

और तभी आक्रमण हुआ जोरदार सांस्कृतिक आक्रमण डा0 कुंजरू जूनियर हाईस्कूल इलाहाबाद की किशोरी छात्रा कु0 सोनाली का **''ए बहिनी दीदी तोहार बलम कैसा?...'' और ''निबुड़ा निबुड़ा निबुड़ा'...''** पर किया गया बेमिसाल नृत्य जिसने पूरे सभागार को मंत्र मुग्ध ही नहीं किया ऐसी उत्तेजना दी की उनकी जेबों से खुद-बखुद सौ-सौ, पचास-पचास के नोट छिटककर बाहर आने लगे...।

वृन्दाबन में कृष्ण की वंशी ने मंत्र मुग्ध किया था गोपियों को और आज श्री डी0डी0 मार्को की **वंशी धुन** ने सम्मोहित किया सभा मण्डप को, मंत्र मुग्ध श्री दामोदर साहू वंशी धुन से खिंचे खुद व खुद मंच पर आ गये और होने लगा गायन... **'बँसरी-बँसरी'**... थिरकने लगे उनके पैर फिर क्या था... एक नहीं... दो नहीं... चार... पांच... छः... और अनेक हाथों से तालियाँ, पैरो से थिरकन, वाह सभी..., पूरा सभागार... नाचने लगा-वाह क्या दृष्य था?... क्या उल्लास था?... क्या उमंग थी?... अवसर था **'सर्वेन्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी'** के **'शताब्दी समारोह'** का...।

समय तो रूकता नही-घड़ी की टिक-टिक सूइयों का रेंगना होता रहा, अर्द्ध रात्रि का समय आ गया, 12 बज गये, अब तो समापन की बेला आ गई, लोग उठना नहीं चाहते थे, लेकिन उठना तो था ही. .. बड़े भारी मन से **'उद्घोषक'** ने श्रीमती घिल्डियाल से आग्रह किया, कि वे समारोह समापन की घोषणा करने का कष्ट करें-

श्रीमती घिल्डियाल बोझिल कदमों के साथ मंच पर आई, क्षण भर रुककर उन्होंने कहा-''मैं आभारी हूँ-किस मुंह से धन्यवाद दूँ-आज तो यहाँ पूजा हो रही है, **'सर्वेन्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी'** का यह प्रांगण पूजा की थाली है, आप सभी समाज सेवी आगत बन्धु पुजारी है समाज सेवा ही जिनकी पूजा है, और फूल हैं वे जिन्हें आपने विकसित किया है, जन-जातियों के रूप में। मेरे बड़े भाई **श्री विराज जी** को देखकर याद आया... स्वामी विवेकानन्द जब शिकागो गये, वहाँ उनसे पूँछा गया कैसे है तुम्हारे कृष्ण? क्या वाकई गोपियाँ उनके पीछे-पीछे भागती थीं?... मुझे ऐसा लगता है श्री मिश्राजी उन्हीं के अंश बनकर आये हैं-इन्होंने हमें मंत्रमुग्ध कर दिया है सभी इन्हीं को ओर देख रहे हैं... मैं अब समारोह के समापन की बहुत ही भारी मन से घोषणा करती हूँ-इस आशा के साथ कि **ईश्वर हमें बार-बार मिलाये, हम आप बार-बार मिलें... धन्यवाद।**

अब रुंधी हुई आवाज से माइक पर आवाज आ रही थी- **''विदा! साथियों! अलविदा! शुभ रात्रि!''** माइक बन्द करके संचालक श्री विराजजी आगे बढ़े-संयोजक श्री श्याम मनोहर जी और आयोजक श्री प्रेम कृष्ण द्विवेदी तीनों लोग आलिंगन बद्ध थे-पता नहीं कबतक ऐसी स्थिति रही-लोग चले गये... आइये हम भी चलें...।

ब्रजबिहारी मिश्र 'विराज'
सम्पादक- गोखले स्मृति ग्रन्थ
डा0 रामजीत शुक्ल
सहसम्पादक- गोखले स्मृति ग्रन्थ

❋❋❋

शताब्दी समारोह

बायें से : श्री मधुसूदन साहू, श्री पी.सी. किसकू
श्री पी.पी. श्रीवास्तव, श्री बनवारी लाल गौड़,
श्रीमती धनेश्वरी घिल्डियाल, श्रीमती रेणुका अप्पादुराई,
श्री आर.के. बंसल, श्री नीलू चौधरी, श्री पी.के. द्विवेदी

दीप प्रज्जवलन

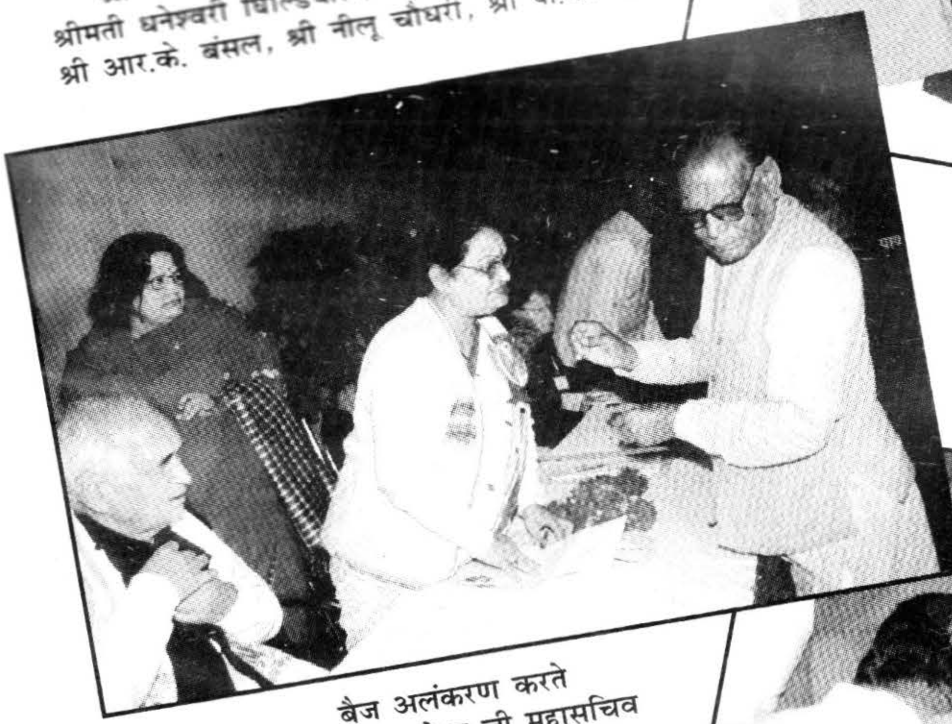

बैज अलंकरण करते
श्री श्याम मनोहर जी महासचिव
(भा.आ.जा.से. संघ)

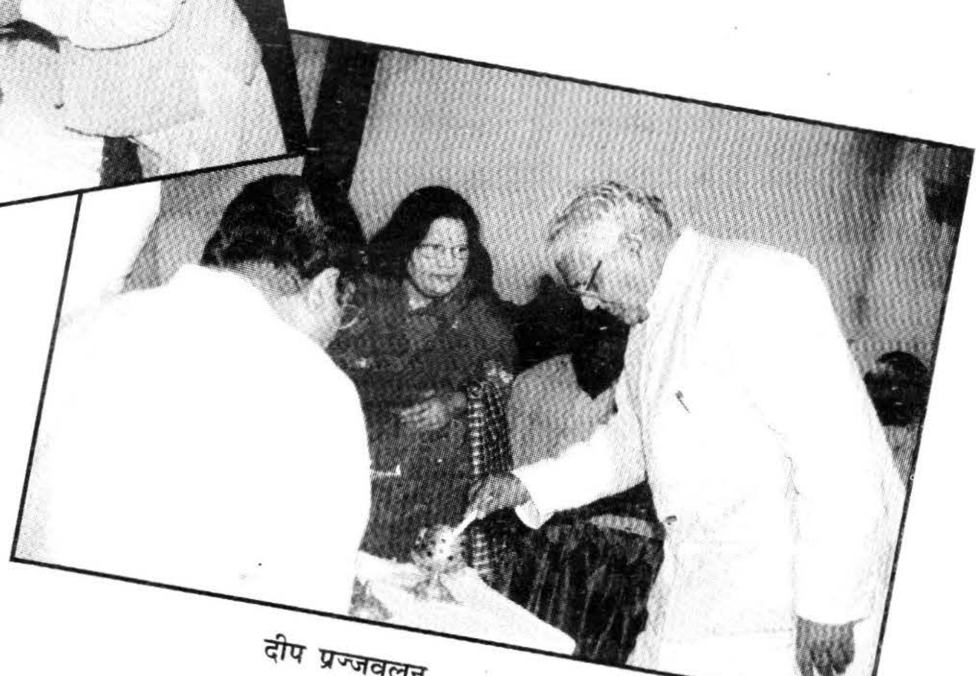

दीप प्रज्जवलन

गोखले स्मृति ग्रन्थ विमोचन

गोखले स्मृति ग्रन्थ सम्पादक मण्डल
के साथ समारोह संयोजक

गोखले स्मृति ग्रन्थ विमोचन

गोखले स्मृति ग्रन्थ विमोचन

ग्रन्थ विमोचन के पश्चात
सम्पादक श्री ब्रजबिहारी मिश्र 'विराज' द्वारा
सम्पादकीय वक्तव्य

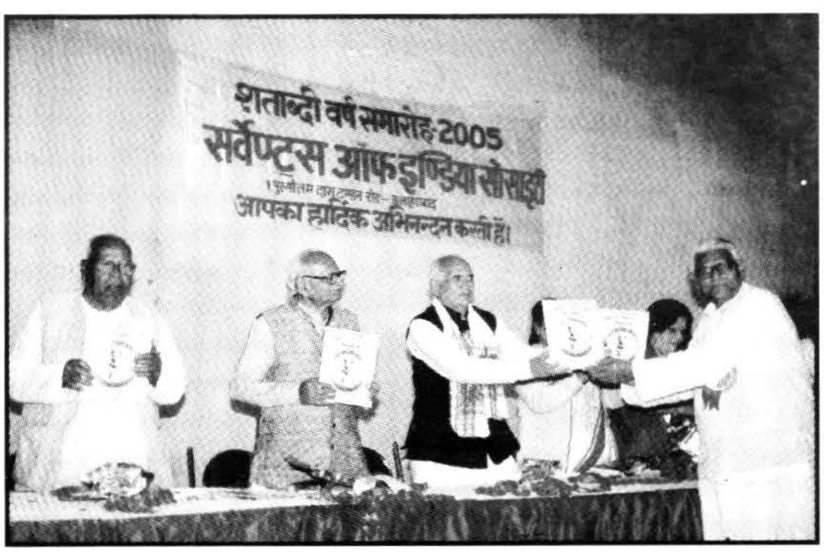

प्रदर्शनी मण्डप से

महारुद्राभिषेक करते सपत्नीक श्री पी.के. द्विवेदी
(उपाध्यक्ष एस.आई.एस.)

सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसायटी के सौ वर्ष
प्रदर्शनी उद्घाटन करते -
श्री पी.पी. श्रीवास्तव आई.ए.एस.,
श्रीमती धनेश्वरी घिल्डियाल
(चेयरमैन राज्य समाज कल्याण बोर्ड उत्तरांचल)

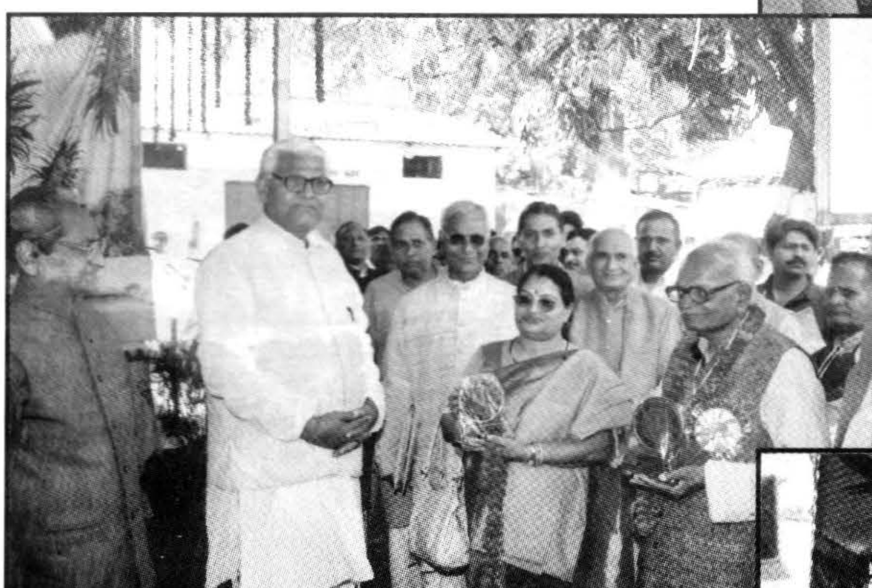

प्रदर्शनी अवलोकन करते श्रीमती घिल्डियाल,
श्री पी.पी. श्रीवास्तव, श्री बनवारी लाल गौड़,
श्री पी.के. द्विवेदी व अन्य

प्रदर्शनी मण्डप में

प्रदर्शनी मण्डप से

प्रदर्शनी मण्डप में

प्रदर्शनी अवलोकन करते

प्रदर्शनी मण्डप में अवलोकन

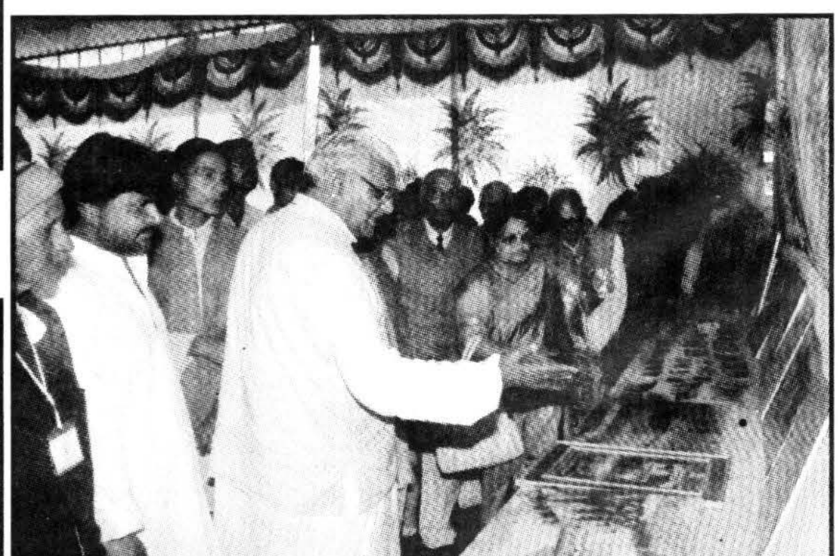

प्रदर्शनी अवलोकन

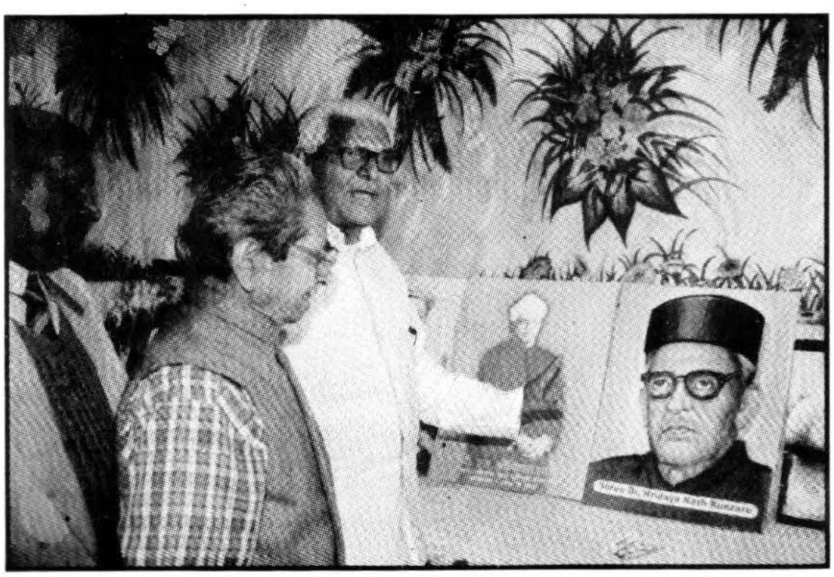

प्रदर्शनी मण्डप में

स्मृति चिन्ह उपहार सम्मान

श्री श्याम मनोहर जी द्वारा
श्रीमती धनेश्वरी घिल्डियाल (अध्यक्ष, राज्य समाज कल्याण बोर्ड उत्तरांचल) को

श्री श्याम मनोहर जी द्वारा
डा0 रामजीत शुक्ल (सम्बद्ध सदस्य-एस.आई.एस.) को

श्री नीलू चौधरी (राष्ट्रीय कोषाध्यक्ष, भा.आ.जा. से. संघ) द्वारा
श्रीमती शान्ती देवी को

श्री दामोदर साहू (वरिष्ठ सदस्य एस.आई.एस.) द्वारा
श्री हरिशंकर शुक्ल प्रधानाचार्य को

श्री पी.सी. किसकू उपाध्यक्ष (भा.आ.जा. से. संघ) द्वारा
श्री सुरेश मिश्र प्रधानाचार्य को

श्री श्याम मनोहर जी द्वारा
श्री आर. डी. सिंह को

रंगारंग सांस्कृतिक संध्या से

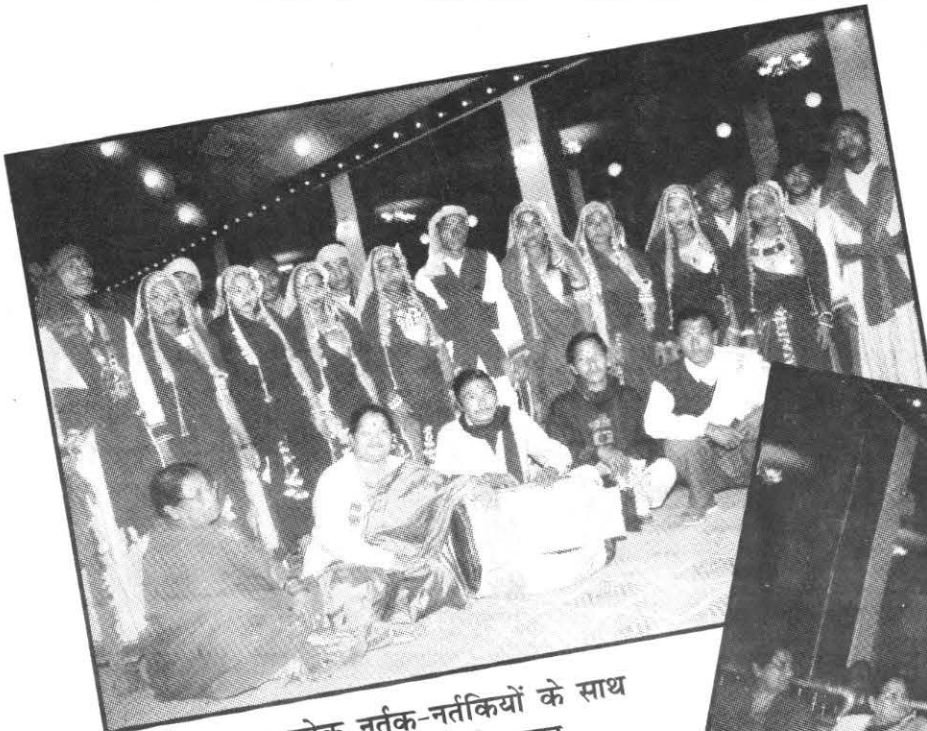

रानाथारू लोक नर्तक-नर्तकियों के साथ
श्रीमती धनेश्वरी घिल्डियाल
एवं
श्रीमती लक्ष्मी देवी द्विवेदी

करमा नृत्य रत
आदिवासी नर्तकियाँ

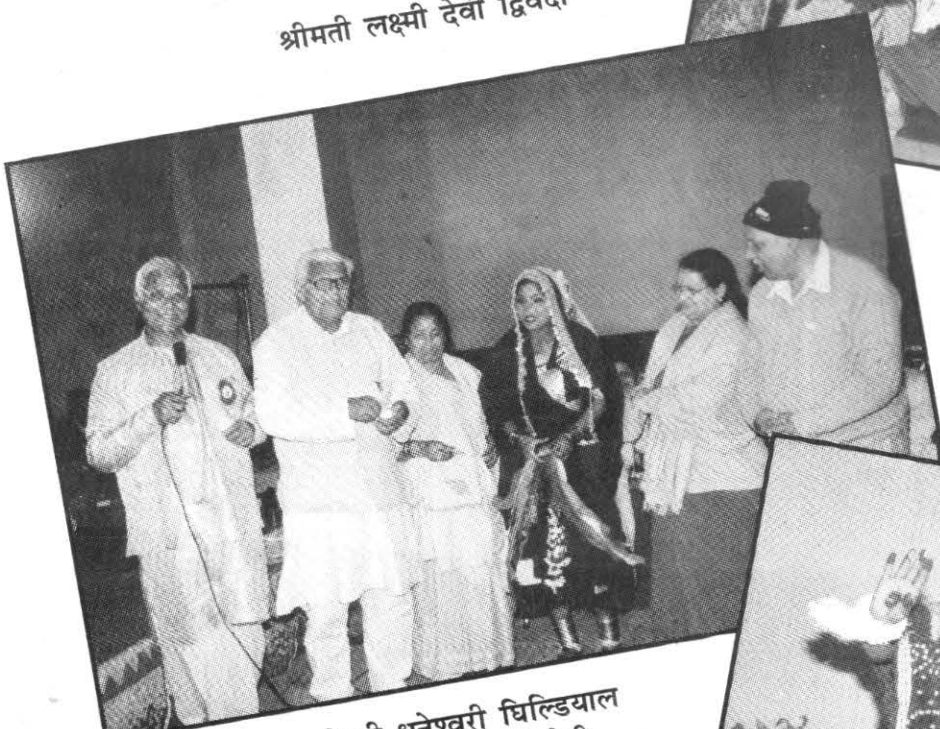

पति सहित श्रीमती धनेश्वरी घिल्डियाल
पत्नी सहित श्री प्रेम कृष्ण द्विवेदी
संचालक व्रजबिहारी मिश्र 'विराज' के साथ
राना थारू नर्तकी

कुंजरू जू. हा. स्कूल इलाहाबाद की छात्रा
सोनाली का बन्दना नृत्य

बजाज ने जो कहा, वह कर दिखाया

बजाज हिन्दुस्थान लिमिटेड

इकाई-किनौनी, जनपद-मेरठ

बजाज हिन्दुस्तान लिमिटेड, किनौनी

अपने सभी किसान भाइयों से अनुरोध है, कि अपने गन्ना क्षेत्रफल के 30 प्रतिशत भाग में, शीघ्र प्रजाति की बुवाई करें एवं अपेक्षा करते हैं कि किसान भाई इसी प्रकार मिल को अपना सहयोग सतत् देते रहेंगे।

(डा0 जी0 के0 गुप्ता)
वरिष्ठ महाप्रबन्धक

(आई0 डी0 मित्तल)
अधिशासी निदेशक

सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी की शत वर्षीय यात्रा पर हार्दिक बधायी

ग्राम विकास समिति

बंधवा, मेजारोड, इलाहाबाद

प्रदीप कुमार मिश्र
महामंत्री

अलंकरण सम्मान

सर्वेण्ट्स आफ इण्डिया सोसाइटी के
उपाध्यक्ष श्री वी.के. द्विवेदी
का
श्री श्याम मनोहर जी
(महासचिव भा.आ.जा.से. संघ) द्वारा

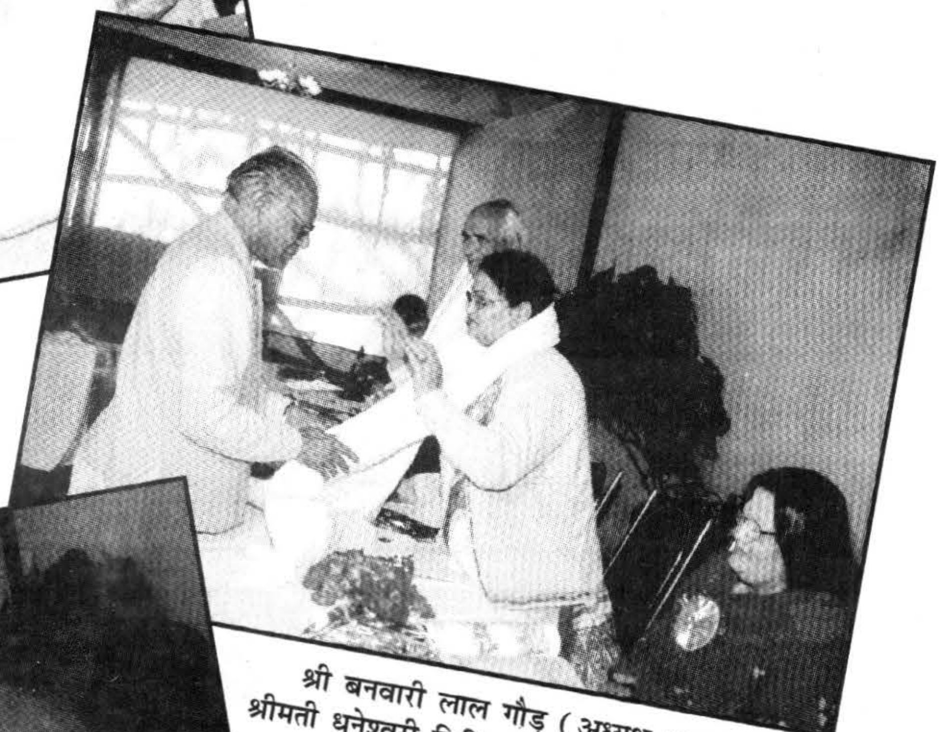

श्री बनवारी लाल गौड़ (अध्यक्ष भा.आ.जा.से. संघ)
श्रीमती धनेश्वरी घिल्डियाल (अध्यक्ष स.क. बोर्ड उत्तरांचल)
का
श्री श्याम मनोहर जी द्वारा

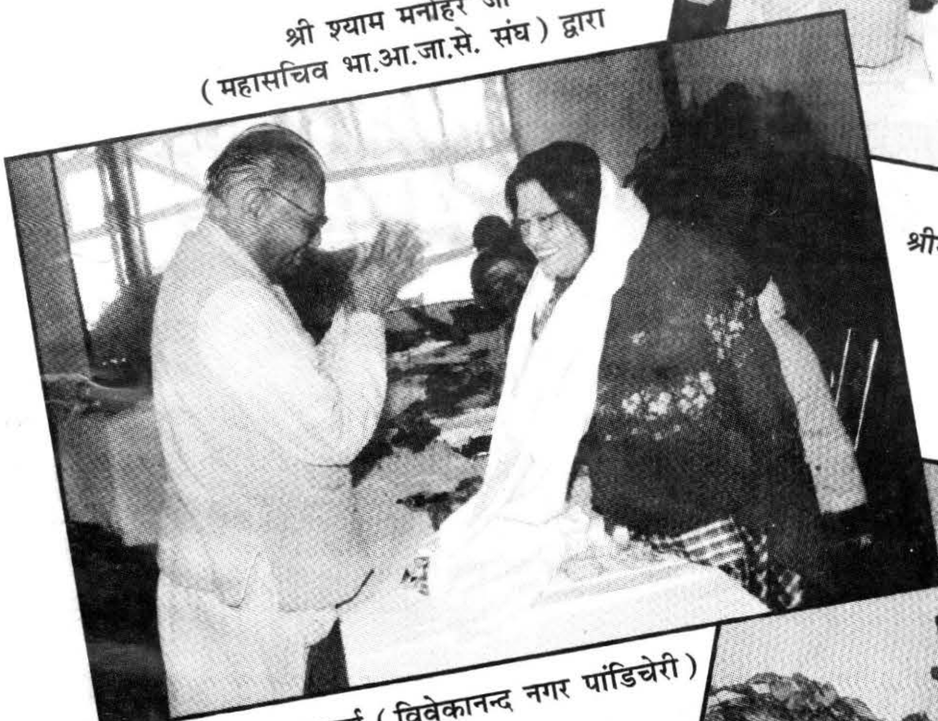

श्रीमती रेणुका अप्पादुराई (विवेकानन्द नगर पांडिचेरी)
का
श्री श्याम मनोहर जी द्वारा

ब्रज बिहारी मिश्र 'बिराज' (संचालक-शताब्दी समारोह)
का
श्री पी.के. द्विवेदी द्वारा

पी०के० द्विवेदी

सुधी पाठक वृन्द !

सादर बन्दे !

यह सच है कि हमारा अतीत गौरव शाली रहा है, वर्तमान को हम चिन्तन का दौर कह सकते हैं, किन्तु भविष्य ? कैसा नजर आता है? तिमिराच्छन्न ? या स्वर्णिम ?

सोचिये ! विचारिये ! यह तो देश का है–देश अपना है, अपनी 'माता' 'भारत–माता' का है।

विनय कथन है, समाज व राष्ट्र निर्माताओं से, नेतृत्व से, चिन्तकों से और सबसे अधिक भारत माता के 'ऊर्जा वान सपूतों' से –उठो ! मत दौड़ो मृग मरीचिका की ओर ! देखो ! सम्भालो अपनी 'भारत माता' को, इक्कीसवीं सदी के सुनहरे भारत को, अपने कल को...।

अपनी 'सौवीं वर्ष–गांठ' पर 'सर्वेन्ट्स ऑफ इण्डिया सोसाइटी', 'नूतन संकल्प', 'नूतन चिन्तन' और 'नूतन ऊर्जा' के साथ आह्वान करती है, आओ ! "चलो हम फिर से 'विश्व–वंद्य' भारत बनाये"।

'धन्यवाद'

भारत माता की जय !

शादी-विवाह, ऐटहोम,
मेला एवं प्रदर्शनी
के लिए खूबसूरत स्थान

जीवन साथी गेस्ट हाउस

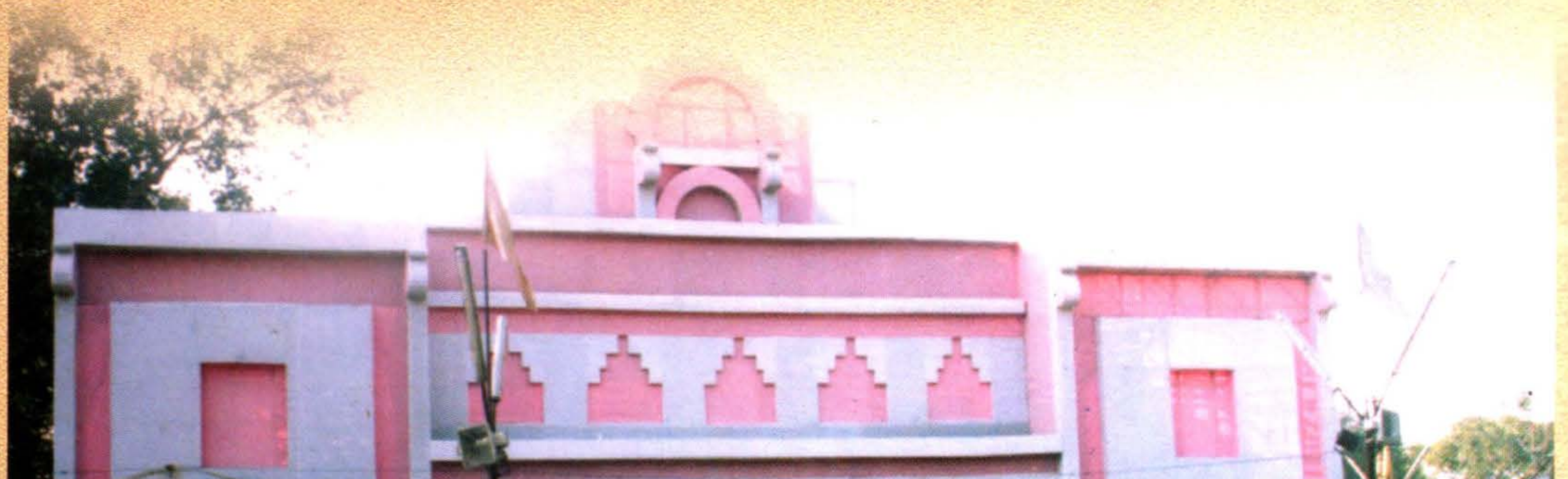

१, पी०डी० टण्डन रोड, म्योहाल चौराहा, राणा प्रताप चौराहा, इलाहाबाद

Mob. : 9415218159 (O) 2600346 (R) 2250909

Designed & printed at **PUSHPI OFFSET** Alld. Ph. 0532-2417897, 9415238424